

...मये राज्यं न स्वर्गं ना पुनर्भवम्। प्राणिनां दुःख तप्तानां कामये दुःखनाशनम्॥

अनुभूतयोगमाला

आयुर्वेदीय उच्च कोटि की मासिक पत्रिका

वर्ष ३१] जनवरी १९६१ [अङ्क १

जड़ी-बूटियों पर खोजपूर्ण, विशिष्ट विवेचन, अनुभव... युक्त सचित्र

वनस्पति विशेषांक

जहाँ अन्य चिकित्सा पद्धतियों की औषधियों द्वारा निष्फल होकर रोगी को हताश होना पड़ता है वहाँ आयुर्वेदीय वनस्पतियों द्वारा असंख्य प्राणि मात्र की रक्षा करना-यह वनस्पतियों का महत्व नहीं तो और क्या है ? स्मरण कीजिये उस समय को जब राम-रावण युद्ध काल में लक्ष्मण जी शक्ति के लगते ही अचेत पड़े थे, उस दारुण समय में भगवान रामचन्द्र की विकट परिस्थिति में एलोपैथिक, होम्योपैथिक इन्जेक्शन, मिक्श्चर आदि के बिना ही वैद्यराज सुषेण द्वारा संजीवनी बूटी के सुँघाने मात्र से लक्ष्मण को तत्क्षण सचेत करदेना जगद्विख्यात है, तो फिर कौन कहता है कि वनस्पतियों में कुछ भी महत्व नहीं है ?

वि० सं०—श्री ज्ञानेन्द्र पाण्डेय वैद्य, गुरुकुल स्नातक

प्र० सं०—वैद्यराज पं० विश्वेश्वरदयालु द्विवेदी

आयुर्वेदीय जगत की उच्चकोटि की मासिक पत्रिका

अनुभूत योगमाला

का, ३९ वें वर्ष के उपलक्ष में

"वनस्पति विशेषांक"

(जड़ी बूटियों पर खोजपूर्ण, विशिष्ट विवेचन, अनुभवपूर्ण तथ्ययुक्त सचित्र)

[जनवरी, १९६१]

शुभ सम्मति

मुझे यह जानकर प्रसन्नता है कि अनुभूत योगमाला के सम्पादक इस बर्ष वनस्पति बिशेषांक निकालने जारहे हैं। यह पत्रिका इस प्रदेश में गत ३८ वर्षो से आयुर्वेद जगत की सेवा करती आ रही है। समय-समय पर जो बिशेषांक इसके प्रकाशित हुये हैं। उनसे वैद्य समुदाय की ज्ञान बृद्धि एवं उनकी चिकित्सायों में साहयता मिली है उस विज्ञान की चकाचौंध में जब सारा देश पाश्चात्य चिकित्सकों की ओर दृष्टि लगाए हुए बैठा है उस समय यह बिशेषाक ऋषि प्रणीत सस्ती सुलभ जड़ी बूटियों की चिकित्सा प्रणाली के अदभुत चमत्कार को सभाल के सन्मुख प्रस्तुत कर आयुर्वेद विज्ञान की महानता की ओर देश वासियों का ध्यान आर्कषित करेगा।

—श्री धर्मदत्त वैद्य
सभासचिव, हरिबहन बिभाग, उत्तर प्रदेश-सरकार

के

विशेषांक सम्पादकः—श्री ज्ञानेन्द्र पाण्डेय वैद्य
(गुरुकुल के बनस्पति शास्त्र में बिशेष योग्यता प्राप्त स्नातक)
गुरुकुल कांगड़ी (हरिद्वार)



प्रधान सम्पादक, प्रकाशक एवं मुद्रकः—
आयुर्वेद म० म० पं० बिश्वेश्वरदयालु वैद्यराज
श्री हरिहर प्रेस, बरालोकपुर (इटावा)

मूल्य वार्षिक ५) | इस अङ्क का मूल्य २)

अपना परामर्श दीजिए !

महानुभाव,

आगामी वर्ष 'अनुभूत योगमाला' द्वारा एक अनोखे रूप में विशिष्ट वनस्पति वि
प्रकाशित करने का विचार है। इसमें इस १९६१ के 'वनस्पति अंक' की प्रतिपाद्य विषय स
परिशिष्टांश को भी किंचित् पूर्ण करना है और प्रमुखतया अब तक प्रकाशित सभी विशेषां
सुन्दर निकालना है।

इस अंक में असंदिग्ध किन्तु विशिष्ट सुलभ पर आश्चर्य जनक उपयोगी बूटियों
सूची में शामिल करना है। खोजपूर्ण विवरण वनस्पतियों के प्रस्तुत करने की योजना है। स
चित्र होंगे।

अब आपसे निवेदन है कि इस आगामी 'वनस्पति विशेषांक' की प्रतिपाद्य सूची
रूप रेखा—योजना पर अपने विचार भेजें कि कौन २सी बूटियों कोशामिल किया जावे ? विषय
किस प्रकार की हो ? साथ ही अंक को अधिकाधिक आकर्षक बनाने के लिए भी अपने वि
लिखें साथ में यह भी संकेत करें कि आप क्या सहयोग कर सकते हैं।

कृपया समस्त विचार २० मार्च, ६१ तक निम्न हस्ताक्षर कर्ता के पते पर अवश्य
भेज दीजिये। आपके परामर्शों का हम स्वागत करते हुये आपके विचारों को ध्यान में रखते
निर्णयात्मक योजना फरवरी के साधारण अंक में प्रकाशित हो जायेगी।

—ज्ञानेन्द्र पाण्डेय वैद्य

(सम्पादक-वनस्पति अंक)

कुरुकुल काँगड़ी, हरिद्व

विशेष सूचना

पोस्टमास्टर जनरल लखनऊ से अभी तक रजि० नं० A- 145 अनुभूत योगमाल
रिन्यू सन् १९६१ के लिये अभीतक नहीं मिला है। जब कि १–११–६० को तथा १५–१२–६
पत्र द्वारा तथा २९–१–६१ को रजिस्ट्री और ३१–१–६१ को तार द्वारा सूचना देने पर भी नहीं
है। इस मास प्रतीक्षा के बाद माला पैकिट रूप में ही भेजी जावेगी जिसमें करीब ५०)–६०) र
अधिक खर्चा माला को उठाना पड़ेगा यदि ऐसा ही रवैया रहा तो वर्ष भर इसी प्रकार करना प
यह है स्वतंत्र सरकार के जमाने की सुन्दर व्यवस्था।

मैनेजर:—

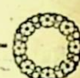
वनस्पति विशेषांक के सम्माननीय लेखक और उनकी कृतियाँ

इस अंक में पढ़िए

चित्र सूची

कतिपय शुभ संदेश



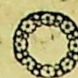


३६ वें वर्ष में प्रवेश

'मुझे यह जानकर बहुत हर्ष है कि आयुर्वेद पत्रिका 'अनुभूत योगमाला' ने अपने ३८ वर्ष आयुर्वेद जगत में विख्यात सेवा द्वारा पूर्णकर लिये हैं और ३६ वें वर्ष में पदार्पण कर रहीहै। मैं ईश्वर से प्रार्थना करता हूँ कि यह प्रसिद्ध पत्रिका निरन्तर पूर्ववत् आयुर्वेद की उन्नति एवं सेवा करती रहेगी।

— वैद्यरत्न पं० शिवशर्मा

भू०पू० अध्यक्ष-अ०भा० आयुर्वेद महासम्मेलन सीलोन सरकार की आयुर्वेद विकास योजना के भारतीय आयुर्वेदज्ञ,



वानस्पतिकज्ञानकीवृद्धिकेलियेतत्पर

'हमको जानकर अत्यन्त प्रसन्नता है कि आप वनस्पति विशेषांक निकालने को प्रस्तुत हैं। मुझे पूर्ण विश्वास है कि यह अंक हमारे देश में प्राप्त होने वाली जड़ी बूटियों के ज्ञान की वृद्धि करेगा।'

— डा० सी० द्वारकानाथ

केन्द्रीय आयुर्वेदीय परामर्श दाता—(एडवायजर–इण्डीजिनस सिस्टम्स आफ मेडीसन) स्वास्थ्य मन्त्रालय, भारतसरकार (नई दिल्ली) एवं सदस्य—आयुर्वेदिक पैनल कमेटी

वनस्पति ज्ञान के प्रति प्रेरक यह अङ्क

'यह जानकर बड़ा हर्ष हुआ कि आप 'अनुभूत योगमाला' का वनस्पति विशेषांक प्रकाशित करने जा रहे हैं। आपने बहुत उपयोगी और सामयिक विषय को लिया है। इधर वनस्पतियोंके विषय में हमारा ज्ञान बहुत सीमित अव्यवस्थित सा हो गया है। नवीन वनस्पतियों की खोज तो जैसे प्रवृत्ति ही नहीं रही है।

आप अपने विशेषांक द्वारा वैद्यसमाजको वनस्पतियों की ओर आकृष्ट करने में सफल होंगे। मेरी हार्दिक शुभकामनायें हैं।'

—वैद्य रामनारायण शर्मा

मैनेजिंग डायरेक्टर- श्री वैद्यनाथ आयुर्वेदभवन प्रा० लिमिटेड, झाँसी।

आयुर्वेद प्रसार में ठोस सफलता

'आप 'अनुभूत योगमाला' का वनस्पति विशेषांक प्रकाशित कर रहे हैं, यह जानकर प्रसन्नता हुई। इस दिशा में आप अधिक से अधिक ठोस सफलता प्राप्तकर आयुर्वेदके प्रसार में समर्थ सहयोग दे सकें यह हार्दिक कामना है

आप यह विशेषांक समृद्ध बना सकें—इस शुभ कामना के साथ।'

—ए० एन० नाम जोशी

सेक्रेटरी,
(कमेटी फार स्टेन्डर्ड आयुर्वेदिक हर्ब्स एण्डड्रग्स
आयुर्वेदिक रिसर्च बोर्ड बम्बई राज्य



...ex of *Drugs, discussed in this Herbalissue*

(According to action on Principle system)

सांस्थानिक प्रभावानुसार अनुक्रमणिका

...rvous System

1. Hydrocotyle Asiatica
2. Gartiola Moniera
3. Acours Calamus
4. Acorus Odoratus
5. Rauwolfia Serpentina
6. Aristolochia Iudica

...gestive System

7. Calotropis Gigantia
8. Calotropis Proeera
9. Holarrhena Antidysentarica
10. Wrightia Tinctora
11. Argemonus Mexicana
12. Embellia Glandulifera
13. Embellia Indica
14. Embellia Ribes
15. Embellia Robusta

...espiratory System

16. Ephedra Vulgaris
17. Ephedra Pachyclada
18. Viola Odorata
19. Viola Cinerea
20. Viola Serpens

...rdial urinary System

21. Boerhavia Diffusa
22. Boerhavia Erecta
23. Boerhavia Procumbeno
24. Boerhavia Repens

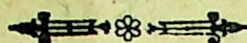
...emparature Group

25. Ocimum Sanctum
26. Ocimum Nirustam
27. Ocimum Tomentosum
28. Ocimum Virde

...pecial Systems (Rasayau)

29. Withania Somnifera
30. Rubia Cord Ifolia
31. Rubia Manjishta
32. Rubia Tinctoria
33. Rubia Secunda
34. Caparis Mooni

मुख्य कर्मानुसार विषयावली



अनुभूत योगमाला



सर्पगन्धा [पृष्ठ ४८ पर]



अनुभूत योगमाला



सोम कल्पवल्ली [पृष्ठ ३३ पर]

* श्रीधन्वन्तरयेनमः *



वर्ष ३९ } बरालोकपुर, ३० जनवरी सन् १९६१ { अङ्क १

वैद्यजनों के प्रति !

जड़ी-बूटियां प्रथम सृष्टि में ही चलि आईं।
जंगम सृष्टी पुनः इसीसे थी उपजाईं ॥
पालन पोषण स्वस्थ करण हित को चलि आई।
उद्योग और व्यवहार इन्हीं के बल पर भाई ॥
रस चूर्ण वटी अवलेह सुरस की विधि बतलाती।
स्वर्ण रजत की उपज जीवनी शक्ति दिखाती ॥
कायाकल्प महान इन्हीं की विधि से होती।
वनस्पती यह अङ्क फेरि सब ज्ञान कराती ॥
आयुर्वेद चिकित्सा का प्राण वनस्पति शास्त्र है।
वैद्य जनों को मान द्रव्य देने का अस्त्र है ॥

—सम्पादक

यह वनस्पति विश्व मंगल करे !

भगवतदयाल त्रिपाठी "शंकर"

विधि की विश्व बिभूति, कल्प हित कल्प लता सी।
धन्वन्तरि सर्वस्व शुभ्र कमला विमला सी॥
रोग ग्रसित की प्राण आयु बल शक्ति प्रकाशित।
मंगल सदन महान अमंगल मूल विनाशिनि॥

भूत भविष्यत वर्तमान इनमें चलते हैं।
सारे विरुध गुणागुणी इनसे पलते हैं॥
नित रहते हैं वह सुखी इन्हें जो अपनाते हैं।
जो इन्हें मानते हैं, वही गौरव यश पाते हैं॥

बन कर सभी गुणागुण गन मन हरती है।
वैद्यबर्ग के हृदय सदा बिचरा करती हैं॥
प्रेम पन्थ के पथिक झुकाकर शीस न लाती।
जो बिधि से बन सका न, वह करके दिखलाती॥

पारस बनता लौह, ताम्र सोना बन जाता।
अति कठोर बहवज्र, तुरत भस्महु हो जाता॥
वारिधार के अन्तर्गत हैं अंगार निकलते।
पाकर जिनका संग सभी नीरस रस बनते॥

निर्झर सरिता तीर पर्वतों की हरियाली।
बन की विमल विभूति बनी भव भूति निराली॥
झार खण्ड का स्वर्ण बनी तरु शीतल छाया।
भूत वर्ग के प्राण सुधा संजीवनि माया॥

रस है ब्रह्म महान् भेद श्रुति का वतलाती।
बल का कर संचार जीवनी ज्योति जगाती॥
रोगों का कर नाश पूर्ण निज वल दिखलाती।
सौख्यानन्द आरोग्य मोद उर अति पहुँचाती॥

रुग्ण कोष निर्दोष कर, चेतन द्युति प्रति दिन भरे।
यह बनस्थली की वनस्पति, अखिल विश्व मंगल करे॥

श्री धन्वन्तरयेनमः ।

सम्पादक की लेखनी से....................

नत्त्वहं कामये राज्यं न स्वर्गं ना पुनर्भवम् ।
कामये दुःख तप्तानां प्राणिनामार्ति नाशनम् ॥

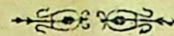
आयुर्वेद चिकित्सा प्रणाली का प्राण वनस्पति शास्त्र अपना महत्व ही नहीं विशेष सम्मानपूर्ण स्थान भी रखता है। इन प्राचीन चिकित्सकों को ही नहीं आधुनिक काल में हम भारतियों के भी लिये गौरवपूर्ण तथ्य भी है। क्यों कि आचार्य चरक ने भी लिखा है—

'यतश्चायुष्यान्यनायुष्याणि, च द्रव्य गुण कर्माणि--
वेदयत्यतोऽप्यायुर्वेदाः ।'

जनता सस्ती एवं सुलभ जड़ो-बूटियों से पर्याप्त लाभ उठाती हुई मँहगी चिकित्सा पद्धतियों से बचकर स्वास्थ्य लाभ करती है।

वनस्पति सम्बन्धी विषय को ही लेकर आयुर्वेदीय उच्चकोटि की मासिक पत्रिका अनुभूत योगमाला ने अपने जीवन के ३९ वें वर्ष प्रवेश के उपलक्ष में एक अमूल्य भेंट भारत के चिकित्सकों, आयुर्वेद प्रेमियों को देने का निश्चय किया था। सर्व प्रथम वनस्पति पर ही विचार कीजिये, जिससे अन्य प्रस्तुत सामिग्री को हृदयंगम करने में अधिक गहनता अनुभव हो।

वनस्पति



आयुर्वेद अनादि काल से चला आने वाला सर्वोत्तम चिकित्सा विज्ञान है। आयुर्वेद चिकित्सा शास्त्र में जड़ी बूटियों की चिकित्सा प्रधान है। अतः वनस्पति शास्त्र आयुर्वेद का अति महत्व पूर्ण विषय है।

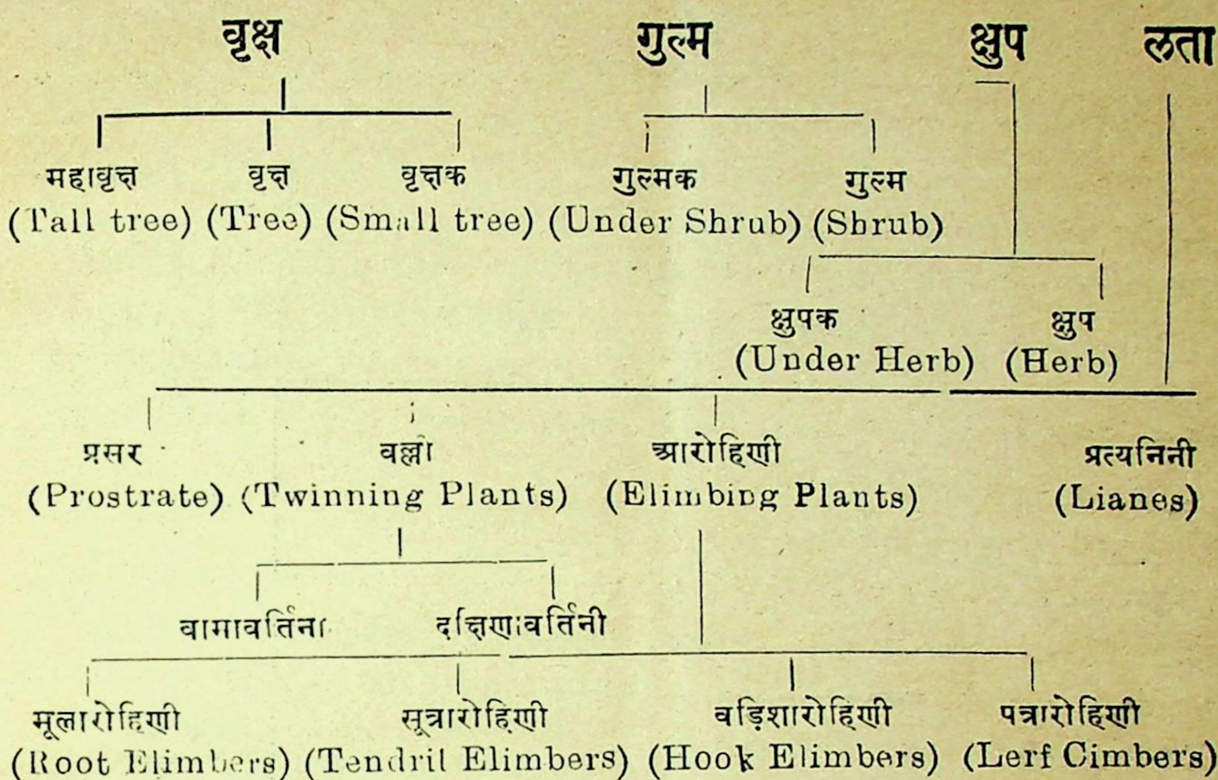
आयुर्वेद में द्रव्य का वर्गीकरण विचित्र प्रकारों से किया जाता है। योनिभेद से द्रव्य १ के (औषधद्रव्य के) निम्न तीन भेद होते हैं — औद्भिद (V·getable-Drugs), जान्तव ,(Animal-Drugs), पार्थिव (Mineral-Drugs), अवान्तर भेद से उद्भिज्ज द्रव्यों के निम्न भेद हो जाते हैं २ :—वनस्पति वानस्पत्य, वीरुध एवं औषधि। जरा उद्भिज्ज' शब्द पर भी विचार करिये। 'उद्भिनत्ति भुवम्' इति उद्भित् उद्भिदं च, 'उद्भेदनमुद्भित, ततो जायते, इति उद्भिज्जम (क्षीर स्वामी व्याख्या)। वैदिक साहित्य में उद्भिज्जों (वृक्ष, गुल्म, क्षुप, लता आदि) के लिये 'ओषधि' शब्द का व्यवहार पाया गया है) शार्ङ्गधराचार्य ने 'पादप' शब्द व्यवहार किया है। उद्भिज्ज साशन Organic वर्ग के हैं। जो कि अन्तःसज्ञ हैं।

जिनमें पुष्प व फल सूक्ष्म कर्णिका के द्वारा आवृत्त होने के कारण दिखाते नहीं, ऐसे अदृश्य पुष्प उद्भिज्जों को ही वनस्पति कहा जाता है। डल्हण, चक्रपाणि आदि पुरातन टीकाकारों ने 'अपुष्पा फलवन्तो वनस्पतयः, कहा है। जैसे अश्वत्थ। आयुर्वेद के अतिरिक्त शब्दार्थ चिन्तामणि, शब्द स्तोममहानिधि, वाचस्पत्य बृहद्भिधान आदि में अश्वत्थ का गुह्य पुष्प पर्याय भी मिलता है। इसमें बट, उदुम्बर भी उदाहरण हैं। जिनमें पुष्प तथा फल दोनों स्पष्ट रूप से दिखाते हैं, उनको वृक्ष कहा जाता है। और वानस्पत्य इसका पर्याय है। उदाहरण-निम्ब, आम्र, बिभीतक हैं।

फल पकने पर जिनका अन्त हो जाता है उसे औषधि कहा जाता है। जैसे—गोधूम! जिनकी लताए फैलती हैं और जो गुल्माकार होते हैं वे वीरुध कहलाते हैं, जैसे गुडूची, करवीर।

औद्भिद द्रव्यों के आधुनिक रचनात्मक वर्गीकरण (Morpho logical classfication) की ओर भी जरा दृष्टि डालिए। (क) उद्भव भेद से औद्भिद द्रव्य चार प्रकार के हैं:-स्थलज (Terrestrial), जलज (Aquatei), वृक्षरुह (Epiphytie) एवं वृक्षादन, (Parasitie), (ख) आयु भेद से औद्भिद द्रव्य तीन प्रकार के हैं:-वर्षायु (Annuals) द्विवर्षायु (Biennials) एवं बहुवर्षायु (Perennials)। (ग) आकृति भेद से भी देखिएगा:—

१-तत् पुनस्त्रिविधं प्रोक्तं जङ्गमौद्भिदपार्थिवम्।
२-औद्भिदं तु चतुर्विधम्।
वनस्पतिस्तथा वीरुद्वानस्पत्यस्तथौषधिः॥
फलैर्वनस्पतिः पुष्पैर्वानस्पत्य फलैरपि।
ओषध्यः फलपाकान्ताः प्रतानैर्वीरुधः स्मृताः॥
(च० सू० अ० १)



(घ) आजकल कुल भेद से Natural-Similarity वनस्पतियों का वर्गीकरण खूब प्रचलित है। इस कुलगत (Genaeological) वर्गीकरण में जातियां एवं उपजातियां हैं। ये वर्ग लगभग ११० हैं। जिनके अलग २ वर्ग लक्षण हैं। सबके नाम देना यहां स्थानाभाव से असंभव है इन वर्गों में लगभग ३०० वनस्पतियां चिकित्सोपयोगी आ जाती हैं।

प्राचीन चिकित्सा शास्त्र के नेता गणों आचार्य चरक एवं सुश्रुत ने वनस्पतियों का कर्मात्मक वर्गीकरण कर हमारे सम्मुख उपस्थित किया हैं। चरक संहिता सूत्र स्थानके चतुर्थाध्याय में ५० वर्ग एवं अन्यत्र अध्यायों में लगभग ४४ वर्ग प्रस्तुत किये हैं। आचार्य सुश्रुत ने ३७ वर्ग वनाए हैं। चरक संहिता म आहार द्रव्यों के १२ वर्ग वनाऐ हैं। सुश्रुत संहिता में इन ३७ वर्गों के भेद हैं।

ओषधार्थ प्रयुक्त वनस्पतियों के अंग

वनस्पतियों के औषधियों में प्रयोग करने के लिये यह ज्ञान होना आवश्यक है कि उद्भिज सृष्टि के कौन से अंग औषध में प्रयुक्त किए जा सकते हैं।

आयुर्वेदाचार्य चरक ने लिखा है कि कौन २ से अंग वृक्षादिकों के हम औषधियों में प्रयोग कर सकते हैं १। अब जरा उनको स्पष्टतया देखिये—

नाम	पर्याय	भेद या परिचय	उदाहरण
१–मूल	Normal roots, Fibrous एवं Aerial Roots	शिफा, जटा, अवरोह	शतावरी
२–त्वक्	Scale	त्वचा, छाल	निम्बत्वक्
३–सार	मट	मध्य का काष्ट	सरल
४–निर्यास	Gum		गन्धवेष्टक
५–नाल	Fistular	पोली लम्बी डन्डी, लम्बाकांड	कमल एरण्डनाल
६–स्वरस	Expressed-Juice	स्वयं निकलाहुआ, निकालाहुआ।	निम्बमद, ब्राह्मी
७–पल्लव		कोपल, किसलय	आम की कोंपल
८–क्षार	Rase	राखकोजलमें डालकरनिर्मित	चिंचा क्षार
९–क्षीर		वनस्पतियों से उद्भूत	अर्क दुग्ध
१०–फल	Simple, composite एवं Aggregate फल	एकाकी सामूहिकवसंयुक्तफल	नारिकेल कमल तूत
११-पुष्प	Bud, Flower	कलिका, मुकुल एवं फुल्ल	तरुणी
१२–भस्म		राख	प्रत्येक,उदाहरणहैं
१३–कण्टक	Thorns	विभिन्न प्रकार के हैं	गोक्षुर
१४–तैल	Oil	स्थिर, उड़न शील	बाताद तैल
१५–पत्र	Cotyledons, Foliage Scale stupiles, Bracts Sporophylls,	बीजपत्र वास्तवपर्ण, बल्कपत्र उपपत्र, पुष्पच्छद पत्र सबीजक पत्र	अनेकों हैं।
१६–शुङ्ग	Terminal-Buds	शाखाग्रभागोद्भूतअक्षिपर्णकली	वट शुङ्ग
१७–कन्द	Conical, Fusifarm, Napiform, Tuber	शंकवाकार मूलकाकार शलजमाकार, टयूबर या बल्ब	विदारींकन्द गर्जर, आलुक
१८–प्ररोह	Node, Interuode	अंकुर, पर्व	यवांकुर

१–उद्भिज्जेभ्यः औषधार्थ मुपयुज्य मानान्यङ्गानि। मूल-त्वक् सार निर्यास नाल स्वरस पल्लवाः॥
क्षाराः क्षीरं फलं पुष्पं भस्म तैलानि कण्टकाः। पत्राणि शुङ्गाः कन्दाश्च प्ररोहाश्चौद्भिदोगणः॥

(च० सू० अ० १,

नाम	पर्याय	भेद या परिचय	उदाहरण
१६–काण्ड	सबटेरेनियन एवं एरियल स्टेम	वायवीय, भौमिक	सामान्य सभी, आलुक
२०–बीज	Augio–Spermous Gymnospermous	आवृत्त, नग्न बीज	कलाय, विडग
२१–केसर	Stamens	पुंकेसर, स्त्रीकेशर	कमल केसर
२२–मज्जा	Endocarp	फलान्तर्गत मग्ज	बातादि मज्जा

इस प्रकार प्रत्येक चिकित्सक को जड़ी-बूटियों सम्बन्धी इन प्रकरणों पर अच्छा अधिकार होना चाहिये। प्राचीन प्रणाली के वैद्य बनने के लिये वनस्पति सम्बन्धी पूर्णतः ज्ञान की आवश्यकता है। यहाँ वनस्पति शास्त्र का आधारभूत प्रकरण संकेत मात्र दिया जा चुका है। विस्तृत बिवेचन प्रतिपाद्य बिषय नहीं दिया गया है।

निघण्टु ज्ञान

आप वैद्य हैं अथवा चिकित्सक बनने जा रहे हैं तो घिण्टु ज्ञान आपके लिये अनिवार्य होने के साथ महत्वपूर्ण भी है। आपने पढ़ा या सुना ही होगा—

निघण्टुना बिना वैद्यो बिद्वान् व्याकरणं बिना
अनभ्यासेन धानुष्कस्त्रयो हासस्य भाजनम् ॥

अतः वनस्पति शास्त्र का ज्ञान एवं प्रेम एक चिकित्सक के लिये आवश्यक एवं लाभप्रद हो जाता है। द्रव्यों के नाम, रूप, गुण कर्म, संयोग आदि का ज्ञान सम्यक् तया हो जाने पर ही उसे हम योगवित् अथवा भिषक् कह सकते हैं। वनस्पतियों के अज्ञाता अथवा उनके प्रति अविश्वासी चिकित्सको को कदापि आदर्श नही माना जा सकता।

आप जानते ही हैं अपना यह देश–हिन्दुस्तान वनस्पति प्रधान राष्ट्र है। अन्य देशबासियों की अपेक्षा हम भारतीयों का वनस्पति ज्ञान उच्च है। १ हमारे स्वनाम धन्य कबीन्द्र रवीन्द्रनाथ ठाकुर का भीं मन्तव्य है कि भारतीय संस्कृति का उद्भव एवं बिकास वृक्ष प्रचुर वनों में ही हुआ है। और यह भी मैं सत्य मानता हूँ कि बनस्पति रूप का ज्ञान का, उसका औषध रूप में उपयोग करने की सर्व प्रथम प्रेरणा भी वैदिक ऋषियों को ही हुइ थी। वैद्य को वनस्पतियों का ज्ञान करना है तो उनका प्रत्यक्षीकरण

१—It is Greatly to the credit of the People of India That they were acqua inted with alarger Number of the medicinal Plants Than the natncs of any Other Country on the Face of the earth.
(इन्डीयन मेडीसनल प्लान्ट्स की प्रस्तावना में)

करना चाहिये। आजकल कमरों में बैठकर निन्घटु ग्रन्थ तैयार हो जाते हैं। ग्रन्थों के अध्ययन या लेखन मात्र से बनस्पति विशारद होना असंभव है। आचार्य चरक का भी मन्तव्य है, इनका अभिज्ञान करना हो तो वैद्य को वन के ग्वालों, चरवाओं एवं आदि वासियों के सान्निध्य में आना चाहिये।

शनैः शनैः संस्कृति का प्रभाव जंगलों से नगरों की ओर आता जा रहा है, त्यों त्यों वनस्पति ज्ञान से जनता अनभिज्ञ सी होती जा रही है। परन्तु फिर भी ग्रामों में ग्रामीण गृहणियां व पुरुष जड़ी बूटी द्वारा चिकित्सा अब भी कर लिया करते हैं। नगरों में यह प्रवृत्ति न्यून है।

चरक सुश्रुत आदि आयुर्वेद के प्राचीन आचार्यो ने भेषज द्रव्यों का नाम रूपात्मक बिबरण हमारे सम्मुख प्रस्तुत नही किया है। इसी से हमको इन गुरुओं के द्वारा बनेचरों से सम्पर्क स्थापित करने की आज्ञां मिली। प्राचीन शिक्षण शैली के अभाव होने लग जाने पर नागरिक वैभव बिलास की प्रचुरता आ जाने से शोध आदि कार्यो को ठेस पहुची ही। फिर वनस्पति शास्त्र की अवनति होनी कोई अस्वाभाविक नहीं बर्तमान सरकार से हमको अनेक आशायें हैं। विश्वास भी है कि शीघ्र ही बनस्पति विज्ञान की उन्नति एवं बिकास बिस्तार करती चली जायेगी।

हमारा यह वनस्पति विशेषांक !

चिकित्सा क्षेत्र आयुर्वेद सेवा में ३८ वर्ष से संलग्न 'अनुभूत योगमाला' ने अपने जीवन काल में आयुर्वेद का झण्डा खड़ा रखने में योग दिया है, वह किसी से छिपा नहीं। पत्रिका का काल आगे बढ़ता गया और आज ३९ वें वर्ष में पदार्पण करतीहुई एक अमूल्य निशानी 'बनस्पति विशेषांक' अपने प्रेमियों के हाथों में छोड़ रही है

'माला' के प्रकाशक एवं प्रधान सम्पादक— बैद्यराज श्री पं० विश्वेश्वरदयालु जी द्विवेदी ने अपने जीवन-काल में कितनी अधिक आयुर्वेद सेवा की है—यह सर्व विदित है। प्रकाशन, लेखन, सम्पादन, समाज-सेवा, सफल चिकित्सा आदि महत्वपूर्ण कार्य परिस्थितियों की प्रतिकूलता उपस्थित रहने पर भी सम्पन्न किये हैं। हम श्रद्धेय श्री वैद्यराज जी की मंगल कामना करते हैं।

'माला' के सदैव से विशेषांक निकलते रहे हैं जिनकी उपयोगिता किसी पाठक से छिपी नहीं १९६१ में आदरणीय सम्पादक महोदय ने जो बनस्पति विशेपांक के सम्पादन का भार मुझे सौंपा, अनेकों प्रतिकूल परिस्थितियों समयाभाव आदि रहते हुये भी मैंने यथा शक्ति निर्वाह का प्रयत्नमात्र किया है। इस वनश्पति अंक की प्रतिपाद्य सूची में आयुर्वेद की मुख्य २ तीस बनस्पतियों का चुनाब किया गया। आप जानते ही हैं 'माला' आर्थिक दृष्टि से दुर्बलस्थिति में है इतनी वनस्पतियों पर विस्तार पूर्वक विचार करने के लिये वर्तमान विशेषांक की पृष्ठ संख्या

तिगुनी-चौगुनी बढ़ानी आवश्यक थी। पर ऐसा संभव होना कठिन है। फिरभी हमने तो यही प्रयत्न किया कि इन पृष्ठों से ही सम्पूर्ण विषय सूची का प्रतिपादन हो सके। वनस्पतियां यद्यपि सामान्य सी हैं, कुछ विशिष्ट भी। इनके परिचयात्मक बिवाद के पचड़े में पड़ने से पृष्ठों को यथासम्भव बचाया गया है। सूची में से १४ वनस्पतियों के ऊपर संक्षेप में चिकित्सोपयोगी खोजपूर्ण, बिशिष्ट अनुभव और शास्त्रीय विश्लेषण से युक्त नवीन एवं मौलिक प्रकाश डाल गया है। प्रतिपाद्य बूटियों के विवेचन के अतिरिक्त एक-दो लेख वनस्पति ज्ञान से सम्बन्धित और वैद्यों के लिये अत्यावश्यक प्रतीत हुये – विशेषांक की शोभावश प्रकाशित करना पड़ा। इस सम्पूर्ण प्रस्तुत सामिग्री का अध्ययन कर हमारे पाठक अवश्य ही लाभान्वित होंगे, यही आशा है।

अन्त में—

मैं अपने सम्माननीय लेखकों को धन्यवाद दिये बिना नहीं रह सकता। मेरे विशेष निवेदन पर विकट परिस्थितियों एवं समयाभाव, व्यस्तता रहते हुये भी उपयोगी लेखों को भेंटकर हमें ही नहीं, आयुर्वेद जगत के लाभान्बित होने वाले सम्पूर्ण वैद्य बन्धुओं को कृतार्थ किया है। अपने लेख रत्नों को 'माला' में पिरोकर ये शोभायमान हार भगवान धन्वन्तरि को अपित करने को प्रस्तुत किया है। हम अपने आयुर्वेद के उद्भट विद्वान इन लेखकों का हम हृदय से धन्यबाद करते हुए, मैं आशा करता हूँ कि भविष्य में भी हमारा सहयोग करते हुये कृतार्थ करेंगे। जिन मान्यवर लेखकों के लेख अप्रकाशित रह गये हैं वे हमें क्षमा करें और स्थानाभाव को ही इस कार्य में कारण समझते हुये अपनी कृति को कम महत्वपूर्ण समझें।

हम भारत के उन गणमान्य नेताओं, विद्वानों, संचालकों के प्रति भी हृदय से कृतज्ञ हैं, जिन्होंने इस विशेषांक के सम्बन्ध में अपने शुभ सन्देश, कामनायें, प्रस्तुत करते हुये हमारा उत्साह वर्द्धन किया।

अपने बिशेष सहयोगी महानुभावों के प्रति मेरा हृदय कृतज्ञ है। हमको जिन्होंने किंचिन्मात्र भी सहयोग प्रदान किया है, उन सम्पूर्ण मान्यवरों का हम हार्दिक आभार प्रकट करते हैं। इस बनस्पति विशेषांक के अधिकांश चित्र भारतीयों वनस्पति अनुसन्धान एवं विकाश केन्द्र (Indian Aerbtl Deuelopment and research cettre) गुरुकुल काँगड़ी, हरिद्वार द्वारा प्राप्त हुए हैं। इस केन्द्र द्वारा जड़ी बूटियों के स्पेशमिन्स (फलक), चित्र,खोजपूर्ण सामग्री एवं वनस्पति द्रव्य उपलब्ध करते हुये आयुर्वेद सेवा की जाती है। सचित्र आयुर्वेद कलकत्ता ने रुदन्ती, सत्यानाशी ब्लाक देकर माला को सुन्दर बनाने में सहायता दी है इसके लिये माला धन्यवाद करती है। माला के लिये इन दुर्लभ-चित्रों की भेंट के लिये धन्यवाद।

हम आभारी हैं

मैं इन आदरणीय एवं श्रद्धेय बिशिष्ट बिद्वानों का हृदय से अत्यन्त कृतज्ञ एवं आजीवन ऋणी हूँ जिन्होंने हमारा सदैव मार्ग प्रदर्शन एवं पूर्ण सहयोग किया है। इन अपने बिषयों के गणमान्य अधिकारी मर्मज्ञोंमें आचार्य

श्री निरंजनदेव जी शास्त्री आयुर्वेदालंकार प्रिंसि-पल–आयुर्वेदिक कालिज (गुरुकुल काँगड़ा), कविराज श्री रामनाथ जी शास्त्री वैद्य, आयुर्वेदाचार्य, आयुर्वेद वाचस्पति, एम० एस० सी० (पी) प्रोफेसर गुरुकुल काँगड़ी विश्वविद्यालय (हरिद्वार), श्रीमान् पं० नन्दकिशोर जी शास्त्री साहित्याचार्य, वेदान्ताचार्य एम० ए० मुख्याधिष्ठाता (गवर्नर) गुरुकुल महाविद्यालय ज्वालापुर (सहारनपुर) एवं आयुर्वेदाचार्य श्री पं० श्री दयालु जी मिश्रा, एम०ए० (द्वितय) साहित्यरत्न, प्रधानाध्यापक गुरुकुल काँगड़ी आचार्य श्री विश्वनाथ द्विवेदी बी० ए० आयुर्वेद शास्त्राचार्य जामनगर का स्थान प्रमुख है। आप महानुभावों से भविष्य में यही आशा है कि सदैव हम परस्नेह एवं कृपा बनाये रखेंगे । बस यही कामना है।

बस यही कामना है

यह वनस्पति अंक जैसा भी प्रतिपादित हुआ आप पाठक वृन्दों के हाथ में है। इसमें जो त्रुटि रह गयी हो उसके लिये हमें सूचित करें । शेष अप्रतिपादित वनस्पतियों पर शीघ्र ही मैं अंक निकालूगा। एसी हम पूर्ण आशा है। अन्त में हम पाठकों से माला' के सहयोग एवं आयुर्वेद सेवा के लिये पुनः आवाहन करते हैं। आयुर्वेद के इस संकट काल में भगवान धन्वन्तरि हमको सद्बुद्धि प्रदान करते हुये राष्ट्र की प्रमुख चिकित्सा प्रणाली पद पर आयुर्वेद को स्थित कराने में पूर्ण सफल बनावे । बस मेरी यही कामना है। आयुर्वेद स्नातकों को गंभीरता पूर्वक विचार करके प्राचीन चिकित्सा विज्ञान के मूलाधार को अपनाते हुये अन्य विज्ञानों की उपयो[illegible] बातों को आत्मसात् करना चाहिये । यह क्र[illegible] अवरुद्ध नही होना चाहिये । समन्वयात्म[illegible] शिक्षण से जितना लाभ होना चाहिये उत[illegible] हानि हो रही है, यह विचार अतिशयोक्ति पू[illegible] नही कहा जा सकता। इसमें पर्याप्त सत्यता है[illegible] इस कार्य क्रम से अपने को वैद्य कहलाने [illegible] संकोच अनुभव करने वाले डाक्टरों' का अधि[illegible] जन्म हो गया. जितना कि कम आयुर्वेद वि[illegible] षज्ञों का। यद्यपि अब पर्याप्त सुधार के निरन्त[illegible] प्रयत्न हो रहे हैं। माननीय मुख्यमन्त्री उ० [illegible] श्री डा० सम्पूर्णानन्द जी इस विशिष्ट प्रवाह [illegible] सूत्रपातकर्त्ताओं में उल्लेखनीय है। हम पु[illegible] आपसे एवं अन्य कर्णधारों, अधिकारियों [illegible] विनम्र प्रार्थना करते हैं कि आयुर्वेद का विका[illegible] प्राचीन सिद्धातों के बल पर ही संभव है, एलो[illegible] पेथी को थोप देने से नही । आयुर्वेदीय पैन[illegible] कमेटी से भी यही मेरा निवेदन है।

उप संहार—आयुर्वेद मानव को सम[illegible] स्वास्थ्य सम्बन्धी समस्याओं का उपयुक्त ह[illegible] है, फिर भारत के लिये तो और भी अत्यधि[illegible] श्रेष्ठ। भारतीय वनस्पतियों से जनता [illegible] कितना सर्व अधिक लाभ है । यह अवर्ण[illegible] है। और कालत्रय सत्य भी। चिकित्सक स[illegible] दाय को वनस्पति शास्त्र जैसे प्रधानविषय [illegible] पण्डित बनते हुये नवीन विकास करना चाहि[illegible] इस विकासात्मक क्षेत्र में यह वनस्पति अ[illegible] कितना प्रेरक एवं सहयोगी है । इसका नि[illegible] आप पर छोड़ते हुये आयूर्वेद उन्नति की काम[illegible] करता हूँ।

ज्ञानेन्द्र पाण्डेय सम्पादक—वनस्पति विशेष[illegible]
गुरुकुल काँगड़ी, हरि[illegible]

रुदन्ती (कैपेरिस सुनाई)

आचार्य श्री विश्वनाथ जी द्विवेदी, बी० ए०, आयुर्वेदशास्त्राचार्य, जामनगर

इन दिनों 'रुदन्ती' नामक औषधि के संबन्ध में विभिन्न स्थानों में पर्याप्त चर्चा सुनाई दे रही है और ऐसा कहा जाता है कि रुदन्ती क्षय रोग की महौषधि है। इसके सेवन से फेफड़ों के भीतर के व्रण भर जा हैं और एक्स-रे लेने पर उन व्रणों के चिह्न भी दिखाई नहीं देते। अत एव इसका परिचय प्रस्तुत करना अत्यावश्यक है।

पिछले कुछ दिनों से अंग्रेजी पत्रों में इसके सम्बन्ध में पर्याप्त चर्चा हुई है और लोगों का ध्यान इसकी ओर आकृष्ट हुआ है। विशेषतया बम्बई के डा० कृष्णमूर्ति ने जब से रुदन्ती विषयक अपने अनुभव पत्रों में प्रकाशित किये हैं तब से अन्वेषकों की रुचि इस दिशा में और बढ़ती गई है और इस सम्बन्ध में विगत पांच वर्षों से अन्वेषण जारी है।

नाम करण— यहऔषधि शास्त्रीय रुदन्ती नहीं है। इसका नाम भी कल्पित है और केवल आकर्षण के लिये ही दिया गया है। इसका प्रचार पश्चिमी घाट, कोंकण और दक्षिण कनाडा में दीर्घकाल से है। केरल तथा कनाडा के वैद्य इसे रुदन्ती नहीं कहते। कनाड़ी भाषा में इसे 'लूथीकाई' कहते हैं। इसका दूसरा नाम 'छोटी-काई' या 'छूटी-काई' भी है। कोंकण में इसको "मरगादूघट" कहते हैं। यह बहां के बाजारों में बिका करती है। इसका शास्त्रीय नाम ज्ञात नहीं है। निघन्टुओं में इसका 'तुबरक' भेद मात्र कहा है। पूरा विवरण प्राप्त नहीं होता आधुनिक वनस्पति-विज्ञान की पुस्तकों जैसे—'इण्डियन मेडिसिनल प्लान्ट्स आफ इण्डिया' में भी इसका उल्लेख नहीं है। डीमक, नादकर्णी आदि के निघण्टुओं में भी इसका नामोल्लेख नहीं मिलता। यह नाम डा० कृष्णमूर्ति ने, ज्ञात होता है स्वयं दिया है। क्यों दिया है इसका उन्होंने पत्र व्यवहार करने पर उत्तर देने का कष्ट उठाना भी उचित नहीं समझा। अतएव इसकी जानकारी के लिये विभिन्न स्थानों से साहित्य संग्रह करना पड़ा। ऐसा ज्ञात होता है कि क्षय में रुद्रवन्ती का अधिकाधिक प्रयोग होने से ही वे इस ओर अधिक आकर्षित हुये होंगे और कल्पित नाम रख लिया होगा।

पाकिस्तान के डा० एस० मेंहदीहसन पी० एच० डी० सदस्य कौंसिल ऑफ रिसर्च ऑफ बायोकेमेष्ट्री–करॉंची ने बड़े प्रयत्न से डा० कृष्णमूर्ति से इस औषधि के सम्बन्ध में सम्पर्क स्थापित किया। पुन: दक्षिण में जाकर उन्होंने केरल कोंकण, पश्चिम घाट में इस वृक्ष को स्वयं देखा और देखने के बाद पत्र-पुष्प-फलादि का विवरण उन्होंने दिया है, जो अध्ययनात्मक दृष्टिकोण से उचित तथा सन्तोषजनक है। नाम का पता न लगने पर पहचान के लिये एलफिस्टन कालेज–बम्बई बनस्पति शास्त्र के अध्यापक श्री कूपर से सहायता ली गई। पुन: इसकी

पुष्ट सेण्टजेवियर कालेज-बम्बई के बोटॅनिकल म्युजियम के प्रधान डा० फादर सन्तापू के पास जाकर की गयी। पुनः इसकी प्रामाणिकता के बारे में सर एडवर्ड सेलिसबरी-डायरेक्टर न्यू गार्डन-लन्दन को भेज कर पूछा गया और उनके नमूने से ठीक मिला। इतना प्रयत्न इस लिये करना पड़ा कि किसी भी मान्य आधुनिक पुस्तक में इसका नाम नहीं था। रुद्रवन्ती नाम कल्पित हैं और शास्त्रीय रुद्रवन्ती का रूप वास्तव में भूमपर्णशील एक सामान्य क्षुप मात्र है। अतः इसमें कोई समता नहीं है। यथा—

चणपत्रसमं पत्रं क्षुपं चैव तथाम्लकम्।
शिशिरे जलबिन्दूनां स्रवतिइति रुदन्तिका॥
शोढ़ल-निघण्टु

स्याद्रुदन्ती स्रवत्तोया सञ्जी वन्यमृतस्रवा।
रोमाञ्चिका महामांसी चणपत्री सुधास्रवा॥
राजनिघण्टु

गुण—

रुदन्ती कटुतिक्ताष्णा क्षयक्रिमि विनाशिनी।
रक्त पित्त कफ श्वासेमेहहारि रसायिनी॥
रा० नि० पर्पटादिवर्ग

अर्थात्—चने के पत्र के समान इस क्षुप के पत्र होते हैं। यह क्षुप जातीय है और समग्र क्षुप भू पर प्रसरित होता है। स्वाद में यह क्षुप अम्लरस का होता है। शिशिर काल में इसमें से जल के बूंद स्रवित होते हैं। इस प्रकार रूदन करके जल बिन्दुओं के आँसू के रूप में स्रबित होने के कारण इसे रुद्रन्ती-रुदन्ती या रुदन्तिका कहते हैं। इसके स्रव त्ताय: चणपत्री, सुधास्रवा: संजीवनी, अमृतस्रवा, रामांचिका, महामांसी आदि पर्याय हैं। राजनिघण्टुकार ने इसे पर्पटादि वर्ग में सम्मिलित किया है।

गुण—रुदन्ती स्वाद में कटु तिक्त, तथा उष्णवीर्य होती है। क्षयरोग, कृमिरोग, रक्तपित्त कफ के रोग, श्वास तथा प्रमेह रोग को दूर करता है।

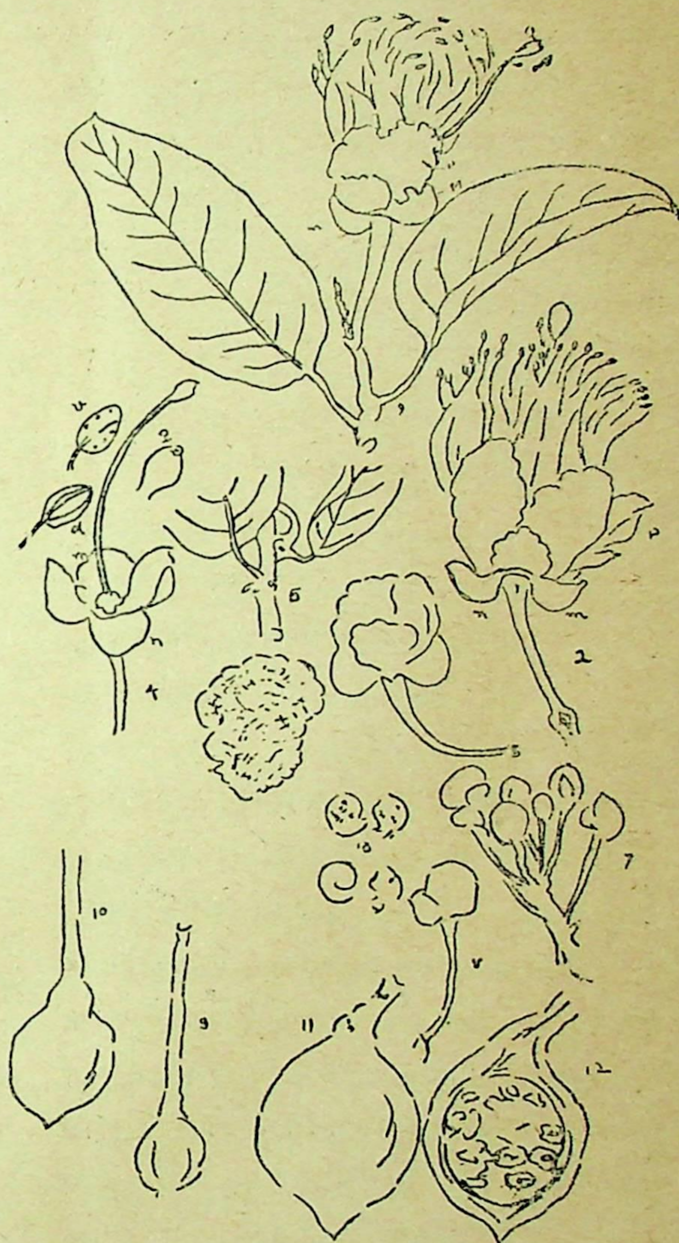
इतिहास—भारतीय चिकित्सक औषधि के रूप में इसका व्यवहार चिरकाल से करते आ रहे है। समुद्र के किनारे की भूमि में यह औषधि पायी जाती है। कोंकण तथा केरल के चिकित्सक इसका उपयोग चिरकाल से कुष्ठरोग में करते आरहे हैं। कोंकण के बाजारों में यह औषधि प्राय: बिकने के लिये जाती हैं और इनके पके फलों की अपेक्षा कच्चे फलों का उपयोग चिकित्सार्थ अधिक होता है। औषधि तथा शाक के रूप में वहां के लोग इसका उपयोग करते हैं व्रण विद्रधि और ग्रन्थि पर इसका उपयोग लाभ प्रद है। दक्षिण के वैद्यों के अतिरिक्त शेष भारत के वैद्य इसका उपयोग नहीं जानते। कलकत्ता तथा पुरी के चिकित्सक तुत्रक भेद से इसे कुष्ठ के लिये प्रयोग करते हैं। केरल के वैद्य इसे रुद्रवन्ती नहीं मानते अन्य देशों में इसका प्रयोग होता है कि नहीं—पर अज्ञात है, प्रकाशित साहित्य में इसका वर्णन नहीं मिलता न कोई प्रयोग ही पाया जाता है। सौराष्ट्र के भूतपूर्व मन्त्री तथा आ० भा० रिसर्च इन्स्टीट्यूट, जामनगर की गवर्निंग कौंसिल के सदस्य श्री दयाशंकर दुवे, इसके प्रति आकर्षित होकर इसके साहित्य की खोज में संलग्न हैं और रिसर्च इन्स्टीयूट को इस सम्बन्ध के विव-

रण भी भेजते रहते हैं। अभी हाल ही में स्नातकोत्तर शिक्षणकेन्द्र के छात्रों का एक दल जूनागढ़ की गिरनार पर्वतमालाओं की जड़ी-बूटियों के अध्ययनार्थ वानस्पतिक यात्रा पर गया था और इस दलको वनस्पतियों के अन्वेषण करने की आज्ञा भी श्री दुबे महोदय ने प्रदान की थी। यद्यपि यह औषधि नहीं मिली, किन्तु इसी जातिकी एक औषधि का पता हमें और लगा है। इसका अध्ययन जारी है और ठीक २ ज्ञात होने पर वैद्यसमाज के सामने उपस्थित किया जायेगा। अभी गिर के घने जंगलों के द्रव्यों का अध्ययन शेष है। सम्भव है इस तरफ भी यह द्रव्य प्राप्त हो जाय, किंतु यह सत्य है कि चिकित्सा में इधर के वैद्य इसका उपयोग नहीं करते हैं।

परिचय— यह एक मध्यम जातीय क्षुप श्रेणी की वनस्पति है, जिसकी अधिक तम ऊँचाई ५-१८ फीट तक होता है। इसकी पत्तियां एक विशेष प्रकार की लम्बी और शिराओं से युक्त होती हैं। जब यह नई होती हैं तो इनका वर्ण ताम्रवर्ण का और पूर्ण होने पर हरितवर्ण का रहता है। इनका पत्रवृन्त $\frac{1}{2}$ से १ इञ्च तक लम्बा होता है। पत्र ३-४ इञ्च लम्बे और १॥-२ इञ्च चौड़े होते हैं। प्राकृतिक रूप में इनका आकार चित्र नं० १ में दिये हुये पत्र की तरह होता है। पत्रवृन्त के पास छोटे-छोटे काँटों का एक जोड़ा होता है, जैसा चित्र नं० ५ दिखाई पड़ता है।

नये पल्लव ताम्रवर्णवत् रक्तिमा से युक्त होते है और परिपक्व पत्रों में चमकदार हरितवर्ण होता है। इसमें १०-१२ जोड़े शिराओं के मध्य की

रुदन्ती (वर्तमान-काल में प्रचलित)



(सचित्र आयुर्वेद कलकत्ता के सौजन्य से)

शिरा से निकलते हैं। पत्तियों के वर्ण उनकी आयु के अनुसार क्रमशः भिन्न-भिन्न होते हैं।

इसके फलों में भी पत्रवत् ही नये फल लालिमा लिये और परिपक्व हरितवर्ण के होते है—और इनका रंग भी क्रमशः नये से पुराने रंग में बदलता रहता है। नये पत्र और नये फल में रक्तवर्णता स्पष्ट दृष्टिगोचर होती है।

पुष्प—अविकसित पुष्प का स्वरूप चित्र नम्बर ७ की तरह होता है। इस समय के बड़े व छोटे पुष्प-पत्र छोटे-बड़े विषम-आकार के होते हैं। प्राकृतिक रूप में पुष्प का आकार जैसा होता है, वह चित्र नं० ५ दिखाया गया है। जब पुष्प विकसित होने लगता है तो उसके दो पुष्प-पत्र स्पष्ट दिखाई देने लगते हैं, जैसा चित्र नं० ३ में है। इसके चित्रों में बड़े को एक और छोटेको एन अक्षर के निर्देश से समझा जा सकता है। जो कि १-२-४ चित्रों में अंकित है। चारों पुष्प-पत्र इसमें चित्र नं० ४ में स्पष्ट दिखाये गये हैं। जब पुष्प पूर्ण विकसित हो जाता है तो चित्र नं० १ की तरह दिखाई पड़ता है। पुंकेशर और स्त्रीकेशर स्पष्ट दिखाई पड़ते हैं। पुंकेशर छोटे होते हैं योनि छत्र बड़ा और गर्भाशय परिपुष्ट होता है। योनिसूत्र लम्बा, सूत्राकार और बड़ा होता है, जैसा कि चित्र नं० ४ में दिखाया गया है। पार्श्विकभागों को डी तथा बी अक्षरों में चिह्नित करके व्यक्त किया गया है।

फल—फलों में सब से छोटा फल चित्र नं० ७-६-१० पर दिखाया गया है। जो इसकी नैसर्गिता को व्यक्त करता है। परिपुष्ट फल नं० ११ की तरह के आकार का तथा लम्बाई चौड़ाई व मुटाई लिये होता है। चित्र नं० १२ में अपक्व फल को छेदन करके दिखाया गया है। जिसमें बीच-बीच में कटे कच्चे बीज दिखाई पड़ते हैं। अपक्व बीजोंकी आकृति चित्र नं० १३ में प्रदर्शित की गई है।

इस प्रकार इसके विभिन्न चित्रों द्वारा आकृति व प्राकृतिक स्वरूप को दिखाने की चेष्टा डा० मेंहदीहसन के ही शब्दों में की गई है।

कुछ दिन पूर्व पातञ्जलि सेठी ने इसका विवरण 'टाइम्स आफ इण्डिया' के २७ जुलाई के अंक में प्रकाशित कराया था। उसमें भी इसी प्रकार का किन्तु संक्षिप्त विवरण है। उक्त लेख में यह प्रदर्शित करने की चेष्टा की गई है कि इसके आविष्कारक—ज्ञाता तथा प्रयोगकर्ता डा० जी० कृष्णमूर्ति हैं। लेख की भाषा आकर्षक है। उसका भाषानुवाद नीचे दिया जाता है—

यह पौधा दक्षिण भारत में मैसूर के सरस्वती नदी के तट पर स्थित यानीं जंगलोंमें पाया जाता है। इसका संग्रह सरल नहीं है, क्यों कि यह दूर-दूर पर मिलता है। इसका कोई निश्चित स्थान नहीं है। वहां के निवासियों द्वारा यह अप्रैल मासमें एकत्र किया जाता है और वे लोग इसेएकत्र करके इसे डा० जी० मूर्ति को भेजतेहैं। जो पुरुष रोग विषयक अनुसंधान करते हैं। डा० मूर्ति ने पहले इसका परिचय गुप्त करने की चेष्टा की। उन्होंने लन्दन के न्यू गार्डेन के विशेषज्ञ के पास इसे भेजा और यह (कैपेरिस मुनाई है)—यह जानकारी प्राप्त की। यह १०-१५ फीट की ऊंचाई का वृक्षाश्रयी पौधा है और इसकी शाखाए ६ इञ्च तक लम्बी १॥-२॥ इञ्च तक चौड़ी होती है। यह देखने में ऊपर से चमकदार और नीचे हलके वर्ण का होता है।

शाखाएं हरे-भरे पल्लवों से युक्त तथा झुके हुए कांटों से युक्त होता है। इसके पत्ते गोलाई लिये हुये लम्बे, कभी तीक्ष्णायु तथा कड़े होते हैं। पुष्प श्वेत वर्ण के ४-५ इञ्च व्यास के पुष्प-पत्र आमने-सामने घने और पुष्प की गर्भ-नली मोटी मसृण होती है। पुष्पमंजरी कभी २ पत्र रहित भी होती हैं। कभी २ इसके पुष्प एकाकी भी लगते है। फल दो इञ्च व्यास का गोलाकार होता है। इसमें कई बीज होते है जिनका आकार सेम के बाजों के बराबर होता है। इसमें से सक्रिय तत्व को निकालने की चेष्टा की गई किन्तु सफलता न मिलने पर फल के ही चूर्ण का प्रयोग किया गया।

उपर्युक्त बिबरण हिन्दुस्तान टाइम्स में श्री सेठी द्वारा प्रकाशित विवरण है।

प्रयोग और क्रिया—रुदन्ती के प्रयोगों का विवरण देते हुये श्री सेठी उपन्यास की तरह प्रारम्भ कर सारा श्रेय डां० मूर्ति को ही देने का ही प्रयत्न करते हैं, किंतु दक्षिण भारत में ये फल बिकते है और कुष्ट, व्रण, बिद्रधि पर विशेष तया प्रयुक्त होते हैं यह मैं वतला चुका हूँ, श्री सेठी का कथन निम्न हैं—

पाँच वर्ष पूर्व एक डाक्टर मुंह के मुंहासों से मुक्ति पाने के लिये एक औषधि के खोज में थे। एक पड़ोसी ने एक जंगली फल-रुदन्ती का प्रयोग बतलाया, इसके प्रयोग से डाक्टर को आश्चर्य जनक लाभ हुआ और मुँहांसे को उसने समूल नष्ट कर दिया। कुछ समय वाद १९५३ में एक वालक को जिसकी उम्र ढाई साल की थी, उनके पास लाया गया जो वहुत बुरी दशा में था। यह बालक क्षय के अस्पताल में १० माह रहकर आया था, अस्पताल में इसकी चिकित्सा में स्ट्रेप्टोमाइसीन का प्रयोग किया गया था। किंतु कोई समुचित लाभ दृष्टिगोचर नही हुआ जब डा० ने बालक को अस्पताल से मुक्त किया गया तब कहा गया था, कि यह बालक १५ दिन से ज्यादा जीबित नही रह सकता कहते हैं डाक्टर ने जीवन से पूर्ण तया निराश उस रोगी पर रुदन्ती का प्रयोग किया और ४ ग्रेन की मात्रा में तीन मात्रा दी, उनके मुंहासे में लाभ हो चुका था, अतः उन्हें विश्वास था कि इसके व्रण में भी लाभ करेगा। ५ दिन में व्रण से पूय आना बन्द हो गया और लक्षण कम हुए। वच्चे को भूख लगने लगी, व्रण भी ठीक हो गया। १५ दिन के प्रयोग के फलस्वरूप व्रण छोटे हो गए, व्रण-रोपण होने लगे और उसकी शारीरिक स्थिति में परिवर्तन दृष्टिगोचर होने लगा। कुछ मास प्रयोग करने के बाद बच्चा रोग मुक्त हो गया।

इस प्रयोग ने डा० मूर्ति का ध्यान क्षय के रोगियों पर रुदन्ती के प्रयोग के सम्बन्ध में आकर्षित किया। डा० मूर्ति देशी दवाओं के क्लिनिकल रिसर्च विभाग के अध्यक्ष थे—जहां वह कार्य करते थे वह स्थान—डा० बालाभाई नाभावती हास्पिटल बदल पारले बम्बई में था। बहां के प्रबन्धक से कहने पर इन्हें प्रयोग की सुविधा खण्डीय फुफ्फुसक्षय वाले रोगियों पर दी गई सन् १९५१ में पूर्ण सुविधा दी गई और ११०० रोगियों की चिकित्सा हुई और इसके अच्छे परिणाम निकले ९७ केस विशेषरूप में

रखे गये। ११ रोगी को छोड़कर शेष २० वर्ष से ऊपर की आयु के थे। सब से छोटी आयु का रोगी ६ वर्ष का और अधिकतम आयु का रोगी ६५ वर्ष का था। १८ सप्ताह तक रुदन्ती दी गई। कम से कम ४ और अधिक से अधिक १८ सप्ताह तक इस औषधि का प्रयोग हुआ। ६ रोगियों पर कोई प्रभाव नहीं हुआ। शेष रोगियों पर इसका अच्छा प्रभाव रहा। एक रोगी का २३ पौंड वजन बढ़ा इसी प्रकार एक दूसरे रोगी का ३५ पौंड बजन बढ़ा। चार वर्ष के बाद दूसरों की पुनः जांच हुई तो वह पूर्ण स्वस्थ था।

प्रयोग सम्बन्धी जो विवरण दिया गया है उससे ज्ञात होता है कि रुदन्ती ज्वर को कम कर देती है और क्षुधा की वृद्धि होने लगती है। रोगी का वजन बढ़ने लगता है और कभी-कभी वजन ३५ पौंड तक बढ़ता है जो अब तक के किसी दवा से नहीं बढ़ता। पूय जाना बन्द हो कर लाभ होता है।

सरकारी रिपोर्ट के अनुसार भारतवर्ष के ७ लाख रोगी प्रति वर्ष क्षय रोग से मरते हैं— अब रुदन्ती यदि क्षय रोग में लाभ करती है तो करोड़ों रोगियों को लाभ पहुँचेगा।

इस प्रकार विवरण देकर श्री सेठी ने द्वितीय बार लिखा है—"मुहाँसों की यह निश्चित् दवा नहीं है। हाँ, उन्हें दूर करने में सहायता करती है। क्षय रोगियों के अतिरिक्त यह अन्य रोगियों में न तो भूख की वृद्धि करती है और न वजन ही बढ़ाती है। रुदन्ती क्षय के कीटाणु-विष को नष्ट करती है और वैसिलस टुबरक्लोसिस या क्षय के कीटाणु-नाशक है। यह (रुदन्ती) क्षय के कीटाणुओं की क्रिया को कम करती है और उनकी वृद्धि में बाधा पहुँचाती है। इस प्रकार क्षय रोगियों के लिये लाभप्रद एवं भारवर्द्धक होती है। इसका प्रभाव अन्य संक्रामक रोगों पर क्या होता है—यह ज्ञात नहीं।"

इस प्रकार डा० कृष्णमूर्ति ने रुदन्ती का प्रयोग करके यह विचारधारा उपस्थित की है कि रुदन्ती क्षय में लाभ पहुँचाती है। इसी प्रकार कई स्थानों पर रुदन्ती के प्रयोग चल रहे हैं। इसके परिणाम भी शीघ्र ही ज्ञात होंगे, तब रुदन्ती के गुण-धर्मों के बारे में और भी बहुत सी जानकारी प्राप्त हो सकेगी।

केरल, कोंकण व मैसूर में इसका प्रयोग विद्रधि, व्रण, ग्रन्थि, और कुष्ट में होता है और सामान्य लोग भी खरीद कर प्रयोग करते हैं। डा० मूर्ति को जो उधर के ही रहने वाले हैं, वहां से ही प्रेरणा मिली होगी। इस औषधि के विषय में और भी जानकारी की जा रही है। इसे संग्रह कर हिन्दू विश्वविद्यालय की आयुर्वेदिक फार्मेसी में वैद्य तथा जनता के लाभार्थ रखा गया है, जो सज्जन लेना चाहें वहां से मंगा सकते हैं। इस औषधि के बारे में अधिक से अधिक जानकारी हो सके और एक ही व्यक्ति इसका अधिकारी न बने और जन-सुविधा में बाधा न हो-एतदर्थ यह प्रबंध किया गया है। इन पंक्तियों के लेखक के यहां से भी इसको मंगाया जा सकता है-किन्तु अधिक मात्रा में आयुर्वेदिक फार्मेसी, हिन्दूविश्वविद्यालय से ही मंगाना उचित होगा।

(सचित्र आयुर्वेद के सौजन्य से)

* वनस्पतियों का ये महत्व ! *

श्री तारादत्त जी त्रिपाठी, शिलौटी (नैनीताल)

प्राचीन ग्रंथ अथर्व वेद में वनस्पतियों का विस्तृत वर्णन पाया जाता है, ज्यों-ज्यों औषधि विज्ञान का विस्तार बढ़ता गया, त्यों-त्यों इस विषय को महत्ता कीं वृद्धि भी होने लगी. क्रमशः इस विज्ञान ने आयुर्वेद का जन्म धारण किया, च्यवनऋषि को पुनर्योवन, दक्षप्रजापति के कटे शिर को जोड़ देना, राजयक्ष्मा जैसे भीषण व्याधि का निमूल करना, युद्ध क्षेत्र के मृतकों को जीवित बना देना आदि अन्यान्य विस्मय जनक आश्चर्य युक्त, अद्भुत कार्य इन्हीं वनस्पतियों की सहायता से ही सम्पन्न हुये तदनन्तर इसी आयुर्वेद में महर्षि आत्रेय एवं धन्वन्तरि जी का भी वर्णन है । जोकि पहले चरक सम्प्रदाय के संस्थापक तथा दूसरे महर्षि सुश्रुत के भी गुरु थे, महर्षि चरक सुश्रुत आयुर्वेद के स्तम्भ रूप में प्रसिद्ध थे, ऐसी ही महर्षि चरक की चरक संहिता अपितु महर्षि सुश्रुत की सुश्रुत संहिता आज भी आयुर्वेद विज्ञान की ऐसी चमकती हुई कलाएँ हैं । जिसका प्रकाश समय के प्रहारों से भी मन्द नहीं हो सकता सुश्रुत संहिता में चिकित्सा ही नहीं सर्जरी (शल्यशास्त्र) तथा शास्त्र चिकित्सा (आप्रेशन) का भी अत्युत्तम विवेचन पाया जाता है, इसी प्रकार चरक में भी चिकित्सा विज्ञान के विषय में अत्यन्त विस्तृत एवं शास्त्रीय विवेचन है ।

यही नही कि समस्त रोगों के लिये सूचीवेध (इञ्जेक्शन) चिकित्सा का भी इसमें उल्लेख पाया जाता है, सुश्रुत संहिता में सम्पूर्ण वनस्पतियों का वर्णन किया गया है । प्राचीन भारतीय वैद्यों का वनस्पति विज्ञान बहुत ही उच्च कोटि का था ।

वैद्यों में वनस्पतियों का महत्व

वे लोग इन्हीं वनस्पतियों से कठिन से कठिन रोगों की चिकित्सा में सिद्ध हस्त होते थे यही कारण था कि अन्य देशों के चिकित्सक भी चिकित्सा सम्बन्ध में भारतवर्ष के आभारी रहते थे । बहुत सी वनस्पतियां हमारे पर्वतीय भाग में ऐसी भी होती हैं; जो अत्यन्त प्रभाव शाली एवं जिनका ज्ञान हमारे प्राचीन ऋषि मुनियों को भली भांति से था, परंतु कालान्तर तथा समय के भीषण आघातों से उनका ज्ञान कठिन सा हो गया है, वे वनस्पतियां हमारे लिये अपरिचित सी होगई हैं । किंतु चरक संहिता में कई दिव्य वनस्पतियों का वर्णन आया है । जैसे भूख प्यास को भंग करने वाली दूध की वृद्धि तथा सोना बनाने वाली एवं जितने वमन विरेचन करने हों उतने ही अगुल, जड़ से खाने से विरेचन, शिरसे खाने से वमन अवश्य हो जाते हैं. इत्यादि अनेक प्रकार के चमत्कृत्य गुणों से संयुक्त वनस्पतियां हमारे पर्वतों में हा हुआ करती हैं ।

जहां यूनानी तथा होमियों पैथिक ऐलो पैथी औषधियां निष्फल होकर वैद्य,डाक्टरों ने

विवश होकर उत्तर देदिया यहा केवल वनस्पतियों से ही असंख्य प्राणियों की प्राण रक्षा करना यह वनस्पतियों का महत्व नही तो और क्या है ? स्मरण कीजिये उस समय को जब राम, रावण के युद्ध काल में लक्ष्मण जी के शक्ति के लगते ही मूर्छावस्था में (अचेत) धरासाई पड़े थे, उस विकट, दारुण समय में कोई अन्य (होमियो पैथिक, ऐलोपैथी, यूनानी इञ्जेक्शन मिक्श्चर, आदि) औषधियों के प्रयोग बिना, केवल एक बनस्पति (सञ्जीबन बूंटी) को ही सुंघाकर उन्हें तत्क्षण सचेत कर देना जगद्विख्यात है, तो फिर कौन कहता है कि बनस्पतियों में कुछ भी महत्व नही है ।

बनस्पतियों में अमृत भरा है, मूल सुश्रुत संहिता बनस्पतियों का कोष था, जिसको बिक्रम सम्वत से एक सहस्र (हजार) वर्ष पूर्व प्रसिद्ध रसायनिक सिद्ध नागार्जुन ने संस्कारित किया था, उस समय से भारत वर्ष समस्त भूमण्डल का बिद्यापीठ रहा । पृथ्वी के प्रत्येक खण्ड केबिद्यार्थी यही सम्पूर्ण आयुर्वेदादि ग्रन्थों को कण्ठस्थ करते रहे । वे वनों में भ्रमण करके वनस्पतियों की खोज किया करते थे । इसी प्रकार समस्त रोगों को निमूल करने में भी सिद्ध हस्त होते आए हैं ।

वनस्पति अन्वेषण तथा संग्रह

आचार्य श्री भोलादत्त जी पाण्डेय आयुर्वेद बृहस्पति वनस्पति विशेषज्ञ
एम० आर० ए० एस०, रानीखेत

भारत के प्राचीन आचार्य महानुभावों ने 'हिमालय' पर्वत को औषधिभूमि कहा है, आधुनिक वैज्ञानिकों ने भी परिश्रम पूर्वक अन्वेषण करके यह घोषणा की है कि ब्रिटिश तथा अमेरिकन फार्माकोपिया की ६% से ९०% प्रतिशत तक औषधियां हिमालय की पर्वत श्रेणियों में उत्पन्न होती हैं, इन प्रातः स्मरणीय वैज्ञानिकों ने अपने जीवनों का बलिदान देकर भी अन्वेषण की परम्परा को जारी रखकर यहां की बहुगुणमयी वनौषधियों, कन्दों, पर्वतीय-पुष्पों के बीजों का यथाविधि संग्रह करके अपने संसार-ख्याति प्राप्त 'क्यूहरवेरियम' तथा सुप्रसिद्ध वनौषधि उद्यानों में लगाकर उनके गुणों की परीक्षा करते हुये उन्हें अपने चिकित्सा-शास्त्र 'फार्माकोपिया' में सम्मिलित कर लिया है। इसके विपरीत हमारे भारतवर्ष के आयुर्वेदज्ञ चिकित्सक बाबा वाक्य प्रमाणम्' मानकर वनौषधि विक्रेता पंसारियों पर ही अवलम्बित रहे हैं, इससे आयुर्वेद का महान् क्षति ही न होकर, वैद्यसमाज को सभ्य जगत के सामने उपहासास्पद बनना पड़ा है। वर्तमान काल के पंसारी, अत्तार लोग इन वनौषधियों का किञ्चित् मात्रभी ज्ञान नहीं रखते एक बार मैंने एक रोगी को 'हुलहुल' का प्रयोग करने का कहा तो वह बाजार से 'बुरांशके फूल' Rhododendron लेकर आया। तो दूसरा रोगी 'विदारीकन्द' के बजाय 'गञ्झाड़ू' पीला कंद लाया। इस भांति विरुद्ध गुण धर्म औषधियों के सेवन से रोगियों की प्रत्यक्ष रोगवृद्धि होकर वैद्यसमाज को अपयश का भाजन बनना पड़ा। राष्ट्र के अनेकों शुभचिन्तक मित्रों के परामर्श से यह प्रयत्न किया जा रहा था कि यहां पर पर्वतीय वनौषधियों के, जल-वायु अनुसार उद्यान की स्थापना की जाय, और राष्ट्र के आयुर्वेदिक विश्वविद्यालयों, कालेजों के छात्रों तथा द्रव्य-गुण के प्राध्यापकों को हिमालय की बहुगुणमयी जड़ी बूटियों का प्रत्यक्ष दर्शन, परिचय, ज्ञान तथा संग्रह कार्य सम्पादित करा दिया जाय। विगत वर्षों में हमें इस कार्य में बहुत कुछ सफलता भी मिल रही थी, हमारे निम्न लिखित आयुर्वेद महाविद्यालयों के छात्रों, प्राध्यापकों ने लगातार अनेकों वर्षों तक सामुहिक रूपेण इस प्रदेश में सरस्वती यात्रा की, जिनमें हिं० वि० बि० काशी अ० शि० आयुर्वेद कालेज बेगू सराय (बिहार), गवर्मेन्ट आ० कालेज पटना (बिहार), गवर्मेन्ट आ० कालेज जयपुर (राजस्थान), ललितहरि आ० कालेज पीलीभीत, ऋषिकुल आ० कालेज हरिद्वार प्रभृति का नाम विशेष उल्लेखनीय है।

हाँ, आचार्य श्री रामनाथ जी वैद्य (वनस्पति विशेषज्ञ) गुरुकुल आयुर्वेदिक कालेज कांगड़ी के अपने छात्रों सहित पधारे।

भारतवर्ष के अनेकों प्रान्त के छात्रों तथा आचार्य महानुभावों द्वारा मेरा ध्यान इस ओर आकर्षित किया गया है कि मैं हिमालय की यात्रा स्थिति का विस्तृत वर्णन उनकी ज्ञान वृद्धि के हेतु प्रकाशित करूँ। किन्तु मुझे यह विश्वास नहीं है कि मैं वास्तविकरूप से हिमालय की वनौषधि अन्वेषण हेतु यात्रा करने की यथार्थ स्थिति का दिग्दर्शन कर सकने में सफल हो सकूंगा। किन्तु उनके आदेशों का पालन करने का प्रयत्न मात्र ही मेरे कर्तव्य की पूर्ति समझी जाय।

वनौषधि अन्वेषणार्थ अपने सुविधा जनक भ्रमण के लिये हिमालय प्रदेश के पर्वतीय भाग, (जो कि गढ़वाल, अल्मोड़ा व नैनीताल जिलों की सीमा पर स्थित है) को तीन भागों में विभाजित करते हैं। इनके अन्तर्गत हिमालय की गगन चुम्बी अनेकों प्रधान श्रेणियां आ जाती हैं नन्दादेवी, त्रिशूल, पञ्चचूली कामेत, नन्दाकोट गंगोत्री, चौखम्बा आदि।

(१) प्रधान हिमालय प्रदेश—पूर्व में अस्कोट से लेकर गौरी नदी के किनारे से ग्वालदम, पिण्डर के तट कर्णप्रयाग व पश्चिमीसीमा स्थित मन्दाकिनी व पिण्डर के संगम रुद्र प्रयाग तक, तथा अस्कोट से कालीनदी के पूर्वी गर्व्यांग से लेकर हिमाच्छादित पर्वत श्रेणियों का प्रदेश, जो समस्त उत्तरी भू-भाग में प्राकार की तरह पश्चिमी केदारनाथ तक फैला हुआ है। इन दोनों सीमाओं के मध्य का प्रदेश जिसकी गगनस्पर्शी दुर्गम घाटियों की ऊँचाई १०००० दस हजार फीट से २६००० छब्बीस हजार फीट तक चली गई है और जिसके क्रोडमें अनन्त शक्ति शालिनी स्वच्छ सलिला अनेकों नदियां हरे भरे वनों से घिरे हुये प्रदेशों में बहती हैं। इस भू-भाग में माना बद्रीनाथ, केदारनाथ, पाण्डुकेश्वर, नीति, चम्पा मलारी, द्रोणागिरी, जोशीमठ, तपोवन, मिलम, बुर्फू, मार्चा, नानलिंग, चमोली नन्द प्रयाग का उपजाऊ हरा भरा प्रदेश, अलकनन्दा, धौलीगंगा गौरी तथा काली नदियों की घाटियां आ जाती हैं। ग्रीष्म काल में इस प्रदेश का तापमान अधिक से अधिक ७०.० फा० डिग्रीतक पहुँचता है। और शीतकाल में १०. डिग्री से ३२.० डिग्री तक रहता है। इस प्रदेश में उत्पन्न होने वाली वनौषधियां विशिष्ट गुणसम्पन्ना संगठित शक्ति शालिनी, रसायन तथा बाजीकरण मानी गई है। वर्षा का वार्षिक माप १० इञ्च से लेकर ४५ इञ्च तक है। वर्ष भर में अधिकतया 'हिमपात' होता रहता है, अक्टूबर के प्रारम्भ से मध्य मई तक सारा प्रदेश हिमाच्छादित रहता है अक्षांश के ३० से ३१ अंश तथा देशान्तर के ७६ से ८१ अंश तक यह सीमा प्रदर्शित की गई है।

(२) मध्य पर्वतीय प्रदेश— उत्तर पूर्वी रुद्र प्रयाग से पिण्डर व कफिनी के संगम, द्वाली से गौरीगंगा के किनारे-किनारे अस्कोट तक, तथा लैन्सडाउन, चौबटिया, रामगढ़ से चम्पावत शारदा नदी के किनारे की सीमा—रेखा का मध्य प्रदेश, इसमें दक्षिणी गढ़वाल, लोहबा, बैजनाथ कपकोट तेजम, बागेश्वर, अल्मोड़ा, रानीखेत, लोहाघाट चम्पावत का चीड़ देवदारु मिश्रित तथा घने वृक्षों वाला बांस का वन व शारदा, सरयू पूर्वी-पश्चिमी रामगंगा, कोसी, गगास वगैरह नदियों की घाटियां व अन्तर्वेदी प्रदेश सम्मि

लित किया गया है। इस प्रदेश के धरातल तथा पर्वत श्रृंखलाओं की ऊँचाई ५००० पांच हजार से १०००० दस हजार फीट तक है और तापमान ग्रीष्मकाल में अधिक से अधिक १०० डिग्री तक तथा वर्षा का वार्षिक औसत ७५ इञ्च है। ऊँची चोटियों पर शीतकाल में प्रायशः हिमपात होता रहता है।

बहिर्वर्तीय पर्वतीय प्रदेश— इस भूखण्ड में गंगा तथा शारदा नदी के मध्यस्थित सम शीतोष्ण प्रदेश, लेंस डाउन भुवाली, भीमताल, रामनगर, कालागढ़, हल्द्वानी के चीड़-बांज के मिश्रितवन, शाल, शीशम, खैर, कदम्ब, माध्वीक धौड़ो के विशाल काय स्थिरायु वृक्षों वाला प्रदेश सम्मिलित किया गया है। इसके धरातल की ऊँचाई १५०० फीट से ५००० फीट तक, तथा तथा वार्षिक वर्षा का औसत ४० इञ्च से ७५ इञ्च तक है। ग्रीष्मकालीन तापमान १०५ डिग्री तक पहुँच जाता है। देश का जल-वायु समतल, पर्वत श्रेणी, नदियों की घाटियों के अनुसार यह त्रिविध विभाजन किया गया है। दूसरी दृष्टि से इस प्रदेश में उत्पन्न वनौषधियों के आधार पर वनों का वर्गीकरण सात भागों में किया जाता है।

(१) श्रीवास (चीड़) के वन - ३००० से ७००० फीट तक की ऊँचाई के पर्वतीय प्रदेश, जिनमें शीतकाल में दिसम्बर से अप्रैल तक यदा कदा हिमपात होता है। समशीतोष्ण, शुष्क तथा आर्द्र जल वायु वार्षिक वर्षा का माप ७५ इञ्च, ग्रीष्मकालीन तापमान ९५ डिग्री तक।

(२) बाँज (ओक) तथा निम्न श्रेणी के वन—५००० से ११००० फीट तक की ऊँची श्रेणियाँ। जहां का तापमान अधिक से अधिक ७५ डिग्री तक पहुँचता है। जिसमें रजत-देवदारु अधिकतर उत्पन्न होता है। अक्टूबर से अप्रैल तक प्रचुर मात्रा में हिमपात, जलस्रोतों की बाहुलता।

(३) बाँज तथा उसकी जाति के वन— ६००० से ८००० फीट तक की ऊँचाई के प्रदेश समशीतोष्ण जल-वायु।

(४) मोरु तथा उसकी जाति के वन— ७००० से ८००० फीट तक की ऊँचाई के प्रदेश।

(५) खरसू के वनः—७५०० फीट से ११००० फीट तक की ऊँचाई की शीत प्रधान पर्वत मालायें, तापमान ६० डिग्री तक, प्रचुरता से हिमपात होता है।

(६) निम्न श्रेणी के रजतदारु के वनः— ८००० से ९००० फीट तक की ऊँची श्रेणियां शीतप्रधान उपत्यकायें, निश्चित हिमपात, तापमान ७० डिग्री तक।

प्रधान हिमालय प्रदेश में स्थित सघन वनों का श्रेणी विभाजन इस प्रकार किया जा सकताहै

(१) नील दारुवनः—६००० से १२००० फीट ऊँचाई की श्रेणियों में उत्पन्न हरे-भरे वन।

(२) चिकनी छाल वाले वृक्षों के वनः— ७००० फीट से १००० फीट ऊँची श्रेणियों में स्थित वन, जिनमें रंग बिरंगे पुष्पों वाले वृक्षों जड़ी-बूटियों के वन फैले हुये हैं।

(३) सरौ (सुरभिदारु) के वनः—६५००

से ६५०० फीट ऊँचा श्रेणियों में सुरभिदारु के वृक्षों की प्रचुरता वाले बन।

(४) देवदारु के वन:—८००० से १०००० फीट ऊँची श्रेणियों के वन जिनमें देवदारु प्रचुरता से उत्पन्न होता है।

(५) मिश्रित वन:—१००० से ६००० फीट ऊँची श्रेणियों की उपत्यकायें जिनमें अनेक प्रकार की मिश्रित वनौषधियों की लता, वृक्ष उत्पन्न होते हैं।

(६) उच्च पर्वत श्रेणियों पर स्थित वर्च के वन ६५०० से २२००० फीट ऊँची पर्वत श्रेणियों के वन।

(७) उच्च श्रेणियों के रजत दारु के बन:—१०००० से १३५०० फीट तक के ऊंचे पर्वत शिखरों में उत्पन्न बन।

तिब्बत के सीमाबर्ती प्रदेश तथा तंग घाटियों के छोटी-छोटी झाड़ी वाले वन। नदियों के तटों के क्षेत्र १०००० से १४००० फीट तक ऊँची श्रेणियों (पर्वत शिखरों) पर उत्पन्न तथा ६००० से १५००० फीट ऊँची श्रेणियों के हरे-भरे बन। इससे अधिक ऊँची श्रेणियों में सदा सर्वदा हिम पात होता रहता है, वर्ष भर के अधिकांश मासों में ये शिखर श्वेत हिम से आच्छादित रहते हैं। वर्षाऋतु में ही इनका हिम पिघल कर बह जाता है, तब ये शिखर लोहित, कृष्ण लोहित वर्ण के दिखाई देते हैं उनमें अधिकांशत: दुर्गम श्रेणियां हैं।

पर्वतीय प्रदेश में बनौषधि अन्वेषण-संग्रह तथा प्राकृतिक शोभा के दर्शन व यात्रा के लिये सितम्बर से अक्टूबर तक का समय सुविधाजनक तथा उत्तम रहता है। क्योंकि परिपक्व वनौषधियों के दर्शन व संग्रह कार्य में चिकित्सक समाज को इससे अधिक सुअवसर अन्य ऋतुओं में उपलब्ध नहीं होगा। अक्टूबर से जून तक ये शिखर बर्फ से ढके रहते हैं। अत एव समस्त वनौषधियाँ भी सुप्त अवस्था में भूमि गर्भ में दबी रहती हैं।

उपलब्ध-निघण्टु-दर्शन

कविराज श्री ग० नी० पटबर्धन वैद्य, वनस्पति विशेषज्ञ, सिर्सी (धारवार)

हमारे प्राचीन ग्रंथत्रय चरक, सुश्रुत वाग्भटों में कहे गये अनेक वनस्पतियों का ठीक परिचय आज प्राप्त नहीं है। टीकाकारों ने कहीं-कहीं मन माना अर्थ किया देखा जाता है। उन्होंने एक द्रव्य का एक जगह एक अर्थ कहा हो तो दूसरी जगह दूसरा ही अर्थ करते देखा जाता है। उदाहरण के लिये 'काकादनी' शब्द का सुश्रुत टीका में डल्हण ने सू० अ० ३६–६ में 'हिंस्रा' इस प्रकार, चि० अ० १४–८ में 'वायसतिन्दुका' इस प्रकार, चि० अ० १६-६३ में 'काकहिंस्रेत्यर्थ–अहिंस्रेत्यन्ये' इस प्रकार, क० अ० ७–३१ में 'कृष्ण श्रीफलिका' इस प्रकार, उ० अ० २८–६ में 'काकजंघा' इस प्रकार और उ० अ० ३२–८ में 'काकतिन्दुक कालाइत्यन्ये' इस प्रकार अर्थ कहा है। इसे देखने पर काकादनी कौन वनस्पति है इसका निश्चित् ज्ञान नहीं होता। इस कारण से 'द्रव्यावलिं बिना वैद्यास्ते वैद्या हास्यभाजनम्'' इस धन्वन्तरि बचन के अनुसार वैद्य परिहास योग्य बनना सम्भव है। इसी कारण से ग्रंथत्रय में कही गयी द्रव्यावलि को टीकाकारों के आधार पर ही विश्वासार्ह नहीं माना जा सकता।

द्रव्यावलि को जाने बिना वैद्यकवृत्ति करना मूर्खता ही है इसे स्पष्ट करने के लिये ही निघन्टु बिना वैद्यो' यह बचन कहा गया है। परन्तु आज जो निघन्टु प्रचार में है उनसे ग्रंथत्रय की सम्पूर्ण द्रव्यावलि का परिचय प्राप्त नहीं होता। जैसे—सुश्रुत सु० अ० ३७–१७ में अर्कोत्तमा यह शब्द है। उसे डल्हण ने 'अर्क–अर्कमूल, उत्तमा, त्रिफला, अन्येतु पुनरर्कोत्तमामित्यभिन्न पदेन मन्दारकमाहुः' ऐसा अर्थ कहा है। अर्कोत्तमा शब्द निघन्टुओं में न मिलने के कारण उसने अर्क और उत्तमा भिन्न २ मानकर उत्तमा का अर्थ त्रिफला इस प्रकार किया है। पर उत्तमा को त्रिफला मानने में प्राचीन ग्रन्थों में आधार नहीं है। जिसे अशुद्ध कहा जा सकता है उस भावप्रकाश में ही 'उत्तमा त्रिफला, सर्वतोभद्रा च' इस प्रकार कहे जाने के कारण वह विश्वासार्ह नहीं हो सकता। जो प्राचीन माना जाता है उस विश्वप्रकाश में 'उत्तमा दुग्धिकायां' स्यादुत्कृष्टे चोत्तमेऽन्यबत्'। ऐसा उल्लेख मिलने के कारण उत्तमा को दुग्धिका कहा जा सकता है। अथवा 'अर्कोत्तमा' एक ही शब्द माना तो अर्कों में श्रेष्ठ-अर्कोत्तमा—'राजार्क' इस प्रकार अर्थ किया जा सकता है। इस प्रकार अनुमान से अर्थ करना प्राप्त होने के कारण निघन्टुओं में अर्थ प्राप्त न होने से मनमाना अर्थ करने की अपेक्षा वैसे शब्दों को एकत्र करके उनका अर्थ निश्चित करना विद्वानों के लिये कर्तव्य है।

आज जो निघण्टु प्राप्त हैं उनमें वनस्पतियों के सम्बन्ध में भी सन्दिग्धतायें उत्पन्न हुई हैं क्यों कि भिन्न २ प्रान्त के टीकाकारों ने अपनी भाषा के नाम कहते समय भिन्न २ वनस्पतियों के नाम कहे हैं। उदाहरण के लिये 'मूर्वा' नामक निघण्टु कृत वनस्पति को हिन्दी में मरोरफली, मराठी में मोरवेल, कन्नड में-कोरटिगे, बंगाली में-मुर्गा, मलेयाली में-पेरुंकुरुंप इस तरह देशी भाषा में अर्थ कहकर लैटिन में-Clematis triloba और Sanseviria zeylamica ये दो नाम कहे गये हैं। इनमें पहला लैटिन नाम मराठी की मोरवेल को और दूसरा नाम बंगाली की मुर्गा वनस्पति को ठीक हो सकता है। मलेयाली 'पेरुं कुरुंप' यह नाम भी तीन भिन्न २ वनस्पतियों को प्रयुक्त होता है ऐसे ऐसे संदिग्धताओं के निवारण के लिये वैद्य महानुभाव आगे न बढ़े तो उपर्युक्त मूर्वा का 'मुर्गा' होकर 'मुर्दा' होना भी सम्भव है।

इस लिये प्रथमत: प्राप्त निघण्टुओं में सत्यासत्यता का अन्वेषण करके, अशुद्धियों को दूर करते हुये अनिश्चित शब्दों का निर्धार किया जा सके तो वैसा करना और यदि नहीं तो परिशिष्ट में उन्हें स्थान देकर निधारित शब्दों को अन्यत्र संग्रह करना उचित है।

अब कुछ प्राचीन निघण्टुओं में जो संदिग्धतायें पाई जाती हैं उन्हें संक्षेपत: देखें।

(१) धन्वन्तरि निघन्टु—

यह काशीराज दिवोदास नामक धन्वन्तरि कृत मानने में संशय है। अन्य किसी धन्वन्तरि सम्प्रदाय के विद्वान से रचा हुआ होगा। क्योंकि "धन्वन्तरि पदद्वंद्व नत्वा लोक हितार्थिनाम्। रस वीर्य विपाकादि द्रव्याणां कथ्यते मया।।" और 'द्रव्यावलि: समादिष्टा धन्वन्तरिमुखोद्गता' इस प्रकार कहे जाने के कारण मूल धन्वन्तरीय निघण्टु दूसरा ही होगा। इसी कारण से चरक सुश्रुतादि के अनेक शब्द इसमें नहीं पाये जाने पर भी सुश्रुत के अनुसार ही वनस्पतियों के गुण कहे जाने के कारण मूल निघण्टु के लुप्त हुये अंश को सुश्रुत से संग्रह किया गया होगा।

इसका गणपाठ क्रम देखने से यह स्पष्ट होता है कि यह प्राचीनतम निघण्टु है। इसी कारण से गुडूच्यादि वर्ग में शाकवर्ग के वनस्पतियों को, शतपुष्पादि में चारादियों को, चन्दनादि में गैरिकेत्यादि को, करवीरादि में मूलकादि कंदों को, आम्रादि फलवर्ग में मल्लिकादि पुष्पवर्ग को, सुवर्णादि धातु वर्ग में शाल्यादि धान्यवर्ग को कहा गया है। इस व्यतिरिक्त वनस्पतियों के भिन्न भिन्न भेद नहीं कहे गये हैं। जैसे—गुडुचा के साथ कन्दगुडूची का निर्देश करने पर भी 'अन्या' इस प्रकार भेद नहीं कहा है पर गुण भिन्न ही कहा है। 'त्रपुस' में 'कर्कटी' के पर्यायों का समावेश किया हुआ इसके अनुसरण से रचे गये राजनिघण्टु से देखा जाता है। त्रपुस में 'छर्द्यायनी मूत्रफला लता कर्कटिकाऽपि च' ऐसा होने पर भी राजनिघण्टु में "अथ कर्कटी कटुदला छर्द्यायनिका च पीनसा मूत्रफला" इत्यादि को कर्कटी वाचक कहकर गुण भिन्न ही कहा है पर धन्वन्तरि में त्रपुस के गुण मात्र ही कहे गये हैं इससे ये पर्याय त्रपुस के ही हैं ऐसा भ्रम उत्पन्न होना सम्भव है। इसी प्रकार किराततिक्त में—

कडर्य पिचु सन्दश्च निम्बोऽरिष्टो वरत्वच:।
छर्दिघ्नो हिङ्गुनिर्यास: प्रिय शालश्च पार्वत:॥

इस प्रकार कहकर पीछे नेपाल (निम्ब) का उल्लेख करके गुण किराततिक्त का कहते देखा जाता है। राजनिघण्टु में—

कैडर्योऽन्यो महानिम्बो रामणो रमणस्तथा।
गिरि निम्बो महारिष्य: शुक्लशाल: कफाह्वय:॥

इस प्रकार निम्ब भेद के रूप में कहकर गुण भिन्न कहा है। ये नाम धन्वन्तरि में किरात के पर्यायों में भूल से समाविष्ट हुआ होगा और गुण छूट गया होगा।

शालिपर्णी बिशेष के रूपसे आलकं पालकं इत्यादि पर्याय कहे गये हैं पर गुण नही कहा गया है। ये पर्याय या यह भेद अन्य निघन्टुओं में नहीं मिलता। इसी प्रकार पृष्ठिपर्णी विशेष के नामसे "सबानुकारिणी तन्बी दीर्घपर्णी च पर्णिका। कुमुदाऽतिगुहा चैव विषघ्नी सैव कीर्तिता॥" इस प्रकार कह कर भी गुण नही कहा गया है। राजनिघटु में ये ही पर्याय शालिपर्णी के लिये कहे गये हैं।

इस प्रकार अनेक जगह स्खलित पाठांतरों के देखने पर यह प्राचीन ग्रंथ है इसमें संदेह नही रहता। गुरु–शिष्य परंपरा में अनेक अंश लुप्त हुऐ होगे और जहां अशुद्ध समझकर परिष्कार किया गया वहां पाठांतर हुआ होगा।

(२) राजनिघन्टु—

यह ग्रंथ धन्वन्तरीय मदनादि हलायुधादीन्। विश्व प्रकाशामर कोष स शेषराजौ" इन ग्रंथोंके आधार से काश्मीर देश के नरहरी (नरसिंह) पंडित से रचा हुआ है। इसे निघन्टुराज अभिधान चूडामणि आदि नाम भी ग्रन्थ के अन्त में कहे गये हैं। अमरकोष स शेषराजौ इसे राजनिघन्टु के संपादकों द्वारा राजौ–भोजराज शेष राजौ' इस प्रकार टिप्पणी जोड़ा गया है। मेरे विचार में अमरकोष सशेष का अर्थ अमरकोष का शेष—त्रिकांडशेष और 'राजौ' इसका राज नामक अन्य दो कोष इस प्रकार हुआ होगा। अथबा सशेष–त्रिकांडशेष श्रीपुरुषोत्तम देव नृपति विरचित हुआ होने के कारण 'राजौ' का अर्थ इक त्रिकांडशेष और दूसरा भोजराज कोष इस प्रकार हुआ होगा। इसी 'प्रकार धन्वन्तरीय मदनानि' यहां मदनादि का अर्थ मदनपालादि' होगा इस प्रकार अनुमान संभव है। परन्तु राजनिघण्टुकार ने मदनपाल निघन्टु देखा था इसमें कोई आधार प्राप्त न होने के कारण 'मदनादि, यह गणपाठ के अनुसार रचा गया कोई निघण्टु होगा। क्योंकि राजनिघन्टु धन्वन्तरी का अनुसरण करते हुये उसी प्रकार पर उससे भी अधिक व्यवस्थित और क्रमबद्ध रचा गया है। यही नहीं उसमें धन्वन्तरी में या मदनपाल में अनिर्दिष्ट अनेक बनस्पतियों का उल्लेख हैं। इन्हें मदनादि गण निघन्टु से उद्धृत किया गया होगा क्योंकि अन्य निघन्टुओं से होता तो उनका नाम निर्देश किया जाता। जिन कोषों का निर्देश किया गया है उनमें भी इन वनस्पतियों का निर्देश न होने के कारण मदनादि को गणनिघण्टु ही मानना पड़ता है।

यह निघण्टु धन्वन्तरी के समान ही होने पर भी कहीं २ पर्यायों में घटाई बढ़ाई की गयी है! ब्राह्मी को धन्वन्तरी में ब्रह्मसुवर्चला कहा

हो तो राजनिघण्टु में सुवर्चला कहा है और धन्वन्तरी में सुवचला को कहा हुआ 'मडूकी' पर्याय ब्राह्मी को ही कहा गया है। इस गड़बड़ी के कारण ही मदनपाल भावप्रकाशों में ब्राह्मी और मण्डूकपर्णी तथा सुवर्चला और ब्रह्मसुवर्चला इन भेदों का उद्भव हुआ होगा। इसी प्रकार धन्वन्तरीय में "उदकीर्यस्तृतीयोन्य: षडग्रंथो हस्तिचारिणी। मदहस्तनिका रोही हस्तिरोहणक: प्रिय: ॥" और अङ्गारवल्ली शार्ङ्गेष्टा काकघ्नी काकभण्डिका। वायव्या कालिमका भेदा वाक्य वल्ल्यपि चोच्यते ॥ इस प्रकार कहे गये दो करंज भेद राजनिघन्टु में भूल से एक ही समझ कर "ज्ञेयो महाकरंजोन्य: षड्ग्रंथो हस्तिचारिणी उदुकीर्यो विषघ्नीच काकघ्नो मदहस्तिनी ॥ शार्ङ्गेष्टा मधुसत्ताऽवमर्दिनी ॥ हस्तिरोहणकश्चैव ज्ञेयो हस्तिकरञ्जक:। सुमन: काकभाण्डी च मदमत्तश्चपाडप ॥ इस प्रकार कहा गया है। पर उदकीर्य और अङ्गारवल्ली भिन्न २ वनस्पतियां है यह कैयदेव के आधार से भी देखा जा सकता है, कैयदेव में अङ्गारवल्ली को उत्तुण्डकी करंजिका कहा है इस लिये यह महाकरंज नहीं हो सकता। उदकीर्य ही महाकरञ्ज होगा यह स्पष्ट है।

(३) राजनिघण्टु सहित धन्वन्तरीय निघन्टु

यह उपर्युक्त दोनों निघण्टुओं को एकत्र करके श्री विनायक गणेश आपटे इनके द्वारा संग्रहीत निघन्टु है। इस प्रकार संग्रह करते समय राजनिघन्टु की कुछ वनस्पतियाँ छुट गईं हैं पर यह कोई महत्व का विषय नही है पर इसमें धन्वन्तरीय उदकीर्य के साथ राजनिघन्टु के प्रकीर्य पूतिकरञ्ज इन्हें मिलाया गया है जो ठीक नही लगता। क्योंकि धन्वन्तरीय में करञ्ज को पूतिकरञ्ज और घृतपर्ण को प्रकीर्य इस प्रकार कहे जाने के कारण उदकीर्य प्रकीर्य नही है। कैयदेव में भी प्रकीर्य को तो घृतपूर कहा है। पर उदकीर्य को पूतिपर्ण कहे जाने पर भी चिरबिल्व को धन्वन्तरीय के समान ही चिरविल्वक (करञ्ज) कहा है। इस लिये उदकीर्य का धन्वन्तरीय में हस्तरोहिणक कहे जाने के कारण यह महाकरञ्ज ही होगा प्रकीर्य नहीं हो सकता। इसी प्रकार धन्वन्तरीय में जलमुस्त को शैवालं यह पर्याय देखकर राजनिघण्टु के शैवाल को उसके साथ मिलाया गया है जो ठीक नही है क्योंकि शैवाल मुस्ता भेद नहीं है। इसी प्रकार मृगाक्षा (श्वेतपुष्पी) को विशाला बिशेष के नाम से महेन्द्रवारुणी के भेद के रूप में कह कर राजनिघन्टु की मृगाक्षी को अलग कहना भ्रांतिका कारण है। काकादनी को (उपविषम्) काकमाची विशेष कहने में आधार नही है। काकादनी को उपविष किसी ने भी नही कहा है। यही नही टिप्पणी में काकादनी शोधनं के रूप में गुंञ्जा शोधन बिधि का कहना तो भ्रांति का परमावधि हुआ। इन्होंने काकादनी के पर्याय काकपीलु, काकणन्ति, रक्तिका आदि देखकर इसे गुञ्जाभेद माना होगा। परन्तु काकमाची बिशेष कहना अथरहित है।

पर्याय कथन में भी इन्होंने गड़बड़ी की है। जैसे-चविका के पर्याय कहते हुये—'१-चव्यकं २-चविका ३-चव्यं ४-वशिरा ५-गन्धनाकुली।

६-वल्ली च ७-कोलवल्ली च ८-कोल ६-कुकर-मस्तकम् ॥ १०-तोदणा ११-करिकणा १२-वल्ली १३-कुकरो द्वादशाभिदा ॥ राजनिघण्टु ॥ यहां बारह नाम कहें गये है इस प्रकार उल्लेख होने पर भी इनकी संग्रह शैली में तेरह नाम होते हैं वल्ली शब्द का प्रथम ए उल्लेख होने के कारण पुनरुक्ति के रूप में पुनः वल्ली शब्द अलगलिखने कीं अपेक्षा वल्लीकुकर इस प्रकार लिखा होता तो संख्या ठीक होती। इसी प्रकार वर्णानुक्रमणिका में भी दो पर्यायों को एकसाथ और पर्यायों के साथ संख्यासंकेतों को भी मिला कर लिखा गया है। अद्रि भूक्षया यह पर्याय नही है पर आखुकर्णी के कहे गये पर्यायों की संख्या है। 'अनुकेसरोच्छटा–मुस्ता' यहां 'अनुकेसरा' 'उच्छटा' इस प्रकार दो पर्याय होना चाहिये। वार्ताकी के पर्याय के रूप में वर्णानुक्रमणिका में 'नृपप्रिय फलस्मृति' यहां नृपप्रियफल' यह पर्याय है और स्मृति शब्द अठारह संख्या का संकेत है। इस प्रकार इस निघन्टु में अनेक अशुद्धियां हैं।

(४) कैयदेव निघण्टु -

यह वैद्य विद्या विशारद कैयदेव द्वारा पथ्या पथ्य विबोधकः' नाम से रचा हुआ ग्रंथ है। इसमें औषधिवर्ग मात्र प्रसिद्ध हुआ है। अन्य भाग प्रसिद्ध नहीं हुए हैं यह ग्रन्थ किसकेआधार से रचा गया इसका उल्लेख नहीं हैं। परन्तु गुरु शिष्य परंपरा से अर्थात् पिता श्री शार्ङ्ग नामा भिषक् से प्राप्त ज्ञान से संग्रहीत किया हुआ होगा। इस ग्रन्थ में गुण कहते समय पत्र, पुष्प, फल, कंद, इत्यादि का भी गुण कहते देखा जाता है। इस व्यतिरिक्त पर्यायों में सुश्रुत से भी कई शब्द पाये जाते है। इसमें कहीं २ ऐसा भास होता है कि कुछ विषय छूट गया है हो। इसमें भी गुडूची के पर्यायों में पिण्डामृता, कन्दरोहिणी इत्यादि कन्द गुडूची के पर्यायों को अन्त्य चरण में कहने पर भी भिन्न रूप में नहीं कहे गये है। गुण भी भिन्न रूप से न कहे जाने के कारण जिन्हें कंद गुडूची के पर्यायों का परिचय नही है वे इन्हें गुडुची के ही पर्याय समझने का संभव है इस पर ऐसा अनुमान किया जा सकता है कि इनके काल में कंद गुडूची का व्यवहार कुछ होने के कारण परंपरा से नाम मात्र का निदेश करके गुण कथन अनावश्यक मानकर छोड़ दिया गया होगा। इसी प्रकार ब्राह्मी के पर्याय कहते हुए मन्डूकपर्णी मन्डूकी इस दो सुवर्चल के पर्यायों को जोड़ दिया गया है तो भी धन्वन्तरीय के समान ही ब्रह्मसुवर्चला कहा है। और यह ब्रह्मसुवर्चला शब्द ब्राह्मी का पर्याय है ऐसा मानने में यह आधार हुआ। ऐसा होते हुए पुनः सुवर्चला को और कहना ठीक जँचता क्योंकि धन्वन्तरीय या राजनिघण्टु में ब्रह्मसुवर्चला को ब्रह्मसुवर्चला नहीं कहा गया है। गुण कहते हुए 'अन्यातिक्ता, इत्यादि कहे जाने के कारण "अर्कपुष्पी च पृथ्वी का पार्थी ब्रह्मसुवर्चला" यह सुवर्चला के लिये कहा हुआ नहीं हैं पर उसके भेद के लिये है ऐसा मानना पड़ता है।

कारवेल्ल के कहे गये "काण्डीरं काण्डकटुकं सुकाण्डं कारवेल्लकं। उग्रकाण्डं कठिल्लं स्यान्नासा संवेदनः कटुः॥" ये पर्याय राजनिघण्टु के अनुसार करवेल्लके नही है पर काण्डीर नामक अन्य

वनस्पति के हैं । और जहां "जलकारवेल्लम्" ऐसा विभाग करके कारवल्ली करवल्ली शुषवी सुकुमारिका' इस प्रकार कहा गया है वहां ये पर्याय करवेल्लके ही होंगे । इस प्रकार इसमें भी अनेक अशुद्धियां है ।

इसके संग्रहकार्य में आयुर्वेदाचार्य प० सुरेन्द्रमोहन बी० ए० उन्होंने बड़ा परिश्रम करने पर भी उनसे अनेक प्रमाद किये गये देखे जाते हैं । मूल में ब्राह्मी के पर्याय या गुणों में भेद नही कहे जाने पर भी इन्होंने प्रचलित रीतिके अनुसार ब्राह्मी और मण्डूकपर्णी इस प्रकार दो भेद किया है । इसी प्रकार बाकुची और सामराजी इस प्रकार दो भेद किया है । पर्याय संग्रह में भी अनेक भूलें देखी जाती हैं । प्रियङ्गु में गन्ध प्रियङ्गुर्म हिलाकरंभावर्णभेदिनी" एसा कह कर महिलाकर–स्त्रीप्रिय, भावर्णभेदिनी–प्रभा और रंग देनेवाला इस प्रकार अर्थ लिखा है । पर यहां "गन्धप्रियङ्गु, महिला, करम्भा, वर्णभेदिनी" इस प्रकार होना चाहिये था वास्तुक के पर्याय कहते हुए 'शाकर्वाश्चन्द्रिलष्ट कवास्तक: (१) ऐसा कहकर 'कवास्तक' के विषय में निर्णय नही किया जा सका है । यहां "शाकवीर,चद्रिल' टङ्कवास्तुक" ऐसा कहना ठीक होता है । सू० सू० अ० २० ५ में उल्हण ने 'वास्तुकष्टंक बास्तुक:' इस प्रकार कहा है इससे वास्तुक को टङ्कवास्तुक कहते हैं इसमें आधार प्राप्त होता है । इसी प्रकार मारिष के गुण कहते हुए 'सरं ध्रवाष्पं (१) रुच्यं च हृद्यं कफकृमि प्रगुत' इसमें 'सरं भिन्न और ध्रवाष्पं भिन्न मानने से प्रश्न रूप में छोड़ने का प्रसंग उत्पन्न हुआ है । कैयदेव में मारिष भेदों के गुण कहते हुये रक्तवाष्प, हरितरक्तवर्ण, आम्लवाष्प इनके अनंतर कहा हुआ 'ध्रवाष्प' नही है पर 'सरन्ध्रवाष्प' है । इससे स्पष्ट है कि यदि विचार पूर्वक कहते तो यह गड़बड़ी उत्पन्न नही होती । इस प्रकार के प्रमादों के कारण दिनवंदिन निघण्टुज्ञान संकुचित होता जा रहा है ।

(५) मदनपाल या मदनविनोद

इसे मदनपाल नामक राजा ने 'मदन'विनोद नाम से रचा । इसके आधार ग्रंथों का उल्लेख नही किया गया है । पर कई निघण्टु बहुत छोटे हैं और कई बहुत बड़े इसलिये औषधि ज्ञान की सुविधा के लिये मध्यमाकारका निघण्टु तैयार किया गया हैं ऐसा उल्लेख है, इन्होंने किन निघण्टुओं का आधार लिया है यह देखना उपयुक्त है; हमारे साथ मदनपाल नामक, वैद्य पंचानन पण्डित रामप्रसाद इनकी हिन्दी टीका सहित एक निघण्टु और 'दूसरा मदनविनोद' नाम से आयुर्वेद मुख्याध्यापक त्र्यम्बक शास्त्री इनसे संग्रहीत मूल मात्र इस प्रकार दो निघण्टु हैं । इन दोनों की परस्पर तुलना करने पर मदन पाल में कई वनस्पतियां अधिक हैं (वे अन्य किसी निघण्टु में भी नहीं पायी जाती) पर अशुद्धियां बहुत हैं । दूसरे 'मदन विनोद' में जो शुद्ध है, मदनपाल की अनेक वनस्पतियों का उल्लेख क्यों नहीं है इसका कारण नहीं समझता,

मेरे विचार में मदनपाल ग्रंथ मूल में अशुद्ध हुआ होगा उसे शुद्ध करके त्र्यम्बक शास्त्री ने ही अधिक वनस्पतियों का उल्लेख अन्य निघण्टुओं में प्राप्त न होने के कारण छोड़ दिया होगा ।

अथवा उन्हें जो ग्रंथ प्राप्त हुआ उसमें उनका उल्लेख न होना भी सम्भव है।

इन दो ग्रंथों में पर्यायों में भी अन्तर देखा जाता है। मदनपाल में जहां "मेषशृङ्गी मेषवल्ली सप्तदंष्ट्राऽजशृङ्गिका। अन्या तु दक्षिणावर्ता वृश्चिकाली विषाणिका॥" इस प्रकार वर्णन है वहां मदन बिनोद में—

अजशृङ्गी मेषशृङ्गी सर्पदंष्ट्रा च कीर्तिता।
तिक्तदुग्धाऽक्षि भैषज्यं पुत्रश्रेणी विषाणिका॥
मता सा वृश्चिकालीति त्रपुसीमपरे जगुः।
उष्ट्री लोमशपुष्पा च धी वृत्ता घनशृङ्गिका॥
विषघ्ना पादवृत्तश्च कालो चक्षुष्य एव च।
वामा वर्ता विषहरी कालिका नेत्र भेषजा॥
सक्षीरा कर्कशा युग्मफला चोत्तरवाहिनी।
माषपर्ण्यलर्का रागा च मेषवल्ल तिकीर्तिता॥
द्वितीया दक्षिण वर्ता वृश्चिकाली विषाणिका।
अपरा वृश्चिकापत्री तथा चर्मक वृन्तिका॥
बदरा मेषपुष्पा च तथा आसुरपुष्पिका॥

इस प्रकार पर्याय कहकर मेषशृङ्गी के गुण नहीं कहे गये हैं।

(१) वृश्चिकाली के गुण—कासजिद्वातशमनी वृश्चिकाली विषापहा। इस प्रकार कहे गये हैं यह मदनपाल में नहीं है।

मदन विनोद के ये पर्याय मदनपाल कथित नहीं जान पड़ते क्योंकि उसका हेतु मध्यमाकार का निघण्टु रचना था और अन्यत्र इतने पर्याय न देखे जाने के कारण ये पर्याय किसी दूसरे से कहे हुये मानना पड़ता है। सभी पर्याय मेषशृङ्गी के योग्य हैं तो भी "मता सा वृश्चिकालीति त्रपुसीमपरे जगुः" यह भेद कहने पर भी पुनः द्वितीय दक्षिणावर्ता वृश्चिकाली विषाणिका' ऐसा कहना पुनरुक्ति सा जान पड़ता है। और पुनः 'अपरा वृश्चिका पत्री तथा चर्मकवृत्तिका' ऐसा कहने से यह कोई अन्य होने का अनुमान होता है। यही ये पर्याय वृश्चिकाली के न प्राप्त होने के कारण 'वृश्चिकापत्री' यह भिन्न ही होना दृढ़ होता है। पीछे से जोड़े जाने के कारण यह गड़बड़ी हुई होगी।

कैयदेव में और मदनपाल में बहुत साम्य है इससे विचार करने पर मदनपाल कैयदेव का ही संक्षिप्त रूप है ऐसा निर्धार किया जा सकता है। उदाहरण के लिये कैयदेव का—

मेदा मेदोद्भवा विद्यात् सुरमेदः समुद्भवा।
शाल्यपर्णी धराश्यामा मेदा पुरुषदन्तिका॥
मणिच्छिद्रा देवमणि र्मधुरा च सुछिद्रिका।
महामेदा वृत्तरुहा महापुरुष दन्तिका॥

यह वर्णन मदन बिनोद में—

मेदाज्ञेया शालिपर्णी दिव्या भेदोभवाऽध्वरा।
महामेदा वसुच्छिद्रा नृदन्त देवता मणिः॥

इस प्रकार संक्षेप किया गया है। मेदा, मेदोभवा, (सुरमेदसमुद्भवा छूट गया है) शाल्यपर्णी शालिपर्णी (म० नि०) शालपर्णी (म० पा०) यह मूल में शाल्यपर्णी होगी, 'धरा' को 'अध्वरा' (म० नि०) और धरा (म० पा०) कहा है और श्यामा, मेदा पुरुषदन्तिका' इन पर्यायों को छोड़कर दिव्या (म० बि०) वृष्या (म० पा०) यह नया पर्याय कहा गया है। यह पर्याय कैयदेव मूल का होना भी सम्भव है क्यों कि 'मेदा' शब्द दो बार कहे जाने के कारण उनमें एक 'दिव्या' होना सम्भव है। महामेदा—'मणिच्छिद्रा' और

और 'सुछिद्रिका' इन दोनों से बसुछिद्रा इस प्रकार देवमणि के बदले देवतामणि (म० वि०) देवतामणि (म० पा०) इस प्रकार कहकर मधुरा 'वृक्षरुहा' इन शब्दों को छोड़कर 'महापुरुष दन्तिका' का महा छोड़कर पुरुष के बदले 'नृ' और दन्तिका के बदले 'दन्ती' करके 'नृदन्ती' शब्द बनाकर मदन बिनोद में और 'त्रिदन्ता' इस शब्द से मदनपाल में पर्याय कहे गये हैं। गुण के सम्बन्ध में भी—

मेदाद्वयं हिमं स्वादु स्तन्य शुक्र बलासकृत।
वृंहणं वातपित्तास्र क्षतक्षय हरं गुरु॥
(कै० नि०)

मेदायुग्मं गुरु स्वादु वृष्यं स्तन्य कफावहम्।
वृंहणं शीतलं पित्त रक्तक्षय समीरनुत॥
(मदनविनोद)

इस प्रकार साम्य देखा जाता है। अन्य वनस्पतियों के संबंध में भी तुलना करने पर यही साम्य देखा जाता है।

'ब्राह्मी' का 'मण्डूकपर्णी' भेद इनके द्वारा ही कल्पित जान पड़ता है। ब्राह्मी के पर्यायों पर बिचार करने से—ब्राह्मी, सरस्वती; कै० प्रकार, सोमा—कैयदेव का ब्रह्मसोमा सत्याह्वा—कैयदेव में सत्यनामा, ब्रह्मचारिणी—कैयदेव में प्रकार मडूकपर्णी कै० नि० प्रकार, माण्डूकी कै० नि० में मण्डूकी, त्वाष्ट्री—कै० नि० प्रकार पर मदन पाल में त्वष्ट्री है, दिव्या महौषधा—कै० नि० प्रकार, कपोतवङ्का (भ० नि०) कपोतबटिका (म० पा०)—कैयदेव में कपोतवेगा मुनिका, लावण्या कै० नि० प्रकार, सोमवल्लरी—कै० नि० में सोमवल्ली, इस प्रकार कैयदेव का ही अनुसरण देखने से यह कैयदेव की ही प्रतिकृति जान पड़ती है। इन पर्यायों में मण्डूकपर्णी को ब्राह्मी भेद के रूप में नहीं कहा गया है। इतर पर्यायों के साथ ही कहा गया है पर गुण कहते हुए—

ब्राह्मी सरा हिमा स्वादुर्लघुर्मेध्या रसायनी।
स्वर्या स्मृतिप्रदा कुष्ठ पाण्डुमेहाऽस्रकासजित्॥
विष शोफ ज्वरहरा तद्वन्मण्डूक पर्णिनी।

मदन बिनोद और मदनपाल में "…तद्वन्मण्डूकपत्रिणी'। इत्यादि गुण कैयदेव के ही हैं पर 'तद्वन्मण्डूकपर्णिनी' यह मात्र मदनपाल नृपति के हाथ का है।

ब्राह्मी का मण्डूकपर्णी भेद पूर्व में नहीं था यह धन्वन्तरि, राजनिघण्टु, कैयदेव आदि से जाना जाता है। राजनिघण्टु में ब्राह्मीभेद जल ब्राह्मी कहने पर भी तद्वत् गुण का नहीं, और उसे मण्डूकपर्णी नहीं कहा गया है। ब्राह्मी के मण्डूकी, मण्डूक माता ये दो पर्याय राजनिघण्टु कार ने दिये हैं उसी प्रकार कैयदेव ने भी। यहां मण्डूकपर्णी, मण्डूकी इन्हें सुवर्चला के लिये न कहकर ब्राह्मी के लिये कहा गया है। चरक सुश्रुतों में मण्डूकपर्णी को शाकवर्ग में समावेश किया गया है पर ब्राह्मी को नहीं। सुश्रुत के शाक वर्ग में (सू० अ० ४६–२६२) मण्डूकपर्णी के साथ सुवर्चला का उल्लेख होने के कारण मण्डूकपर्णी सुवर्चला नहीं है यह कहा जा सकता है। पुनः सु० सू० ४६–२७४ में सुवर्चला का उल्लेख है पर गुण नहीं कहा गया है। सुश्रुत में मण्डूकपर्णी के गुण 'कषाया तु हिता पित्ते स्वादुपाक रसाहिमा। अध्वी मण्डूकपर्णी तु तद्वद्‌गोजिह्विका मता'॥ २६४ इस प्रकार कहा है और यह

कैयदेव के ब्राह्मी के समान ही है तो भी सुवर्चला के गुण देखने पर जैसे—'सुवर्चला हिमारुक्षा स्वादुपाका सरा गुरुः। अपित्तला पटुः क्षारा विष्कम्भकफवातजित्'। यह सुश्रुत के मण्डूकपर्णी के गुणों की छाया जैसा भास होता है। इस पर विद्वानों को विचार करना चाहिये। मदनविनोद में इसका गुण ब्राह्मी जैसा ही कहे जाने के कारण इसमें चर्चा का प्रयोजन नहीं है क्योंकि उन्हे अन्य गुण ज्ञात नही थे यह स्पष्ट है

इन्हें वनस्पतियों का ज्ञान ठीक नहीं था इस प्रकार के अनुमान को अवकाश है। क्यों कि कैयदेव में सुदर्शना नाम से वत्सादनी का उल्लेख हुआ है। यह राजनिघण्टु की पातालगरुडी ही है और टीकाकारों ने भिन्न अर्थ किया है तो भी वह ठीक नहीं लगता। कैयदेव में गुण संक्षेपतः कहे जाने के कारण राजनिघण्टु के गुणों के समान न दीखने पर भी यह वत्सादनी ही है इसमें संदेह नहीं है। परन्तु मदनपाल में सुदर्शना का उल्लेख किये जाने पर भी पुनः छिलिहिंठ नाम से वत्सादनी का उल्लेख है (मदनविनोद में सुदर्शना का उल्लेख नहीं है)। मदनपाल में सुदर्शना का गुण 'सुदर्शना स्वादुरुष्णा कफशोफास्रवातजित्' आदि कैयदेव के समान ही है। पुनः 'छिलिहिण्ठः परं वृष्यः श्लेष्मलः पवनापहः' ये गुण किस निघण्टु से लिये गये यह स्पष्ट न होने पर भी 'निघण्टु शिरोमणि' में राजनिघण्टु की वत्सादनी, कैयदेव की सुदर्शना, द्रव्यरत्नाकर की छिलहिंठ इन्हें एकत्र किया देखा जाता है और राजनिघन्टूक्त गुण कहने के अनन्तर 'उष्णाशोफकफार्शघ्नी वातहा' कैयदेवने। ग्राही वृष्या 'द्रव्यनाम्ने' कफघ्नी वायुहृत् 'नृपे'॥ कहा है इसमें पाठ अशुद्ध होने पर भी मदनपालकार ने छिलिहिंठ को द्रव्य रत्नाकर से लिया इस प्रकार अनुमान किया जा सकता है।

इस प्रकार मदननृपति ने अपने नाम से प्रसिद्ध किया हुआ यह ग्रन्थ कैयदेव का ही संक्षिप्त रूपांतर है और कहीं कहीं विपरीत अर्थ कहे जाने के कारण वनस्पतियों के विषय में भ्रम उत्पन्न होने का कारण बना है।

(६) भावप्रकाश निघण्टु—

यह भावमिश्रकृत निघण्टु बहुत प्रचार में है और कहीं २ पाठ्य पुस्तक के रूप में नियुक्त किया गया है। पर विद्वानों ने इसे ठीक तरह से नहीं देखा है ऐसा कहना पड़ता है। यह निघण्टु अधिकांश में मदनपाल, कैयदेव अमरकोषों के आधार से संग्रहीत हुआ है। अप्राप्त पर्यायों को अमरकोष से, गुणों को मदनपाल से उघृत करके मानों मूल को छिपाये रखने के लिये ही मदनपाल में अनिर्दिष्ट कैयदेव के गुणों का समावेश करके तैयार किया गया है, ऐसा करना तो दोष नहीं है पर कहीं २ एक का गुण दूसरों को ही कहा गया है जो अक्षम्य अपराध है। उदाहरण के लिये कैयदेव के 'अश्वकर्णः, कटुस्तिक्तः, इत्यादि गुण 'अजकर्ण कटुस्तिक्तः' इत्यादि रूप से एक का गुण दूसरे के साथ कहा गया है। कैयदेव के अजकर्ण के गुण—'सर्जः कषायो व्रणजित् कफस्वेद मलकृमीन्। वध्मं विद्रधिबाधिर्य योनिकर्ण रुजाहर॥' इत्यादि को अल्प हेर फेर से कहा गया है जैसे 'अश्वकर्णः कषायः स्याद् व्रण स्वेद कफकृमीन्। व्रध्न बिद्रधि बाधिर्य

योनिकर्ण गदान् हरेत् ।' इन दोनों की परस्पर तुलना करने पर ही अंतरंग स्पष्ट होता है, यदि ऐसा नही किया तो इन दोनों को भी भावप्रकाशकारों ने नये गुण कहे है ऐसा भास उत्पन्न होता है या निघण्टुओं में परस्पर अनेक्य है ऐसे भ्रम का कारण बनता है। इस पर कोई कहना संभव है कि भूल से ऐसा हुआ होगा, इस लिये और एक उदाहरण देना अवश्य है। गिरिकर्णी के पर्याय निघण्टुओं के आधार से न कहकर अमरकोष से आस्फोता गिरिकर्णीस्यात् विष्णुक्रांन्ताऽपराजिता' इस प्रकार कहने से ऐसा अर्थ हुआ कि गिरिकर्णी को विष्णुक्रान्ता कहते है। पर अन्य निघण्टुओं में इसे आधार नहीं है, अपराजिता यह एक पर्याय ही गिरिकर्णी के लिये है। अमरकोष में आस्फोता गिरिकर्णी स्यात्' ऐसा कहे जाने के कारण ये दो ही पर्याय गिरिकर्णी के है ऐसा मानना पड़ता है और पीछे के 'विष्णुक्रान्ताअपराजिता' ये विष्णुक्रान्ता शंखपुष्पी भेद के पर्याय है। आयुर्वेदीय निघण्टु ज्ञान के अभाव के कारण अमरकोष के टीकाकार भानुजी दीक्षित ने चत्वारि 'विष्णुक्रान्तायाः' स्वामीतु बासक पर्यायानिमान् मन्यते ॥' इस प्रकार कहा है, इसका अनुसरण करके इन्होने गिरकर्णी को बिष्णुक्रान्ता यह एक पर्याय भूल से अधिक कहा हो तो कोई विशेष नही है पर गुण कहते हुये कैयदेव के विष्णुक्रान्ता के गुणों का समावेश करके भारी भूल की है। जैसे --

'अपराजिते कटु मेध्ये शीते कण्ठ्ये सुदृष्टिदे।
कुष्ठमूत्रादि दोषामशोथव्रणविष पहे ॥
कषाये कटुके पाके तिक्ते च स्मृतिबुद्धिदे ॥ भा०

(१) गिरिकर्णी हिमातिक्ता ग्रहघ्नी कण्ठदृष्टिदा।
त्रिदोष शूलकुष्ठाम व्रणशोफ विषापहा ॥
कैयदेव

(२) विष्णुक्रान्ता कटुस्तिक्ता बुद्धिमेधास्मृतिप्रदा
कषाया कटुका पाके व्रणकृमिविषापहा ॥
कैयदेव

इन दोनों को एकत्र करके भावप्रकाशकार ने गिरिकर्णी के गुण तैयार किया है और त्रिदोषशूल कुष्ठाम' इसे कुष्ठमूत्रादि दोषाम' इस प्रकार बदल किया है, इस प्रकार के असंबद्ध ग्रन्थ को पाठ्यपुस्तक के रूप में नियुक्त किया तो आयुर्वेद को भगवान ही तारे ऐसा कहना पड़ता है।

(७) निघण्टु शिरोमणि—

वैद्य सिद्धेश्वर से संग्रहीत इस ग्रंथ को उसी की आज्ञा के अनुसार राघव कवि द्वारा छन्दोबद्ध किया गया है। राजनिघन्टु, धन्वन्तरि, कैयदेव, मदनपाल, भावप्रकाश, द्रव्यरत्नाकर और गणनिघन्टु इन्हें एकत्र संग्रहीत कर किया हुआ प्रयत्न स्तुत्य है। परन्तु संग्रहकार से ही ग्रंथ छन्दोबद्ध न किये जाने के कारण पर्यायों के अनन्तर कहे गये आधार ग्रंथों के नामों में हेर-फेर हुआ है। निघन्टुओंकी बनस्पतियों को दूसरे निघन्टुओं से पर्यायों को जोड़ना उसके ज्ञान के बिना साध्य नहीं होता। निघन्टुओं की वनस्पतियों का ज्ञान उस समय ही लुप्त हुआ था यह इस ग्रथ के संदिग्धताओं से जाना जा सकता है। इस लिये संग्रह करते समय कुछ भूलें हुइ होंगी, इसमें संग्रहीत पर्यायो में अनेक पर्याय अशुद्ध मुद्रित हुये मूल निघन्टुओं से देखा जा सकता है

सोम

आयुर्वेद म० म० श्री पं० विश्वेश्वरदयालु जी वैद्यराज
प्रधान सम्पादक—अनुभूत योगमाला

आजकल सोम आयुर्वेद जगत की बहु चर्चित बूटी बनी हुई है। सोमलता को इस लेख में मान्यवर वैद्यराज जी ने अधिक नहीं प्रकाशित किया है। वैसे संक्षिप्ततः सभी पहलुओं पर विवेचन कर सोमलता एवं सोमकल्प (एफेड्रा) का सर्वांगपूर्ण विवेचनकर चिकित्सकों के लिये उपयोगी सामग्री प्रस्तुत की है। लेख उपादेय है।

—ज्ञानेन्द्र पाण्डेय



सोम आयुर्वेद की उत्कृष्टतम औषधि होने पर भी आज कई कारणों से इतनी संदिग्ध एवं अप्राप्य हो रही है कि—सिवाय उसकें गुणगाथा के हम कुछ भी नहीं कह सकते। यदि हम सोम शब्द पर बिचार करें तो हमें कोषकार बतलाते हैं—

सोम बसुप्रभेदेकर्पूरे सोमलतौषधी। हिम दीधतौ इति मेदिनी।

हमें सोमलता पर ही बिचार करना है—

पुराणों के मत से समुद्र मन्थन के समय अमृत की उत्पत्ति हुई जिसे देवताओं ने ग्रहण किया फिर इसके तीन भाग हुये। पीयूष, सुधा, अमृत, पीयूष को देवता लेगये और सुधा दानव लोग पाताल में ले गये और अमृत से सोमलता नामक वनस्पति मनुष्यों के लिये पृथ्वी पर पैदा हुआ।

ब्रह्मादयोऽसृजन् पूर्वममृतं सोमसंज्ञितम्।
जरामृत्युबिनाशाय विधानं तस्य बक्ष्यते॥
औषधीनामपतिं सोममुपभुज्यबिचक्षणः।
दशवर्षसहस्राणि नवां धारयते तनुम्॥

ब्रह्मा जी ने जरा मृत्युनाशार्थ इस सोम की सृष्टि की थी इसके सेवन से दशहजार वर्ष की आयु होती है।

नाग्निर्न तोयं न विषं न शस्त्रं न स्रमेव च।
तस्यालमायुः क्षपणे समथाश्च भवन्ति हि॥

सु० चि० अ० ३०

इसके सेवन करने वाले को न तो अग्नि जला सकती है, न जल डुबो सकता, अस्त्र और

शस्त्र उसे मारने में समर्थ नहीं होते एसी अद्‌भुत दवा की बिलोप हम लोगों के अभाग्य का ही कारण हुआ कुछ तो गोप्यप्रथा के कारण औषधियों की पहिचान लुप्त हो गई कुछ हम लोगों ने अधर्म का अधिक आश्रय ले लिया इससे दीर्घायुषत्व नष्ट हो गया और औषधि लुप्त हो गई कुछ हमारे प्रमाद और आलस्य से खोज करना लोप हो गया और ऐसी महत्वपूर्ण औषधि की दुष्प्राप्यता हो गई।

न पश्यन्त्यधर्मिष्ठाः कृतघ्नाश्चापिमानवाः।
भेषजद्वेषिणश्चापि ब्राह्मणद्वेषिणस्तथा॥

इस सोम को अधर्मी, कृतघ्नी, औषधद्रोही, ब्राह्मण द्रोही देख नहीं सके, पास में भी औषधी होने पर दिखाई नहीं देगी। यह भी प्रवल कारण न मिलने का है।

पहिचान

सर्व एवतुविज्ञेयाः सोमाः पंचदशच्छदाः।
क्षीर कंदलतावन्तः पत्रैर्नानाविधैः स्मृताः॥
सर्वेषामेव सोमानां पत्राणिदशपञ्च च।
तानि शुक्लेच कृष्णेच जायन्ते निपतन्तिच॥

समस्त प्रकार के साम की पहिचान यह है कि इनमें १५ पत्ते होते हैं इनमें दुग्ध कंद, लता वाले होते हैं पत्ते अनेक तरह के होते हैं परन्तु सभी सामों में पत्ते १५ पंद्रह ही होते हैं यह ध्यान में रखना चाहिये।

इनकी २४ जातियां होती हैं

१ अंशुमान, २ मुंजवान ३ चंद्रमा, ४ रजतप्रभा, ५ दूर्वासोम, ६ श्वेताक्ष, ७ कनकप्रभा, ८ प्रतानवान्, ९ तालवृन्त, १० करवीर, ११ अंशुवान, १२ स्वयंप्रभा, १३ महासोम १४ गरुडाहृत, १५ गायत्र्य; १६ त्रैष्टुभ, १७ पांक्त, १८ जागतः, १९ शांकर, २० अग्निष्टोम, २१ रैवत, २२ कनीयान, २३ त्रिपद, २४ उडुपति यह २४ हैं।

१—अंशुमान का कंद घृत के समान गंध वाला होता है, २—रजतप्रभ केले के कंद जैसा कंद वाला होता है, ३—मुंजवान के पत्ते लहशन के समान होते हैं, ४—चंद्रमा सुवर्ण के समान होता है और जल पर तैरता रहता है, गरुडाहृत और श्वेताक्ष पाण्डुर वर्ण का होता है और पेड़ों पर सांप की कुचली जैसा लटकता रहता है अन्य सभी सोम बिचित्र मंडलों से युक्त होते है।

उत्पत्ति स्थान

हिमालय, अर्बुद (आबू) सह्य, महेन्द्राचल मलय, श्रीपर्वत, देवगिरि, देवसह, परियात्र, विन्ध्याचल, देवसुन्द नाम के तालाब में—उत्तर में फैलेहुये पांच पहाड़ों के मध्य से निकली हुई सिन्ध नदी में जलकुम्भी (जलमंजरी) की तरह तैरता हुवा चन्द्रमा नामक सोम रहता है उसी के पास मुंजवान, अंशुमान नामक सोम रहता है। काशमीर में एक छोटा मानसरोवर नाम का तालाब है ऊसके आसपास या उसी में गायत्र्य चैष्टुभ, पांक्त, जागत, शांकर नाम के सोम होते हैं। यह सब सभेद रंग के (चद्रमा के समान कांतिबाले) होते हैं।

काशमीर निवासियों को और इधर के बैद्यों को वहां जाकर ढूंढ़ना चाहिये और पता लगा इसका प्रचार कर आयुर्बेद की कीर्तिको बढ़ाना

चाहिये आयुर्वेद में पड़े २ काम नहीं चलेगा खोज करने का समय आपका है खोज करें-

उदार महार्षियों ने सोम के न मिलने पर उनके प्रतिनिधी द्रव्यों (बनस्पतियों) की खोज करके मनुष्यों के उपकारार्थ लिख दिया है कि यह भी सोम के समान गुण वाली है।

सोमसम वीर्या महोषधयो ख्याता:। तासां सोमवत क्रियाशी:।

१–श्वेत का पोती २–कृष्ण का पोती ३–गोनसी ४–अजगरो, ५–वाराहो, ६–कन्या,७–छत्रा,८–अतिछत्रा, ९-करेणु, १०–अजा, ११–चक्रका, १२-आदित्य पर्णनी, १३–सुवर्चला श्रावणी, १५–महाश्रावणी, १६–गोलोमी, १७–चाजलोमी, १८–महावेगवती, यह १८ हैं॥

प्राप्ति स्थान

देवसुन्द नामक तालाब में सुवर्चला मिलती है। आदित्य पर्णनी वहीं बसंत ऋतु में मिलती है। अजगरी और गोनसी (मंडली सर्प जैसी वर्षा ऋतु में मिलती है और काशमीर के लघु मानसरोवर में – करेणु, कन्या, छत्रा, अतिच्छत्रा, गोलोमी; अजलोमी, महाश्रावणी, भी वर्षा ऋतु में मिलती है। गोनसी कृष्णसर्प जैसी वसंत में भी मिलती है।

कौशिकी (विहार प्रान्तीय नदी) के उस पार तीन योजन की वांबीयो वाली जगह है वहां पर कापोती श्वेतवर्ण की उन वांबीयों (बिलों) के ऊपर मिलती है।

मलय और नबसेतु (सेतवन्धु रामेश्वर) में वेगवतीमिलती है।

सोम (सोमनाथ) अर्बुद(आबू गिरनार) बादलों से छूने वाले, देवताओं के निवास वाले पहाड़ों की चोटियों पर जहां तीर्थ हो, सिद्ध ऋषि रहते हों, सिंहो से विनादित गुफाओं में हाथियों के लोटने वाली नदियों के किनारों पर धातुओं की खानों पर ढूढना चाहिये यही नहीं यह सर्वत्र मिल सक्ती है, कारण रत्नगर्भा वसुन्धरा होती है।

विशिष्ट पहिचान

विचित्र मंडलों वाली कपिल (दीपशिखा वत) रात्रि में उजेला देने वाली चमकदार सोम के समान आकृति वाली पांच पत्ती वाली पांच मुट्ठी बांधे हाथों वाली लम्बी अजगरी होती है (मैंने ब्रह्मपुत्र नदी के किनारे पहाड़ से चिपटी हुई एक बालिस्त चौड़ी जड़ी को देखा था कामाख्या में इसके पत्ते बीच में वड़े ० होते हैं पर होता एक ही बीच में हैं देखने में रोमश पिंगल होती है। बिना पत्ते की स्वर्ण के रंग की दो अंगुल की सर्पाकार लाल मूल वाली श्वेतकापोती होती है। दो पत्तों वाली मूल वाली लाल और काले मंडलों वाली द्वे अरत्नि ऊंची गोनसी होती है। दूध वाली, रोमयुक्त मुलायम, गन्ने के समान मधुर रस वाली कृष्ण कपोती होती हैं। काले सांप की तरह के कंद वाली वाराही होती है यह एक पत्ते वाली काले रंग की होती है। छत्रा, अतिच्छत्रा कंद वाली होती है यह जरा मरण नाशक श्वेत कपोता की तरह होती है। चमकदार बारह पत्तों वाली मोर के रोम वाली कन्द देने वाली पीत दुग्ध वाली कन्या नामक महोषधि होती है। करेणु नामक जड़ी बहुत

दुग्ध वाली कंद हाथी जैसा बड़ा होता है हस्तिकर्ण पलास के समान दो पत्तों वाली होती है। बकरी के स्तन के आकार वाले कंद वाली दूध वालीं यह क्षुप रूपा अजा नामक महौषधि होती हैं यह शंख, कुन्द के समान श्वेत होती है। चक्रिका नामक ओषधी सफेद विचित्र फूलों वाली, काली मकोय के समान क्षुपवाली होती हैं। लाल रंग के कोमल पांच पत्तों वाली सूय के उदय होने पर खिलने वाली होती हैं। इसे आदित्यपर्णिन कहते हैं। सुवर्ण कांतिवाली पानी पर तैरने वाली दुग्ध वाली कमल जैसी ब्रह्म सुबर्चला होता है। एक अरत्नि मात्र ऊंचा क्षुप दो अगुल के पत्तों बाली नीले कमल जैसे पुष्प फल वाले एसा महा श्रावणी होता है सुवर्ण रंग के दूध वाली होती है। श्रावणी पाण्डुबर्ण की महा श्रावणी के लक्षणों युक्त होती है। गोलोमी अजलोमी के कंद रोमयुक्त होते हैं, और हंसपदी के समान पत्र होते हैं या शंख पुष्पा जैसी लता होती है सांप की कंचुली के समान इधर-उधर घूमने वाली वेगवती होती है यह शरद ऋतु में प्राप्त होती हैं।

अगर किसी को मिल जाय तो इस मन्त्र से उखाड़ कर ग्रहण करलें।

महेन्द्र रामकृष्णानां ब्राह्मणानां गवामपि।
तपसा तेजसा वापि प्रशाम्यध्वं शिवाय वै ॥

ढ़ूंढ़िये और पता लगाइये अवश्य कोई न कोई सोम मिल जावेगा यह सर्वत्र भी होते हैं। अवश्य मिलेंगे कहा भी है—

नदीसु शैलेषु सरः सु चापि,
पुण्येस्वरण्येषु तथाश्रमेषु।
सर्वत्रसर्वाः परिमार्गितव्याः,
सर्वत्रभूमिर्हि वसूनि धत्ते ॥

नदी, पहाड़, तालाबों के किनारे प्रसिद्ध पवित्र वनों में आश्रमों में, सब स्थानों पर ढूढो मिल जावेंगे। पृथ्वी सब जगह बसुओंको रखती है। कारण यह रत्न गर्भा भूमि है, अतः पता नहीं कहां क्या है।

स्थान विमर्श

ऊपर जिन २ स्थानों का वर्णन आया है उन२ को हम अपने अध्ययन के अनुसार बतलाते हैं हिमालय आबू प्रसिद्ध है। सह्य उस पहाड़ का नाम है जहां से तुङ्गभद्रा, गोदावरी, कृष्णवेतवा (वेतवा) नदियां निकली हैं महेन्द्रबास उत्तम पहाड़ों के मध्य आने वाला है। मलय मैसूर का पहाड़ है जहां सफेद चन्दन मिलता है। श्रीपर्वत यह सुमेरु के उत्तर में है. देवगिरि इसे कैलाश कहते है यह सुमेर के उत्तर में है। एसा मार्कण्डेय पुराण कहता है देवसह, परिपात्र यह सुमेर के पश्चिम में हैं। देवसुन्द एक तालाब है इसका वर्णन श्रीपर्वत पर ही माना है।

श्रीपर्वते महादेवो देव्यासह महाद्युतिः।
न्यवसतपरमप्रीतो ब्रह्मा च त्रिदशैःसह ॥
तत्र देवह्रदेस्नात्वा शुचिः प्रियतमानसाः।
अश्वमेधमवाप्नोति परां सिद्धिंच गच्छति॥

महा० वन पर्व अ० ८५

वैदिक सोम

पाठक हैरान हो गये होंगे सोम की प्राचीन कहानी सुनकर उन्हें हम वेदों की तरफ से हर्षित करने का प्रयत्न करेंगे वेदपाठी महर्षियों

को जब सोम मिलने में कठिनता होने लगी तब उन्होंने एक अनोखे सोमपान की कल्पना की वृहदारण्योपनिषद् में इसका विधान आया है उन्होंने इस बने हुये अभिमन्त्रित सोम के विषय में लिखा है कि यदि सूखे वृक्ष पर इसे डाल दिया जावे तो वह हरा हो जावेगा। इसी प्रकार जीर्ण, शीर्ण निर्वल बली पलितयुक्त पुरुष इस सोम के पान से वलवान, बुद्धिवान, आयुष्यमान होता है इसका बिधान निम्न है जिन्हें विशेष देखना हो वह वृहदारण्योपनिषद् में देखलें लेख बढ़ने के भय से हम संक्षेप में ही प्रकाश डालते हैं।

जब सूर्य उत्तरायण हो तब सुन्दर शुक्लपक्ष में उत्तम दिन, तिथि शुभ चन्द्र अपने को देखकर इस अनुष्ठान में प्रवृत्त हों—

प्रथम १२ दिन सिर्फ दुग्धाहार पर ही रहें दिन में ३–४ बार रुचि अनुसार दुग्ध थोड़ा २ पीवें १३ वें दिन हस्त नक्षत्र में गूलर (औदुम्बर) की हरी मोटी डाल काटकर उसे कोलकर उखली नुमा पात्र बनवालें इसी की रई (मंथानो) भी बनावें इसमें व्रीही (साठी, जौ, तिल, चना, उर्द, कंगुनी, गेहूँ, मसूर, मटर, कुलथी यह दस वस्तुएँ व्रीही कहलाती हैं) को महीन पीस लें दूध में और पात्र में डाल दें ऊपर से दही, घृत, मधु, मिलाकर मथानी से मथें और ढांककर रखलें। पृथ्वी को शुद्ध कर लीपकर अग्नि स्थापित करें। उस अग्नि के चारों तरफ कुश बिछावें कुशों के अग्रभाग पूर्व या उत्तर की तरफ हों घृत को शुद्ध कर हस्त नक्षत्र में गूलर के स्रुवे से निम्न मन्त्रों से हवन करें।

यावन्तो देवास्त्वयि जातवेदीस्तर्यं
चोघ्नंति पुरुषस्य कामान् ।
तेभ्योहं भागधेयं जुहोमितेमातप्ताः
सर्वैः कामैस्तर्पयन्तु स्वाहा ॥

यातिरश्ची निपद्यतेऽहं विधरणी इति ।

तात्वा घृतस्य धारया यजे सँ राजनीयमहँ स्वाहा ॥

ज्येष्ठाय स्वाहा ॥ प्रत्येक बार घृत हवन स्रुवे से करें और स्रुवे में लगे घृत को मन्थ में टपकाते रहें।

प्राणाय स्वाहा। बर्चे स्वाहा। चक्षुषे स्वाहा। स्रोताय स्वाहा। मनसे स्वाहा। रेतसे स्वाहा। अग्नये स्वाहा। सोमाय स्वाहा। भूः स्वाहा। भुवः स्वाहा। स्वतः स्वाहा। भूर्भुवः स्वाहा। ब्रह्मणे स्वाहा। क्षत्राय स्वाहा। भूताय स्वाहा। भविष्यते स्वाहा। विश्वाय स्वाहा। सर्वाय स्वाहा प्रजापतये स्वाहा। श्रेष्ठाय स्वाहा। वशिष्ठायस्वाहा सम्पदे स्वाहा। आयतनाय स्वाहा। प्रजापत्यै स्वाहा।

बार २ स्रुवे से घृत डालकर फिर मन्थ को मथें और निम्न मन्त्र पढ़ते हुये मंथ को हाथों से स्पर्श करें।

भ्रमदसि ज्वलदसि पूर्णमसि प्रस्तब्धमस्येकसममसि हिं क्रियमाणमस्युद्गीथ मस्युद्गीयमानमसि श्रावितमसि प्रत्याश्रवितमस्यार्द्रे संदीप्तमसि विभुरसि प्रभूरस्यन्नमसि ज्योतिरसि निधनमसि संवर्गोऽसीति।

फिर मन्थ को चमस सहित हाथ में लेकर निम्न मन्त्र पढें।

अथैनमुद्यच्छत्यार्यँ स्यामँ हिते महि सहि राजेशान्योऽधिपतिः सभाँ राजेशानोधिपतिं करोत्विति।

फिर चार ग्रास निकास अलग २ रखें और निम्न मंत्रों को पढ़कर भक्षण करते जांय।

१—तत्सवितुर्वरेण्यो मधुवाताऋतायते मधुक्षरन्ति सिन्धव: माध्वीर्न: सन्त्योषधी:। भू: स्वाहा।

२—भर्गोदेवस्यधीमहि मधुनक्तमुतोषसो मधुमत् पार्थिवँ रज: मधुद्यौरस्तुन: पिता। भुव: स्वाहा।

३—धियो योन: प्रचोदयात्। मधुमान्नोवनस्पतिर्मधुमाँ अस्तुसूर्य:। माध्वीर्गावाभवन्तुन:। स्व: स्वाहेति।

४—तत्सवितुर्वरेण्यं भर्गोदेवस्य धीमहिधियोयोन: प्रचोदयात्।

मधुवाता मधुनक्त मधुमान्नो अहमेवेदँ सर्वभूयासं भूर्भुव: स्वाहा॥

बाद के बचे हुये मन्थ को आद्यन्तपीकर आचमनादि कर रात्रि को अग्नि से पश्चिम पूर्व शिर कर सो रहें। प्रात: सन्ध्या वन्दन कर सूर्य की तरफ देखता हुआ यह मन्त्र पढ़े।

दिशामेकपुण्डरीकमस्यहं मनुष्याणामेक पुण्डरीकं भूयासम्।

यह मन्त्र पढ़ अग्नि के पश्चिम तरफ बैठ कर ईश्वर का ध्यान करे या गायत्री जप करे।

सोम कल्पलता

पंजाब में—असमानिया, बुदसुर बुतसुर, चेवा, केवा, अफगानिस्तान में—हुमदुमा, सतलज में—फाक राजस्थानमें—फोग लेटिन—(Ephoara pachyclada ephedragarar diana

यह एक प्रकार का कठोर गठा हुआ पौधा होता है बड़े पत्थर में लिपटी हुई शाख में खड़ी चिकनी फूल गोलाकार फैले हुये फल गोल लाल मीठे होते है। खींपवर्ग का पैधा होता है यह हिमालय अफगानिस्तान, चीन, पश्चिमी मध्य एशिया पूर्वीफारस यूरोप, हिमालय, पर ८००० फीट से १४०००फीट की ऊंचाई तक मिलती है मैंने राजस्थान में रतनगढ़ से सरदार शहर (बीकानेर) में इसे देखा है वहां के लोग इसे फोग कहते हैं।

आयुर्वेद यूनानी में इसका वर्णन नहीं है इण्डिन मेडीकल प्लाण्टस के निर्माता के मत से इसकी जड़ और लकड़ी का काथ रूस में आम वात और फिरंग रोग में दिया जाता है। इसके फलों का रस श्वास क्रिया प्रणाली के रोगों में व्यवहृत होताहै। चीनमें इसकी पतली शाखायें ज्वर निवारक मानी जाती है

आधुनिक अन्वेषकों ने इसके बहुत गुण प्राप्त किये हैं कर्नल चौपडा के मतको यहां दिखाते हैं—इसके अन्दर जो उपक्षार प्राप्त होता है उसे एफीड्राइन (Ephedrine) कहते हैं प्रोफेसर बी० ई० रीडन लिखताहै यह पदार्थ चीनमें गत ५००० वर्षों से कार्य में लिया जाता है। यह एक मात्र चीन में ही नहीं पैदा होती है भारत में हिमालय के शुष्क प्रान्तों में भी इस जाति की बनिस्पतियां पैदा होती हैं।

एफीड्राकी एक और जाति है जिसे एफीड्रा इन्टर मीडिया कहते हैं इसे सोम वृक्ष ही मानते हैं पर सोम के विषय में पूर्ण प्रमांण नहीं मिलते एफीड्राइन का मूल्य ६००) पर पौन्ड है इससे मिलता जुलता एक और स्यूडो इफीड्राइन (Pseudo Ephidrine) का परीक्षण किया

गया सन् १९२६ में, यह मूल्य में सस्ता होता है। इसकी तीन जातियों का पता लगा कर सन्१९६० में मिस्टर बाट ने कहा है कि १ एफीड्राबल गेरियस जिसे एफीड्रा गिरार डीआना Gerardiana और एफीड्रा डिस्टच्या (E. Distachya) और एफीड्र मोनोस्टचया E. Monostachya भी कहते हैं।

२—एफेड्रा पचीक्लेडा E. Pachycloda और एफेड्रा इण्टरमीडिया E. Intermedia के नाम से प्रसिद्ध है। इसे फारस में हुमर बम्बई में गेमा और पश्तो में ओमान कहते हैं।

३—एफेड्रा पेडनक्यूलरिस (E. Pedunculoris) जिसे भारतीय भाषाओं में कुचन नौकीकुरकर, त्राटा, टेडला, लस्तुक, मंगखल और बादूरी कहते हैं।

उपरोक्त तीन जातियों के अलावा दो और भा जातियां मिलती हैं।

एफीड्रा फोलियेटा (E. Foliata) और एफीड्रा फ्रेगलिस (E. Fragilis) ये दोनों जातियां उपरोक्त तीनों जातियों से कम महत्व की है।

ये सभी जातियां भारत के बिभिन्न भागों में पैदा होती हैं विभिन्न स्थानों के एफीड्राओं का विश्लेषण करने पर मालूम हुआ है कि भारत के उत्तर पश्चिम शुष्क स्थानों से प्राप्त एफीड्रीना में चीन की एफीड्रा की अपेक्षा क्षार की मात्रा अधिक होती है।

सन् १९२९ में कर्नल चोपड़ा ने झेलम प्रान्त की पहाड़ियों पर पैदा होने वाली दो जातियों का वर्णन किया है। इनमें उपक्षार अधिक मिलता है।

१—एफीडा अलगेरियस और एफीड्रा गिरार डियाना है इनके क्षारों का अनुपात ०८ से १०४ प्रतिशत तक है, इनमें करीब आधा एफीड्राइन और बाकी स्यूडो एफीड्रायन है। वनों से हरी डालियों में चौगुना उपक्षार मिलता है।

२—दूसरी जाति एफीड्राइन इण्टरमेडिया है इसके अन्दर २ से १ प्रतिशत तक उपक्षार पाया जाता है बाकी का स्यूडियों एफीड्राइन होता है।

स्यूडो एफीड्राइन और एफीड्राइन दोनों समानधर्मी होते हैं यह यकृत आंत्र की क्रियाओं पर असर करते हैं और रक्तवाहिनियों का संकोच मूत्राशय, मांसपेशियो के ऊपर भी दोनों क्षारों का असर एक जैसा ही होता है पर श्वास क्रिया पर स्यूडो से एफीड्राइन का असर जोरदार होता है।

भारत में पैदा होंने वाले एफीड्रा में स्यूडो एफीड्राइन की ही मात्रा अधिक होती है। यह एफीड्राइन के स्थान पर स्यूडो का असर कहां तक कारगर होता है।

कलकत्ता स्कूल आफ ट्रापिकल मेडिसिन्स ने श्वास के रोगियों पर एफीड्राइन का प्रयोग किया यह १५ से ३० मिनट के अन्दर श्वास बेग को तो रोक कर उप द्रवों को दूर कर देता है। किन्तु इससे हृदय की पीड़ा १०-५ मिनट तक रहती है हृदय रोगियों के लिये इसका प्रयोग हानि कर होता है। इसका विशेष उपयोग कब्जियत की शिकायत पैदा करता है कभी २ श्वास का प्रकोप बढ़जाता है भूंख नष्ट हो जाती है। अतः इसका अधिक प्रयोग और आदत डालना हानिकर होती है।

स्यूडो एफीड्राइन का असर भी श्वास नली पर एफीड्राइन के समान ही होता है इसकी आधे ग्रेन की मात्रा ने १५ मिनट से आध घंटे में सीने की पीड़ा दूर कर श्वास को ठीक हालत में लादिया। स्यूडो सस्ता होने पर भी एफीड्राइन से उत्तम गुण कारी और दोष रहित होता है।

इन उपचारों का असर रक्त चाव (ब्लडप्रेशर) पर भी अधिक होता है, हृदय को उत्तेजना देती है एफीड्राइन का असर हृदय अवसादक होता है, स्यूडोएफीड्राइन हृदय की पेशियों को उत्तेजना देता है यदि दोनों मिलाकर दिये जांय तो असर उत्तम रहता है। हृदय की कमजोरी पर ब्लडप्रेसर पर रक्त अभिसरण से मूत्र प्रणाली पर दवाव होने पर भी इसका उपयोग ठीक रहा।

जलोदर में हृदय रोग के कारण पैदा हुई पेट की सूजन पर हृदय की धड़कन पर जहां डीजीटेलिस भी फैल हो गया था वहां पर इसका चमत्कारिक प्रभाव होता है, वायें हृदय की गति रोध में भी एफीड्रा के अर्क से लाभ हुआ। न्यूमोनिया के कारण जो हृदय पर विषैलाप्रभाव पड़ता है वहीं पर और रोहिणी (डिप्थेरिया) पर भी अर्क का उपयोग सद्यलाभ प्रद रहा। अर्क की मात्रा आधा ड्राम (१॥ मासे) यह दिन में ३–४ बार दिया जाना चाहिये। उपरोक्त विवरण से साफ हो गया कि यह भारत की बहुमूल्य वनिस्पति है और इसका सत्व एवं अर्क श्वासरोग, हृदयरोग, जलोदर, डिप्थेरिया; निमोनिया पर चमत्कारक असर दिखाता है।

पोर बन्दर के प्रसिद्ध बनस्पति शास्त्री जयकृष्ण इन्दु जी लिखते हैं कि—सुश्रुत के मतानुसार सिन्धु नदी का प्रदेश पञ्जाब, सिन्ध, कच्छ ही माना जा सकता है कच्छ में आक (मदार) के वर्ग की दो वनस्पतियां पैदा होती हैं यदि इनकी जांच कर इनके प्रयोग किये जांय तो यह २४ जाति वाले सोमों में अवश्य कोई नकोई हो सकती है। इन दो में एक को सोम वेल (Sarcostemma bravistigma) इसकी लताएँ खुरासानी थूहर के समान होती हैं इसमें जगह २ जोड़ (सन्धियां) होती हैं इनके अन्दर दूधिया रस भरा रहता है इसके ऊपर सफेद रंग के छोटे २ फूलों के गुच्छे होते हैं फलियां लगती हैं जो लम्बी और पतली होती हैं। गुण में—मादक रसायन और शोथ, दाह ज्वर, कफ नष्ट करता है।

दूसरी बनस्पति दुधाचीखीप (Periplo caapheylla) भी सोमवल्ली से मिलती जुलती है इसके पौधे ३ से ५ फीट ऊँचे बहुशाखी होते हैं, इसकी डालियों में दूध भरा पहता है। इसमें कभी २ पत्ते होते हैं कभी २ नहीं जो पत्ते होते हैं वे मोटे ढोकले के समान नोकदार और बिना नसों के होते हैं कभी २ ऐसा भी देखने में आया कि इस झाड़ के पत्ते २–४ दिन में एक साथ पीले पड़ कर झड़ जाते हैं।

सोम कल्पलता

यह नाम सिर्फ बंगालियों का है हिन्दी व पंजावी में आम साभा–वतशूर या चेवा कहते हैं वंगाली में सोम कल्पलता कहते हैं। यह पत्ते बिहीन सींकों वाला क्षुप है इसके कई भेद हमने देखे हैं उत्तर भारत में इसीकी एक जाति को खींप कहते हैं। राजस्थान में फोंग कहते हैं।

यह श्वास के लिये उत्तम दवा है अंग्रेजी में सूडो एफ्रीडीन (Pseaudo ephidrin) कहते हैं। डा० वेकचून ने इसके काढ़े को मांशपेशियों तथा जोड़ों सम्बन्धी पक्षाघातों पर इसका प्रयोग किया और उत्तम पाया। डा० वोस ने भी इसको पक्षाघात सम्बन्धी रोगों पर अजमाया और लाभपद पाया। काली खांसी प्रतमक श्वास श्वांस प्रणालियों के शोथ में इसका चमत्कारिक प्रभाव होता है। अत:इसे एफ्रीडीन का प्रतिनिधी माना जाता है वैद्य लोग चूर्ण, क्वाथ,शर्वत लेह आदि के रूप में इसे खूब व्यवहृत करते हैं स्वर्गीय आयुर्वेद मार्त्तण्ड पं० यादव जी त्रिकम जी भाई जिस औषधि को श्वास रोग का उत्तम दवा मानते थे उसका प्रयोग हम लिखे देते हैं वैद्य जन लाभ उठावें श्वास रोगियों को जीवन दान देने के कारण ही इसे सोमकल्पलता माना गया है आजकल यह बाजार में खूब मिलती है मंगवा कर परीक्षा करें

योग

सोम कल्पलता २० तो० रससिन्दूर १ तो० को लें प्रथम सोमकल्पलता का वस्त्रपूत चूर्णकर रससिन्दूर मिला घोटे और शीशी में भर रख छोड़े ५ रत्ती से १ मांसे तक दौड़े के समय देने से लाभ होता है।

तीसरा सोम

लहसन (रसोन) को यूनानियों ने माना है काश्यप संहिता में इसके बड़े २ महत्व के योग हैं ऐंद्राणीघृत (यह बंध्यत्व हर) है इद्राणी के गर्भ न रहने पर इसका प्रयोग किया गया था महाभारी शामक कल्पादि के कई सुन्दर योग हैं यह आम वात विषम ज्वर के लिये आयुर्वेद में खूब व्यवहृत हुवा है जो चाहें ग्रथों में देखें स्थान वृद्धि से हम इस पर प्रकाश नहीं डालना चाहते।

नोट—सोम कल्पलता २ रु० सेर ओमेन्द्र-प्रकाश दिवेद्धी भिषगाचार्यआयुर्वेद विश्व भारती सरदार सहर(राजस्थान)से मगवा लें २रु० मनी-आर्डर भेजकर खर्च की वी० पी० छुड़ालें।

—सम्पादक

[शेषांश ३२ पेज का]

यह मुद्रण दोष है या संग्रहकार का दोष इसे समझने का मार्ग नहीं है। [इस ग्रंथ का शाल्या दिवर्ग तक का ही भाग हमें प्राप्त है पीछे का भाग अभी तक नहीं मिला है। वह और उसी प्रकार द्रव्यरत्नाकर, गणनिघन्टु, शोढल निघण्टु के ग्रंथ यदि कहीं प्राप्य हैं और कोई हमें उसकी सूचना दे तो हम बहुत उपकृत होंगे।]

निघण्टुरत्नाकर, बृहन्निघण्टुरत्नाकर, शालिग्राम निघण्टु भूषण, आयुर्वेद चिन्तामणि, आयुर्वेद विज्ञान, अभिनव निघण्टु, अभिधानरत्नमाला अभिधानमञ्जरी, इनमें अधिकांश भावप्रकाश के अनुकरण करने वाले हैं। निघण्टु रत्नाकर मात्र ही दूसरे का संग्रह है। वह कृत्रिम पर्याय एक का गुण दूसरे को कहना, मराठी नामों का संस्कृत रूपान्तर आदि से भ्रांति उत्पन्न करने योग्य है। इस ग्रंथ का विचार नहीं किया गया है।

अश्वगंधा

वैद्यराज श्री हकीम दलजीतसिंह जी आयुर्वेदीय विश्वकोषकार चुनार (मिर्जापुर)

प्रस्तुत लेख के लेखक के विषय में कुछ परिचयात्मक टिप्पणी इस अंक के 'ब्राह्मी' लेख में देखिये। सम्माननीय लेखक का अश्वगन्धा पर प्रस्तुत परिचय वस्तुतः प्रसंशनीय है।

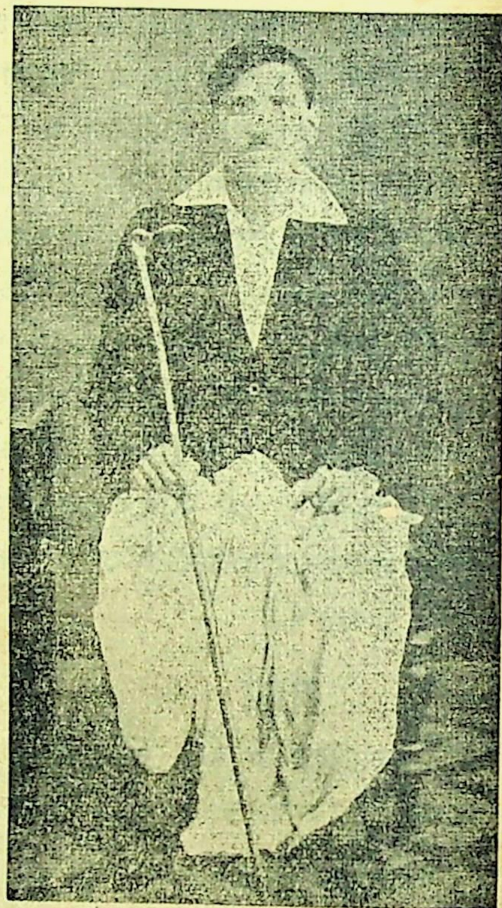
—ज्ञानेन्द्र पाण्डेय

नाम—(सं०) अश्वगन्धा, हयगन्धा, वाजिगन्धा (परिचयज्ञापिका) पुष्टिदा बल्या वातघ्न्, वाजीकरी (गुणप्रकाशिका); (हि० बम्ब०) असगंध; (पं०) अ (आ) कसन, असगंद; (बं०) अश्वगंधा; (म०) डोरगुंज, आसंध, (गु०) आसंध, छोड़ा आहन, घोड़ा आकुन; (क०) आसान्दु; (अ०) काकनजुलू हिंदी, का कनजुलमुनव्विम, (फा०) बहान बर्री; (ले०) वायथेनिया साम्निफेरा (Withonia Somnifra Dunal) (अं०) विंटरचेरी (Wintercherry)।

वक्तव्य—जिस संस्कृत शब्द के अन्त में गन्धा' आदि में 'वाजि' वाचक शब्द आए (अर्थात् समस्त अश्व वाचक शब्द), उन सबको असगन्ध का पर्याय समझना चाहिये, जैसे—तुरंगगन्धा या हयाह्वया प्रभृति। यूनानी ग्रथों में असगंध नाम से ही इसका वर्णन आया है।

कण्टकारी कुल (Fanily Solauaceae)

उत्पत्ति स्थान—समस्त भारत के शुष्क एवं अर्धोष्ण भाग, यथा—बम्बई, पश्चिम भारत वर्ष, पश्चिमी घाट और कभी-कभी वंग प्रदेश में मिल जाता है। गया तथा पुर्णिया आदि के परित्यक्त भूमि में कभी-कभी इसके गुल्म पाये जाते है



वर्णन—अश्वगन्धा का क्षुप २–५ फुट ऊँचा और शाखा बहुल होता है। पर्णक्रम एकांतर। पर्ण लम्बगोल, अखण्ड, लट्वाकार, लगभग कुण्ठिताग्र, २–४ इञ्च लम्बा और फलकमूल क्रमशः संकुचित रहता है. पत्र के दोनों पृष्ठों का रंग समान होता है। पुष्प क्षुद्र, ह्रस्व वृन्त, पत्र

कोणोद्भूत, शाखाग्र स्थित, हरिताभ या पीताभ ३–६ गुच्छों में, पुष्प बाह्यकोष, पुष्पाभ्यन्तरकोष और पुंकेशर ५–५। फल छोटा रसभरी के समान मांसल और फूले हुये तथा लम्बे और शिखर पर खुला हुआ कबच (बाह्यकोश) से ढका हुआ, लाल रंग का मसृण, मटराकार। बीज असंख्य, अतिक्षुद्र, लगभग १ इञ्च का १/१६ वां भाग दीर्घ, पीताभ श्वेत, वृक्काकार, पार्श्वद्वय संकुचित, बीजबाह्यावरण (Testa) मधुमक्षिकागृहवत् होता है। समग्र क्षुप ह्रस्व, सशाख, सूक्ष्माग्र रोमों से आच्छादित होता है।

मूल—सरल, मूलकवत् शंकाकार किन्तु क्षीण, कड़ा; दृढ़ १–१॥ इञ्च तक मोटा और १–१॥ फुट लम्बा, ऊपर से हलका घूसर, परन्तु तोड़ने पर भीतर श्वेत होता है। कच्ची जड़ या समग्र क्षुप से अश्वमूत्रवत् (तीक्ष्ण अग्राह्य) गन्ध आती है। इसीलिये इसे अश्वगन्धा प्रभृति नामों से अभिहित करते हैं। शुष्कावस्था में गंध नहीं होती एवं यह अत्यन्त मृदु होती है, इसका स्वाद तिक्त होता है।

व्यापार में आने वाली (बाजारी) शुष्क जड़ ६–८ इञ्च लम्बी और शिखर से किंचित् अधस्थ स्थूलतम भाग १/४ से १/२ इञ्च चौड़ी (व्यास की होती है) यह मसृण, चिक्कण, शंखाकार बाहर से हलका, पीताभ घूसरवर्ण का और भीतर से श्वेत एवं भंगुर होता है, टुकड़े लघु और श्वेतसार पूर्ण होते हैं। मूल बिरला ही सशाख होता है। शिखर से संश्लिष्ट कतिपय कोमल कांड के अवशेष वर्तमान होते हैं।

असगंध स्वयंजात (जंगली) और खेती की हुई दो प्रकार की होती है। ऊपर जिस असगंध की जड़ का वर्णन किया गया है, वह जंगली असगंध है। बाजार में असगंध के जो सफेद मूल मिलते हैं वे जंगली के नहीं, अपितु खेती की हुई असगंध के होते हैं। इसे नागौरी (बाजारी) असगंध भी कहते हैं। खेती करने, खाद देने और छोटे मूल लेने से जंगली की अपेक्षया इसके स्वरूप, रस तथा गुणों में अन्तर मालूम होता है मालवा में असगंध की खेती की जाती है। और वहां से विक्रयार्थ मूल बाहर भेजे जाते हैं।

असगंध बाजारी और जंगली दोनों के मूल माइक्रोस्कोप में परीक्षा करके देखने से दोनों एक ही वनस्पति के मूल मालूम होते हैं। बाजारी में स्टार्च का संग्रह अधिक होने से फाइबर (रेशे) कम बने हैं, जंगली में फाइबर अधिक हैं। दोनों के स्टार्च एक ही प्रकार के है, ऐसी सम्भावना है कि मिट्टी के भेद से और कृषि में आने के कारण यह परिवर्तन हो गया है। इसमें पाया जानेवाला स्टार्च प्रधानत: कोमल, अण्डाकार, कोषावृत, श्वेतसार द्वारा निर्मित होते हैं। यह लुआबी एवं किंचित्तिक्त अस्वादयुक्त होता है।

बाजीकर, बल्य तथा बृंहण गुण के लिये खाने के काम में बाजारी असगंध लेना चाहिये, लेप आदि बाह्य प्रयोग तथा तैलादि में जंगली असगंध के मूल लेने चाहिये। (द्र० गु० वि० पृ० २८४ पा० टि०, बि० ब० पृ० ६७)

रासायनिक संगठन—इसमें अश्वगन्धीन (सोम्निफेरीन Somnifnrin) नामक एक क्षारीय सत्व (क्षारोद) पाया जाता है जो निद्रा जनक है। इसके सिवाय इसमें राल, वसा, और रंजक पदार्थ पाये जाते हैं।

उपयुक्त अंग— मूल चूर्ण मात्रा-३ मा०, से ६ माशा; क्षार मात्रा १॥-३ माशा; लेप अश्वगन्धा तैल, अश्वगन्धाघृत और अश्वगन्धारिष्ट आदि।

अश्वगन्धा के गुणकर्म तथा उपयोग

आयुर्वेदीय मत से

गुण-कर्म—चरक (सू० अ० ४) बृंहणीये, बल्ये च महाकषायो तथा मधुरस्कन्धे (नि० अ० ८) अश्वगन्धा पठ्यते। "अश्वगन्धा कषायोष्ण तिक्ता वातकफापहा। विषव्रण कफान् हन्ति कान्ति वीर्य्य बलप्रद॥" (धन्वन्तरीय निघण्टु)। "अश्वगन्धा कटूष्ण स्यात्तिक्ता मदगन्धिका। बल्या वातह्ना हन्ति कासश्वास क्षय व्रणान्॥" (राजनिघण्टुः) 'अश्वगन्धाऽनिल श्लेष्मशोथ श्वित्रक्षयापहः। बल्या रसायनी तिक्ता कषायोष्णाऽति शुक्रला॥'

(भाव प्र०)

अश्वगधा कषायोष्णा तिक्ता वृष्या रसायनम्।
वलपुष्टिप्रदा हन्ति कफकासानिलव्रणान्॥
शोफकण्ड् विषमश्वित्र कृमि श्वासक्षतक्षयान्॥
(कै० नि०)।

"अश्वगंधा जराव्याधि नाशक स्तुवरःस्मृतः।
धातुवृद्धिकरः किञ्चिद् कटुको बलदः स्मृतः।"
(बृहन्निघण्टु रत्नाकर)

"अश्वगंधा पत्र लेपो ग्रन्थिगण्डापची हरेत्।"
(शाढलनिघण्टुः)

असगंध मधुर, कषाय, तिक्त उष्णवीर्य, बृंहण, बल्य, रसायन, वाजीकर, शुक्रल तथा वात, कफ, शोथ, श्वित्र, क्षय, खांसी, व्रण, कु , और श्वास को दूर करने वाली है। ग्रन्थि, गलगण्ड और कण्ठमाला (अपची) पर इसकी पत्ती का लेप करते हैं।

असगंध के वैद्यकीय व्यवहार

चरक--श्वास में अश्वगंधा मूलक्षार-श्वास रोगी को घृत तथा मधु के साथ, अश्वगंधा के अन्तर्धूमदग्ध-क्षारका सेवन कराये। यथा—
'क्षारश्चाप्यश्वगन्धा या लेहयेत् क्षौद्र सर्पिषा।"
चि० २१ अ०)

सुश्रुत—शोथ में अश्वगंधा–कुट्टित अश्वगंधा २ तोला, को गोदुग्ध आध पाव तथा जल डेढ़ पाव के साथ दुग्ध मात्र अवशेष रहने तक क्वाथ करें। क्वाथ प्रस्तुत होने पर उसे वस्त्रपूत कर शेष रोगी को पिलायें, किंवा क्षीर परिभाषानुसार प्रस्तुत असगंध क्वाथ से मन्थन द्वारा निकाले हुये नवनीत और उससे बने हुये घृतका पान कराये। यथा-"क्षीरपिवेद्वाप्यथ वाजिगंधा-विपक्वमेवं लभते च पुष्टिम्। तदुत्थितं क्षीरघृतं सिताढ्यम्। प्रातः पिवेद्वाथ पयोऽनुपानम्।"
(उ० ४१ अ०)

मात्रा—६ मा० से १ तोला तक।

चक्रदत्त—वातव्याधि में अश्वगन्धा – (१) असगंध का क्वाथ तथा कल्क और इससे चतुर्गुण घृत—इन सबको गोघृत के साथ यथाविधि पाक सेवन करें। यह घृत वातघ्न। वृष्य एवं मांस वर्धक है। यथा—

अश्वगन्धा क्वाथे च कल्के क्षीर चतुर्गुणम्। घृतं पक्वन्तु वातघ्नं वृष्यं मांस विवर्द्धनम्॥
(वातव्याधि चि०)।

(२) उदरोपद्रवभूत शोथ में अश्वगन्धा—उदर रोग में शोथ, होने पर असगंध को गोमूत्र में पीसकर पान करायें।

यथा—गोमूत्रपिष्टामथवाश्वगन्धाम्।

(उदर चि०)

(३) बन्ध्यत्व में अश्वगंधा—क्षीर परिभाषानुसार प्रस्तुत असगंध के क्वाथ में किंचिद् गोमूत्र का प्रक्षेप देकर ऋतुस्नान की हुई बन्ध्या बाला (नारी) इसका पान करे। यह गर्भ प्रद है। यथा—

क्वाथेन हयगन्धायाः साधितं सघृतं पयः।
ऋतुस्नाताबला पीत्वा धत्ते गर्भं न संशयः॥

(योनिव्यापच्चिकित्सा)

(४) बालक के कार्श्य रोग में अश्वगंध—कृश शिशु के शरीर की पुष्टि हेतु दुग्ध, घृत, तिल तैल, किम्वा ईषदुषण दुग्ध के साथ असगंध के चूर्ण का सेवन करावे।

यथा—पीताऽश्वगन्धा पयसार्द्ध मासम्।
घृतेन तैलेन सुखाम्बुना वा॥
कृशस्य पुष्टिं बपुषो विधत्ते।
बालस्य शस्यस्य यथाम्बुवृष्टिः॥

(रसायनाधिकार)

मात्रा-वयानुसार।

भावप्रकाश—हृदयगत वायुरोग में अश्वगन्धा—वायु के हृदयगत होने पर असगंध को उष्णजल के साथ पीस कर सेवन करायें।

यथा—पिवे दुष्णाम्भसा पिष्ट्वामश्वगंधाम्

(म० ख० २ भा०)

बंगसेन—निद्रनाश रोग में अश्वगंधा अश्वगंधा चूर्ण को गोघृत तथा चीनी के साथचाटनेसे नष्ट निद्रा वाले को नींद आजाती है। यह परीक्षा सिद्ध हैं। यथा—चूर्णं हयगन्धायाः सितया सहितश्च सर्पिषा लीढम्। विदधाति नष्टनिद्रे निद्राभावे च सिद्धमिदम्॥

(जलदोषादि योगाधिकार)

वक्तव्य—चरक सूत्र अ०४ के बृंहणीय, बल्य एवं महा कषाय वर्ग में तथा चरक वि० अ० ८ के मधुर स्कन्ध में अश्वगन्धा पठित हुई है। जिन द्रव्यों के आर्द्ररूप में प्रयुक्त करने की विधी है "सदैवार्द्रा प्रयोक्तव्या" उनमें से असगंधा भी एक है। असगंधा कच्चा अर्थात गीले रूप में ही व्यवहृत होती है। चरक की वात व्याधि की चिकित्सा के अन्तर गत अश्वगन्धा के क्वाथ में तैल पाक कर व्यवहार करने का उपदेश है।

'कल्पोऽयम श्वगन्धा-याः"(चि० २८ अ०) पर क्षत क्षीण चिकित्सा के-अन्तरगत अश्वगंधा का नामोल्लेख भी-नहीं हुआ है। सुश्रुतोक्त वात व्याधि चिकित्सा के अन्तरगत अश्वगन्धा का नामोल्लेख दृष्टिगोचर नहीं होता चरक में अश्वगंधा का बल्यवर्ग में पाठ आया है।

यूनानी मतानुसार

प्रकृति—यह तीसरे दर्जे में (मलमूत्र द्रव्यों के साथ) उष्ण एवं रूक्ष हैं।

गुणकर्म—वाजीकर बल्य, गर्भाशय संशोधक-बलदायक, श्वयथुविलयन, शुक्रल, वीर्य पुष्टिकर स्तम्भ जनक और काठिन्य जनक है।

प्रधानकर्म—कामशक्ति बर्धक एवं कटिशूल के लिये हितकारक है।

उपयोग—वाजीकरण के लिये तथा शुक्रतारल्य एवं शुक्र प्रमेह में प्रयोजित किया जाता

है। वातज नाड़ियों के शांति के कारण होने वाले शुक्र प्रमेह में यह विशेष लाभकारी है। गर्भाशय संशोधक एवं बलदायक होने से यह प्रसबोत्तर उपयोग कराया जाता है। इसको पीसकर लेप करने से सूजन उतर जाती है। आम वात में इसका बहिराभ्यंतरिक उपयोग किया जाता है। इस गुण में सूरंजान का प्रतिनिधी समझा जाता है। आमवात तथा अन्य प्रकार की सूजन पर इसके ताजे पत्ते गरम करके बांधते हैं। इससे सूजन उतर जाती है। इन्द्री को दृढ़ करने के लिये इस शिश्नोपयोगी तिलाओं में डाला जाता है और ढलके हुए स्तनों के लिये इसे स्त्री के दूध में पीस कर लेप किया जाता है। असगंध की पत्ती की चाय अत्युत्तम होती है। मखजनमें– इसे हिंदी जड़ लिखा हैं। उसमें इसे वल्य और रसायन तथा गुण धर्म में सफेद वहमन के के समान–तथा स्वापजनन (Narcotrc)लिखा है। अहितकर–उष्ण प्रकृतिको।

निवारण—कतीरा और घी।

मात्रा—३ से ५ मासे तक।

वक्तव्य—यूनानी निघण्टु ग्रन्थों में असगंध के गुण धर्म तथा उपयोग प्राय: आयुर्वेदीय ग्रंथों की नकल मात्र है।

नव्यमतानुसार—

बाजारी असगंध—बिदारीकंद के गुणसमान है। यह उत्तम पोष्टिक है। आधा से एक तोला असगंध के चूर्ण को गाय के घी में सेंक, उसमें पाव भर दूध और यथा रुचि मिश्री मिला, गरम करके देना चाहिये, छोटे बच्चों के लिये यह उत्तम औषध है। इससे बच्चों का सूखना बंद होता है। स्त्रियों का कमर का दर्द और श्वेत प्रदर इससे अच्छा होता है।

जंगली असगंध— के मूल अवसादक स्वापजनक और मूत्रजनक हैं। वात नाड़ी पर इसकी अवसादक क्रिया होती है। परन्तु हृदय पर अवसादक क्रिया नही होती है। इसका (स्वाप जनक धर्म प्रसिद्ध है। बीज स्वाप जनक और मूत्रजनक-तथा बड़ी मात्रा में विष हैं। वद, ग्रन्थि आदि पर मूल का लेप करते हैं।

(ओ० सं० डा० वा० ग० देसाई कृत)

आर० एन्० खोरी—असगंध वल्य, रसायन एवं अवसादक है। असगंध की जड़का चूर्ण दुग्ध किंवा घृत के साथ बालक को सेवन कराने से वह पुष्ट होता है। खण्डमोदकादि रूप में रसायन रूप से अश्वगन्धा का व्यवहार जराकृत दौर्वल्य तथा वात रोगों में करते हैं। वातज दौर्वल्य एवं प्रदर में एतद्देशीय रमणीगण अन्यान्य वहुपोषक द्रव्यों के साथ अश्वगन्धा का उपभोग करती है। अश्वगन्धा के पत्र को एरण्ड तैल में सिक्तकर स्फोटकादि के ऊपर स्थापित करने से वह अंग सुप्त हो जाता है। वधिरता में नारायण तैल (जिसका अश्वगंधा एक उपादान हैं) का नस्य एवं पक्षाघात, धनुस्तम्भ वात एवं कटिशूलमें इसका अभ्यंग और आमरक्तातिसार (प्रवाहिका) विशेष एवं भगंदर में इसका अनुवासन वस्ति (Enema) रूप में प्रयोग करते हैं। शिशुकार्श्य, जराजन्य दौर्वल्य, कुष्ठ, वातव्याधि एवं वात रोगों में यह १५ से २० बूद की मात्रा–में सेवनीय है। (मेटीरिया मेट्रिका ऑफ इण्डिया खण्ड पृ० ४५२)।

"बॉम्बे फ्लोरा" नामक पुस्तक के रचयिता लिखते हैं कि इसके बीज पनीर (Withania (Pimeeria) Coagulaus Dmal) बीजवत् दुग्ध जमःने के काम आते हैं। मैंने भी प्रयोग कर इसकी परीक्षा की और वस्तुतः ईसके बीज में किसी प्रकार उक्त शक्ति को विद्यमान पाया।

(फा० इं० २ भा० पृ० ५६७)।

राँव,सवर्ग—के अनुसार तेलिंग चिकित्सक इसको बिषघ्न मानते हैं।

एन्सली—लिखते हैं कि बाजार में मिलने वाली जड़ पांडु वर्ण की होती है और उसका बाह्यस्वरूप जेंशन की तरह होता है। परन्तु इसमें किंचित् अग्राह्य स्वाद एवं गन्ध होती है। यद्यपि तैमूल चिकित्सक इसको अवरोधोद्घाटक एवं मूत्रल मानते हैं, और इसका क्वाथ चाय की प्याली भर दिन में दो बार प्रयुक्त करते हैं। पत्र को किंचित् उष्ण किये एरंडतेल में सिक्त कर विस्फोटक पर स्थापित करते हैं।

इर्विन—बीज मूत्रल और निद्राजनक प्रभाव करते हैं।

फल मूत्रल है। पत्र अत्यन्त तिक्त होते हैं। ज्वर में इसका फाण्ट व्यवहार में आता है, पंजाब में यह कटिशूल-निवारणार्थ प्रयुक्त होता है और कामोत्तेजक माना जाता है। सिन्ध में गर्भपात हेतु इसका व्यवहार होता है, राजपूत लोग इसकी जड़ को आमवात तथा अजीर्ण में लाभदायक मानते हैं।

(इं० मे० प्लां०)

सहायक ग्रन्थ

१-मख्जनुल्अद्विया
२-कताबुल्अद्विया
३-मुहीत आजम
४-खजाइनुल्अद्विया
५-आयुर्वेदीय विश्वकोष भाग १
६-बनौषधिदर्पण (बंगला) भाग १
७-द्रव्यगुणविज्ञानम्
८-बिहार की बनस्पतियां
९-यूनानी द्रव्यगुण विज्ञान
१०-यूनानी द्रव्य-गुण दर्शन
११-औषधि संग्रह (मराठी)
12-Indian Medicial Plants
13-Phormacographia Indice
14-Materia Medca of India
15-Ainsles Materia Indica
१६-चरक, सुश्रुत, धन्वन्तरीयनिघण्टु, राजनिघंटु कै० नि०, बृहन्निघण्टु रत्नाकर भावप्रकाश आदि।

सर्पगन्धा: विवेचनात्मक वानस्पतिक परिचय

वैद्यराज श्री गणपति नीलकण्ठ जी पटवर्धन आयुर्वेद तीर्थ, सिर्सी (मैसूर)



> मैसूर प्रदेश के प्रतिष्ठित वनस्पति विशारद श्री मान्य पटवर्धन जी दीर्घ काल से वनस्पतियों के शोध कार्य में सँलग्न हैं। आपके पूर्वज भी प्रतिष्ठित चिकित्सक थे। इन लेखक महोदयने अपने यहाँ विख्यात जड़ी-बूटियों का उद्यान स्थापित किया है अपने क्षेत्र के सम्माननीय चिकित्सक श्री पटबर्धन जी आयुर्वेद के शास्त्रीय विद्वान भी हैं। अपने दीर्घ एव गम्भीर अनुभव से उनकी इस रचना में चार चाँद लग गये हैं। आशा है इस लेख से हमारे पाठक लाभ उठायेंगे।
>
> —ज्ञानेन्द्र पाण्डेय

(१) आधुनिक सर्पगंधा—Rauwolfia Serpentina Benth

(२) निघंटूक्त सर्पगंधा—मूलकादि कंद शाक वर्ग

इस प्रकार दो भेद करना अवश्य है, वर्तमान प्रसिद्ध सर्पगंधा अपने गुणों के कारण अत्यल्प समय में विख्यात होने पर भी निघंटुओं में या ग्रंथत्रय में उसका उल्लेख नहीं है। निघण्टुओं में जिनका उल्लेख नहीं है ऐसी अनेक वनस्पतियां आज प्रारम्भ में हैं, निघंटुओं में उल्लेख न होने मात्र में बाधक असमंजस में पड़ना युक्त नहीं है वास्तव ही आज की प्रसिद्ध सपंगंधा का उल्लेख निघंटु में नहीं हुआ है, सभी प्रसिद्ध गुणकारी वनस्पतियों का उल्लेख निघंटुओं में मिलना ही चाहिये यह आग्रह भावना युक्त नहीं हो सकता सहस्रों वर्ष पूर्वके बनस्पतिज्ञ जितनी वनस्पतियों का ज्ञान रखते थे उनका समावेश निघंटुओं में क्रम से किया गया है। जब कभी कोई नई वनस्पति उपयुक्त सिद्ध हो तब उसका निघंटु में समावेश करके उसकी अभिवृद्धि करो इस प्रकार उन्होंने कह ही रखा है। इसके अनुसार भाव-प्रकाश के काल तक निघंटुओं की अभिवृद्धि होते देखा जाता है। उसके अनन्तर ही यह कार्य नहीं हुआ है। वर्तमान समय तक एकत्र आकर नवे उपयुक्त विषयों का निघंटु में समावेश करके उसकी अभिवृद्धि करना अवश्य है। अब मुख्य विषय की ओर ध्यान दें।

(१) आधुनिक सर्पगन्धा

इधर-उधर Rauwolfia Serpentina को सर्पगन्धा नाम रूढ़ होते देखा जाता है, पर वास्तव में इस वनस्पति में गन्ध नहीं है। पुष्प, मूल, पर्ण किसी में भी गन्ध नहीं है। ऐसा होते हुये इसे "सर्पगन्धा" यह गन्ध वाचक शब्द कैसे रूढ़ हुआ, किसने यह नाम दिया, यह ज्ञात नहीं

होता, Rauwolfia serpentina को भारत में सर्पविषघ्न रूप में उपयोग किया जाता था, अब भी इसका इसी रूप में उपयोग किया है, प्रारम्भ में जब अंग्रेज भारत में आये तब इसका सर्प के विष पर प्रयोग होते देखकर उन्होंने इसे Serpent root नाम से पुकारा. अनन्तर अब "बोटनिकल" नाम रखने का प्रसंग आया तब उन्होंने इसी नाम को Rauwolfia Serpentina किया। जैसे प्रसिद्ध विषघ्न वनस्पति को संस्कृत में नाम है या नहीं यह कौतूहल जब उत्पन्न हुआ उस समय के (१०० बर्ष पूर्व) वैद्य लोगों ने सप के विष पर उपयुक्त होने के कारण इसे सर्पगंधा नाम की सूचना की. वही नाम अंग्रेजी ग्रंथों में रूढ़ हुआ होगा इस प्रकार हम अनुमान कर सकते हैं। सर्प के मांत्रिक इसकी बूटी पास रखते हैं और इससे सर्प अपना फन नीचा करते देखा जाता है, इस प्रकार यह वनस्पति सप विषघ्न के रूप में बहुत पूर्व से ही प्रसिद्ध है।

अब निघण्टूक्त सर्पगंधा–नाकुली के विषय में बिचार करें, नाकुली में दो जातियां हैं—नाकुली, गंधनाकुली, इनके पर्याय बाचक सर्पगंधा, नागगंधा, अहिलतादि शब्द स्त्री लिंग द्योतक होने से यह वनस्पति वल्ली होगी यह सुस्पष्ट है, अहिलता यह शब्द तो बह वल्ली है यह स्पष्ट ही कहता है, नाकुली वल्ली है और आधुनिक सर्पगंधा वल्ली न होते हुये क्षुप है यही नहीं राजनिघंटु के मूलकादि बर्ग के कंद शाकों के साथ नाकुली का उल्लेख हुआ है। आधुनिक सपगंधा के केवल ल ही होते हैं कन्द नहीं हाते तथा वे शाक के उपयुक्त नहीं हैं, इससे स्पष्ट है कि आधुनिक सर्पगंधा नाकुली नहीं है।

आधुनिक सर्पगंधा	नाकुली–निघंटूक्त सर्पगंधा
क्षुप	वल्ली
मूल	कंद
केवल औषधोपयोगी	शाकोपयोगी तथा औषधोपयुक्त
गंधरहित	गंधयुक्त

इन भेदों के कारण ये दोनों भिन्न २ हैं यह स्पष्ट हुआ है और आधुनिक सर्पगंधा नहीं है यह भी सिद्ध हुआ, यह निश्चित निर्णय बाचकों को ध्यान में रखना चाहिये।

अब निघंटूक्त सर्पगंधा–नाकुली पर विचार करें, नाकुली कौन वल्ली है कहा पायी जाती है यह नहीं जाना जाता, सब विद्वानों और तज्ञोंको एकत्र मिलकर इसकी खोज करना आवश्यक है च्योंकि यहां तक इस बनस्पति का ज्ञान किसी को नहीं होगा यह दृढ़ता से कहा जा सकता है, उपलब्ध ग्रंथों में नाकुली के विषय में क्या कहा है इसे देखें—

धन्वन्तरी—

नाकुली सर्पगंधा च सुगंधा भोगिगंधिका।
सब च (सर्पसुगन्धीति पाठ :) तथा विरज पत्रिका'
(चिरितिपत्रिका, चरितिपत्रिका इति च पाठांतरो)
। १०३ करवीरादि वर्ग,

राजनिघंटु—

नाकुली सर्पगंधा च सुगंधा रक्तपत्रिका।
ईश्वरी नागगंधा चाप्यहिमुक् स्वरसा तथा।
सर्पादनी व्यालगंधा ज्ञेया चेति दशाह्वया ६३
मूलकादि शाकबर्ग।

कैयदेव—

नकुलेष्टा महावीर्या तथा सर्पसुगंधिका ।
बिषघ्नी सुवहा सर्पगंधा चीरितपत्रिका.७१३
सुगंधा नाकुली सर्पलोचना गन्धनाकुली सर्प कंकालिका ज्ञेया दंष्ट्रिर्मता ।

शाकवर्गे ।

(नाकुली का भेद गंधनाकुली है, इस लिये कैयदेव में नाकुली के पर्यायों में गंधनाकुली, सुवहा, सर्पलोचना इनका समावेश करना ठीक नही जचता, पर कैयदेव के काल में नाकुली को ही गंधनाकुली कहा जाना संभव है क्योंकि कैयदेव का ही अनुसरण करने वाले मदनपाल और भावप्रकाश में गंधनाकुली का उल्लेख नहीं है, या समान गुण होने के कारण एकत्र कहना भी संभव है)।

अभिधानरत्नमाला—

सर्पाक्षी नाकुली चेली सर्पगंधा सुगंधिका ।

कटुस्कंधे

अभिधानमंजरी—

योगेश्वरी सर्पगंधा नाकुली भोगगंधिका ।
ईश्वरी च विषघ्नीति ज्ञेया चीरितपत्रिका ।।

संकीर्णवर्गे

मदनपाल—

नाकुली सुवहा नागसुगंधिनी गंधनाकुली ।
नकुलेष्टा महासर्पनेत्रा रोचकपत्रिका ।।

। ६३ । अभयादि वर्ग

मदनविनोद—

सर्पगंधघ्नी गंधनाकुली ।
नकुलेष्टा महा सर्पनेत्रा चीरितपत्रिका ।।

भावप्रकाश—

नाकुली सुरसा नागसुगंधा गंधनाकुली ।
नकुलेष्टा भुजंगाक्षी सर्पाक्षी विषनाशिनी ।।

हरीतक्यादि वर्गे

गंधनाकुली के पर्याय

धन्वन्तरी—

अन्या महासुगंधा च सुवहा गंधनाकुली ।
सर्पाक्षी नकुलेष्टा च च्छत्र की (च्छत्राक्षीति पाठः) विषमर्दिनी ।। करबीरादि वर्गे

राजनिघटु—

अन्या महासुगंधा च सुवहा गंधनाकुली ।
सर्पाक्षी फणिहंत्री च नकुलाढ्याऽहिमुक् च सा
बिषमर्दनिका चाहि मर्दिनी विषमर्दिनी ।
महाहिगंधाऽहिलता ज्ञेया सा द्वादशाह्वया ।। ६५

(मूलकादि शाकवर्ग)

कैयदेव—

अन्या महासुगंधा च छत्राकी कामचारिणी ।।७१४

(शाकवर्गे)

अभिधानरत्नमाला—

अन्या तु सुबहा नंदा नाकुली नकुल प्रिया ।।
चित्राक्षी चारुणाक्षी च साधकी बिषनाशिनी ।।

(कटुस्कंदे)

अभिधानमंजरी—

ज्ञेया सर्पसुगंधातु सर्पाक्षी नकुलप्रिया ।
छत्राकी नकुलेष्टा च पर्यायैबिषमर्दिनी।। संकीर्णवर्गे

नाकुली के पर्याय

१—नाकुली'२—सर्पगंधा, ३—सुगंधा,४—रक्तपत्रिका, ५—ईश्वरी,६—नागगंधा ७—अहिमुक,८—स्वरसा,९—

सर्पादनी १०–व्यालगंधा, ११–भोगिगंधिका, १२–सर्पसुगंधिका, १३–विरिजपत्रिका, (चिरिजपत्रिका, चिरितिपत्रिका चरितिपत्रिका), १४–नकुलेष्टा, १५ महाबीर्या, १६–सर्पसुगंधिका, १७–विषघ्नी, १८सुबहा(समहा-मपा)१६–चीरतपत्रिका, २०–सर्पलोचना, २१–गंधनाकुली, २२–सर्पकंकालिका, २३–सुनंदा २४–दंष्ट्रिका, २५–सर्पगंधिनी, २६–सर्पनेत्रा (महासर्पनेत्रा-मपा)२७–रोचकपत्रिका, २८–सुरसा, २६–नागसुगंधा, ३०–भुजंगाक्षी, ३१–सर्पाक्षी ३२बिशनान(शि)नी, ३३–चेली, ३४–सुगंधिका३५–योगेश्वरी, ३६–भोगगंधिका, ३७–भीरितपत्रिका

इनमें रास्ना तथा गंधनाकुली और ईश्वरी के नामों पर भी समावेश होने के कारण नाकुली का अर्थ रास्ना–ईश्वरी इस प्रकार किया गया हो

गुण

नाकुली कटुरुष्णास्यात्तिक्ताऽपि परिकीर्तिता।
मूषक्स्य विषं हन्ति कृमिदोषविनाशिनी ॥
धन्वंतरी

कैयदेव-

नकुलेष्टा कटुस्तिक्ता कषायोष्णा नियच्छति।
व्रण कृमीन् सर्पलूता वृश्चिकासुबिषं विषा॥

राजनिघंटु----

नाकुलीयुगुलं तिक्तं कटुष्णं च त्रिदोषजित्।
अनेकबिष विध्वंसी किंचिच्छ्रेष्ठ द्वितीयकं॥

ग. नि.----

नाकुली कटुकास्तिक्ता तथोष्णा कृमिरोगहृत्।
वृश्चिकोंदुर सर्पादि बिषं नाशयति क्षणात्॥
तुवरा च त्रिदोषघ्नी कंदेष्वेते गुणाः स्मृताः।

इस प्रकार शालिग्राम निघण्टु भूषण में कहा गया है, "ग० नि०" का अर्थ "गदनिग्रह" या "गणनिघण्टु" यह ज्ञात नहीं होती, बृहन्निघंटुरत्नाकर में "ग० नि०" के बदले "रा० नि०" मुद्रित हुआ है।

"नाकुली" "नकुलेष्टा" दि शब्दनकुलवाचक हैं, प्रांतीय भाषाओं में भी नकुलवाचक बनस्पतिया हैं, इस कारण से मूल से नाकुली को ही अपनी प्रांतीयभाषा की नकुलीबाचक बानस्पति समझते आये हैं, प्रांतीय भाषा में तज्ञो ने रचित ग्रंथों का अर्थ करते कमय अपनी ही प्रांतीय भाषा की दृष्टि से गलत अर्थ किया है, इस प्रकार क्रम से भूले होती आयी हैं, शालिग्राम निघंटु भूषण में तेशीय नामों को कहते समय इसे तीन भिन्न २ बनस्पतियों के नाम देते हुये देखा जाता है, जैसे उसमें कहा है——हिन्दी नाई नकुलकंद हरकाई चंदा; मराठी–मुंगुसवेल, नाई, सापसंद, कन्नड– विषमुंगली, फारसी–छोटाचांदा, तैलगु, पद्मपुचेट्टु, और वृहन्निघंटुरत्नाकर में गुजरात नोरवेल। इनमें—

हिंदी—नाई–Corallocarpus epigaeus, C. B. Clarke (१)
नकूलकंद–इसका पता नहीं लगता।
हरकाई चाँदा–Rauwelfia serpentina, Benth (२)

मराठी—मुंगुसबेल–इसका पता नहीं लगता।
नाई–(१) नाईचा पाला–Enicostemma littorale, Blume
(२) कड़वी नाई–Corallocarpus epigaeus
सापसंद–Aristolochia indica, Linn (३)

कन्नड –विषमुंगली–(१) विषमुंगली (उत्तर कन्नड जिले में) Corallocarpus epigaeus, Linn

(२) विषमुंगली (दक्षिण कन्नड जिले में) Crinum asiaticum, Linn

फ़ारसी—छोटा चाँदा-Rauwolfia serpentina

गुजराती—नोरवेल-Aristolochia indica

इस प्रकार देशीय नकुल बाचक वनस्पतियों के कारण तीन भिन्न २ वनस्पतियां एकत्र हुई हैं।

स्व० वा० भागीरथ स्वामी अपने संदिग्ध निर्णय वनस्पति शास्त्रमें नाकुली को ही प्रमादवश रुद्रजटा ईश्वरी कहा है जिसका कारण भी उपयुक्त प्रकार का ही होगा। इस प्रकार वैद्य बापालाल गड़बड़दास शाह इन्होंने भी अपने 'निघंटु दर्शन' में 'नकुलाया हिता इति नाकुली' एसा कहते हुये नाकुली शब्द 'नोलवेल' ईश्वरी का ही समझ कर प्रमाद किया है।

अब नाकुली के विषय में कोष ग्रन्थ क्या कहते हैं इसे देखें, वैद्यक शब्द सिन्धु में—

नाकुली–[स्त्री०] Vanda Poxburghii, a variety of Rasna

स्वनामख्यात महाकंद शाक विशेष। नाकुली नाई, बिषमुंगरीति लोके। हिं०–चंद्रा। ते०–सर्पाक्षी, पद्मचेट्ट। यवतिक्ता लतायाम्। श्वेत कण्टकायाम्। रा० नि० व० ४ चव्ये। प० मु० मरीचे। शाल्मली वृक्षे। इस प्रकार कहा है, अमरकोष में—

'नाकुली सुरसा रास्ना सुगंधा गंधनाकुली। नकुलेष्टा भुजंगाक्षी छत्राकी सुबहा च सा॥"

इस प्रकार नाकुली, गंधनाकुली और रास्ना इनके एकत्र कहने से ये पर्याय नाकुली के हैं या गंधनाकुली के या रास्ना के हैं यह समझ में नहीं आता। अमरकोषकार ने परस्पर बिरुद्ध शब्द एकत्र कहकर भ्रांति को अवसर दियाहै, और इस कारण से अमरकोष के आधार से रचे गये अनंतर के निघंटुओं में प्रमाद होते आया है। जैसे–कैयदेव में रास्ना को गंधनाकुली कहा है। लाला शालिग्राम वैश्य ने "नाकुली सुरसा रास्ना सर्पगंधा पलंकषा" ऐसा कहकर अपभ्रंश किया है।

अब ग्रंथत्रय के टीकाओं में नाकुली और गंधनाकुली के विषय में क्या कहा है इसे देखें।

नाकुली के विषय में—

चरक---

नाकुली–चविका (चि० अ० २३–२६७) चक्रपाणी
नाकुली–सर्पवत्सुगंधा (चि० अ० २३-२६७)जेज्जट
नाकुली–रास्ना-(चि० अ० २३-५७, २३-२१२)चक्र
नाकुली–सर्पसुगंधा–(चि० अ० २३-२१२) जेज्जट
नाकुलीद्वयम्–रास्नाद्वयम्-(चि०अ० ६-६३) चक्र

इससे देखा जाता है कि चक्रपाणी ने कोष के अनुसार और जेज्जट ने निघंटुओं के अनुसार अर्थ किया है।

सुश्रुत---

नाकुली-(अर्थ नहीं लिखा गया है)
(क० अ० ८–१०२) डल्हण
सर्पगंधा–नाकुली (क० अ० ८–८४) डल्हण
सर्पगंधा–सर्पच्छत्रिका (क० अ० ७-२६) डल्हण
सर्पगंधा–वर्षासु छत्राकारा(उ० अ० ६०–४७) ,,

अष्टांगहृदय-

नाकुली-(अर्थ नहीं लिखा गया है) (चि० अ० १७-२६) (उ० अ० ३०-१५) ३६-५७, ३७-८२) अरुणदत्त

सर्पगंधाख्या-नाकुली (उ० अ० ५-२) अरुणदत्त

सर्पसुगन्धा-नाकुली (उ० अ० १४-१३)अरुणदत्त

सर्पलोचना-(अर्थ नहीं लिखा है) उ० अ० ३७-८३ अरुणदत्त

गन्धनाकुली के विषय में---

चरक---

गंधनाकुली-रास्नाभेद (चि० उ० ३- २६७) चक्र०

गंधनाकुली-सुबहा, लोके गोधावती (चि०अ० ३-२६७) जेज्जट

सुश्रुत---

गंधनाकुली-सुगन्धमूला रास्ना (क० अ० ६-२२) डल्हण

गंधनाकुली-सुगंध', रास्ना (क० अ० ८-११७) (उ० अ० ३२-७) डल्हण

अष्टांगहृदय---

इसमें गंधनाकुलीं का उल्लेख नही मिला, इन्होंने नाकुली और गंधनाकुली को एक ही माना होगा, या सर्पलोचना का अर्थ सर्पाक्षी होता है और सर्पाक्षी शब्द गंधनाकुली बाचक होने से अष्टांग हृदय का सर्पलोचना शब्द गंधनाकुली बाचक भी हो सकता है।

सुश्रुत में भी सर्पाक्षी शब्द है (क० अ०६२२) सर्पाक्षी "रक्तपुष्पा पूर्व देशे प्रसिद्धा" इस प्रकार है, और पुनः क० अ०८-११७ में सर्पाक्षी— "लोहितपुष्पा शंखपुष्पी भेद"। डल्हण। इस प्रकार कहा गया है। निघंटुओं में "सर्पाक्षी—गंधनाकुली-शंखपुष्पी भेद" इस प्रकार दो अर्थ हैं तो भी कल्पस्थान में दोनों जगह सर्पाक्षी गंधनाकुली' इस प्रकार कहे जाने के कारण यहां जो कहा है वह 'नाकुली' होगा। राजनिघंटु के नानार्थ वर्ग में 'नाकुली सर्पाक्ष्यां सितक्षुद्रायां यवक्तिक्ते' इस प्रकार होने से 'नाकुली' मानना ही ठीक है।

चरक, सुश्रत, वाग्भटों में नाकुली तथा गंधनाकुली के अन्य पर्यायों का बिचार नहीं किया गया है।

इस प्रकार ग्रंथत्रय में वर्णित योगोंमें नाकुली और गंधनाकुली शब्द जो है उन्हें टीकाकारों का अर्थ क्या है इसे देखा गया। निघंटुओं में जो वर्णन है उसे पहले देखा गया है। इस प्रकार हम देखते हैं कि वहुत पूर्व से ही नाकुली और गंधनाकुली का परिचय भूल जाने के कारण टीकाकारों ने अनुमान से अर्थ किया है, पर वे भ्रमवश किये गये अनुमान हैं यह इस विवेचन से स्पष्ट होता है। परिस्थिति इस प्रकार होंने से नाकुली और गंधनाकुली कौन वनस्पतियां इसका निर्णय तज्ञ जनों को एकत्र मिलकर करना ही उचित होगा।

इस विषय में अनुसंधान करने वालों को मेरी एक सूचना है, शालिग्राम निघण्टु भूषण के संवत् १९६९, सके १८६४ की प्रतिमें 'नाकुली की वेल जंगल में होती है, पत्ते पान के समान होते हैं, नीचे कंद होता है, "इस प्रकार कहा गया है. और संबत् १९८०, सके १८४५ की प्रतिमें दूसरा ही परिचय दिया है वह इस प्रकार है-" नाकुली कंद सूरण कंद के समान होता है, बर्षा में इस

[शेष ५७ पेज पर]

सर्पगंधा: आमयिक उपयोग

[श्री ज्ञानेन्द्र पाण्डेय वैद्य, गुरुकुल स्नातक (वनस्पति विशेषांक के प्रधान सम्पादक]

प्रस्तुत लेख में सर्पगन्धा के रोगों के उपयोग विषयक खोजपूर्ण जानकारी उपस्थित की गई है। साथ ही यह भी विवेचित है कि सर्पगन्धा एलोपेथी द्वारा अनुसन्धान की हुई आयुर्वेद शास्त्र के लिये कोई नवीन बूटी नहीं। यह तो आयुर्वेद की अपनी वनौषधि है। इस 'पागल की जड़ी' पर वैज्ञानिक परिचय इस लेख में पढ़िये।

—ज्ञानेन्द्र पाण्डेय

चिकित्सा जगत् में सर्पगन्धा ने तहलका मचा रक्खा है। जिससे असंख्य विभिन्न दारुण विकार प्रस्तों को व्याधि से छुटकारा मिल रहा है यह आयुर्वेद की विशिष्ट देन है—मानव समाज के स्वास्थ्य के लिये। यद्यपि इसका प्रयोग पूर्व समय में इतना अधिक नहीं हो रहा था जितनी कि अब धूम मची हुई है तथापि यह ग्रन्थों में पूर्व वर्णित है। सर्पगंधा नाकुली आदि को लेकर वैद्यसमाज में काफी विवाद है, जिसका कि विवेचन शास्त्रीय प्रमाणों सहित इसी अङ्क में आपको मिलेगा। हमें विवादात्मक परिचय से अधिक तात्पर्य नहीं। वैसे सर्पगधा की भी अनेकों जातियों की खोज हो चुकी है। फिर भी सर्पगंधा अब स्पष्ट, सुपरिचित द्रव्य हो चुका है। प्रस्तुत लेख सर्पगंधा के विषय में परिचय आदि पर अनावश्यक विचार को प्रस्तुत न करते हुये, कुछ विशिष्ट आमयिक प्रयोगोंसे सम्बन्धित सविस्तार लिखने का प्रयास करेंगे।

आयुर्वेद मतानुसार[1] सर्पगंधा के गुण इस प्रकार हैं—रस–तिक्त, वीर्य–उष्ण, विपाक–कटु, गुण–उष्ण, रूक्ष, दोष–कफवातहर, कर्म–निद्रा जनन, कृमिघ्न, विषघ्न, दीपन, पाचन, शूल प्रशमन, कामातिशय अवसादक, मानसिक विक्षोभ हर, हृदयावसादक, स्वेदजनन, आर्तवजनन आमपाचन, ज्वरघ्न, कृमिघ्न, अनिद्राहर, रक्तशोधक, वातप्रशमन।

१—ईषन्नीलारुणसुमदला पुष्पिता ग्रीष्मकाले।
वर्षाकाले फलपरिचित नीलरक्तां दधाति॥
मूलं यस्या हरिण धवलंस्थूलमन्तःस्थचक्रम्।
चन्द्राख्या सा धवल बिटपा सर्पगंधा प्रसिद्ध॥
सर्पगंधाऽतितिक्तोष्णा रूक्षा कटु विपाकिनी।
दीपनी पाचनी रुच्या शूलप्रशमनी सदा॥
कफवातहरानिद्राप्रदा हृदवसादिनी।
कामावसादिनी चैव हन्ति शूल ज्वरकृमीन्॥
अनिद्रां भूतमुन्मादमपस्मारं भ्रमं तथा।
अग्निमांद्यं विषं रक्त–वाताधिक्यं व्यपोहति॥
(द्रव्यगुण विज्ञान)

आचार्य सुश्रुतने अपने अमानुषोपसर्गोध्याय में मानसरोगहर अपराजितागण का उल्लेख करते हुये सर्पगंधा का उल्लेख किया है।

पुराण सर्पिर्लशुनं हिंगु सिद्धार्थकं बचा।
गोलोमी चाजलोमी च भूतकेशी जटा तथा॥
कुक्कुटी सर्पगंधा च तथा काण विषाणके।
ऋष्यप्रोक्ता वयस्था च शृंगी मोहन वल्लिका॥
अर्क मूलं त्रिकटुकं लता स्रोंतोजनांजनम्।
नैपाली हरितालं च रक्षोघ्ना ये च कीर्तिता:॥

इसके अतिरिक्त अन्य निघण्टु ग्रंथों में सर्पगंधा का किसी न किसी रूप में उल्लेख प्राप्त हो ही जाता है। इसमें व्याप्त उपयोगी गुणों के कारण इतनी यह प्रसिद्ध हो गई है।

संघटन के लिये अनुसंधान
(CONTITUENTS)

श्री डा० कार्तिकचन्द्र वसु की अनुसंधान शाला में कविराज गणनाथ जी सेन एवं डा० बसु ने सर्पगंधा पर परीक्षण किये। और बिभिन्न परिणाम निकाल कर चिकित्सक जगत का काफी लाभ किया।

श्री के० एम० नादकर्णी अपने ग्रंथ इण्डियन मेटेरिया मेडिका में लिखते हैं—

The root contains an alkaline (Alcaloid) 'OPHIOXYLIN' an orange Coloured Crystalline Prin ciple, resin, Starch and wax. The ash Contains iron and manganese (Indian materia medica)

तात्पर्यत: इसमें क्षारतत्व १ प्रतिशत होता है। इसमें से अनेक सक्रिय तत्व भी निकाले जा चुके हैं। इसके अतिरिक्त राल, श्वेतसार, गोंद, लवण पाये जाते हैं। इस लवण में पोटेशियम कार्बोनेट, सिलीकेट, केल्शियम, मैंगेनीज भी होता है। अन्य गहन हुये अनुसन्धानों को यह भी ज्ञात हुआ है कि शुष्क जड़ों के चूर्ण का कुल ०८ प्रतिशत क्षाराभ होते हैं जो कि अजमेलीन (Ajmaline), अजमेलीनिन (Ajmalinine), अजमेलीसायन (Ajmalicine) सर्पेण्टाइन (Serpentine) और सर्पेण्टीनायन (Serpentinine) पांच होते हैं।

उपयोग (USE AND ACTION)

'सर्पगंधा' Rauwolfia Serpentina नामक क्षुप की जड़ हैं, जो कि 'पागल की दवा' के नाम से भी प्रसिद्ध है। औषधि में उपयोग करने के लिये ४-५ वर्ष के पौधेकी बल्कल सहित जड़ें प्रयोग करनी चाहिये। आज कल लगभग २४ प्रकार की सर्पगंधा की खोज हो चुकी है। एलोपैथिक चिकित्सकों ने इसकी उपयोगिता को देखते हुये ग्रहण कर लिया है। इसी कारण कुछ जनसाधारण वर्ग इसे आधुनिक विज्ञान की 'रिसर्च' भी समझने लगा है। वैद्यों की ओर इस भ्रम को दूर करने का भी प्रयत्न करना उचित ही है।

सर्पगन्धा मुख्यरूप से बात-नाड़ी संस्थान (Nervous system) पर पड़ता है। इसी संस्थान पर प्रभाव जान कर यह खूब प्रचिलित हो चुकी है। यही इसका मुख्यकर्म एवं उपयोग भी है। उष्णवीर्य होने से यह नाड़ीसंस्थान पर वेदना स्थापन प्रभाव डालता है, निद्राजनन तो है ही। वात शामक पहले ही हम लिख आये हैं, अत: मस्तिष्कगत उत्तेजना को शान्त करने

वाली है। इसका सारतत्व हृदयावसादक और रक्तवाहिनी प्रसारक है, इसी कारण इसे रक्तचाप उष्णवात, रक्तभाराधिक्य High Bloodpressure में अतिशय प्रयोग करते हैं, इसका प्रभाव किस प्रकार पड़ता है, वस्तुत: इसका स्पष्टीकरण प्रत्यक्षत: नहीं हो पाया है। फिर आयुर्वेद पद्धति द्वारा इस ओर पर्याप्त निर्देश एवं संकेत प्राप्त होते हैं।

उन्माद, अपस्मार आदि में जवरोगी अधिक उत्तेजित रहता है, रक्तदवाव की परीक्षा करलेनी चाहिये, बढ़ा हुआ होता है, सर्पगन्धा का चूर्ण प्रयोग करते हैं। इससे मन में शान्ति आती हैं, धीरे २ मस्तिष्क का विकार दूर होने लगता है। इस प्रकार लाभ हो जाता है। रक्तभार अधिक होनेकी अवस्था में समस्त विश्व में इसकाभूरिश प्रयोग हो रहा है। इसके प्रयोग से भ्रम, मूर्च्छा आदि मानसिक विकार भी निष्कासित होने लगवे हैं।

सर्पगन्धा के प्रयोग के समय चिकित्सकों तो उचित सावधानी रखनी चाहिये। सव प्रकार के उन्माद रोगियों पर लाभ नहीं करती। खूब उत्तेजित रोगियों पर सर्पगंधा का प्रयोग करना चाहिए। रोगी का बलवान होना आवश्यक होना चाहिये। दुर्वल, निस्तेज और मनोवसाद Melancholy ग्रस्त रोगी पर सावधानी से इसे प्रयोग करना चाहिये। जव किसी रोगी के रक्त का दवाब कम Low Blood Pressure होता है, तो उस पर प्रयोग नहीं करना चाहिये। क्योंकि इससे इस अवस्था में लाभ भी नही होता है। राल की रक्त के दबाब पर कोई क्रिया नहीं होता, परन्तु उसके द्वारा निद्रा अवश्य आती है उन्माद की अवस्था में प्रयोग करते समय रोगी को पथ्य रूप में दही, भात का प्रयोग कराना उत्तम रहता है, वातप्रकृति मनुष्यों को सर्पगंधा का दुग्ध के साथ प्रयोग कराना चाहिये। रक्तचापाधिक्य में मूल चूर्ण का प्रयोग करते हैं। विशेषत: अनिद्रा में रात्रि को सोते कमय घृत के साथ प्रयोग कराना उत्तम रहा करता है। एसा ही क्रम आज भूरिश व्यवहृत है।

सर्पगंधा की मात्रा को देश काल, वय, आदि देखते हुये निश्चत करनी चाहिये। साधारणतया वात संस्थान पर प्रभाव डालने अथवा उपयोग करने के लिये ८-१५ रत्ती उचित मात्रा होती है। वातसंस्थानिक रोगों के लिये यथोचित मात्रा में मूल चूर्ण लेकर मरिच पारसीक यवानी सदृश औषधियों को भी चूर्णित कर शर्वत के साथ दिन में दो वार देना चाहिये। इससेउन्माद अपस्मार, अपतन्त्रक, अनिद्रा, ब्लेडप्रेशर आदि नष्ट होते है। विशेषत: उच्चरक्तचाप में लग भग ६-८ रत्ती सर्पगंधा चूर्ण का मिश्री के पानी के साथ प्रयोग करना चाहिये। इसी के साथ शिलाजतु का प्रयोग अत्युत्तम रहा करता है। यह विद्वानों का परीक्षित योग है। ताम्र भस्म अल्प मात्रा में भी ठीक रहती है। उन्माद में सर्पगंधा का प्रयोग करते हुये मात्रा बढ़ाते रहना चाहिये।

अनिद्रा आदि में प्रयोग करने के लिये आधुनिक औषध निर्माण कर्त्री कम्पनियों ने सर्पगधा के विभिन्न योग बनाये हैं साथ ही हमारी आयु-

वैदिक फार्मेसियों भी इसमें पीछे रही हों-यह बात नही। अनेक योग बना डाले गये। सर्पगंधा घन वटी, सर्पगन्धा योग आदि बन गये है। एलोपेथिक चिकित्सा बिज्ञान में इसके टिंचर रोबल्फिया (संयुक्त क्षाराओं की कुल मात्रा चौथाई प्रतिशत)-मात्रा १५-३० बूंद या १-२ सी० सी०, रोबल्फिया लिक्विड एकसट्रेक्ट (एल्कोहल १० प्रतिशत की सहायता सेनिर्मित) मात्रा ३-६ बूंद या १ बटे ५ से २ बटे ५ सी० सी० और रोबल्फिया ड्राईएक्सट्रेक्ट मात्रा-आधे से १ ग्रेन। सर्पीन टेब्लेट तो खूब चल ही रही है। उन्माद में सर्पगंधा चूर्ण का १॥ माशा से ३ माशा तक प्रयोग करते हैं।

प्रबल ज्वर में सर्पगन्धा का प्रयोग करने से अशांतता का मोह दूर होता है। प्रलाप दूर होकर, आँखों का वर्ण भी स्वाभाव पर आ जाता हैं। ज्वर बेग भी न्यून होता है। अकारण लिंगोत्थान से जिन्हें निद्राभंग और शिरःशूल होता हैं तथा पूयमेह के कारण अत्यन्त ध्वजोच्छाय से शिश्न वक्र हो जाता है। तब यह लाभ करती है, स्त्री एवं पुरुषों दोनों पर इसकी समान क्रिया होती है। सर्पगन्धा का उपचार गर्भिणी के जरायु का संकोच करता है। कष्टार्तव में भी उपयोग करते हैं। भारत में प्राचीन काल से सर्प आदि के विषों में इसे पर्याप्त प्रयोग करते हैं। इसे प्रतिविष (Antidote) के रूप में व्यवहार करते हैं। गर्भाशय पेशी के बिस्तार करने वाली होने के कारण सर्पगन्धा को प्रसव के समय प्रयोग करते हैं। सर्पगन्धा का क्रिमि-रोग, अग्निमांद्य, उदरशूल में भी प्रयोग किया करते हैं। सर्पगन्धा के उपयुक्त मूल की परीक्षा अवश्य करें— मूलं खण्डयित्वा खण्डित भागे तृणेन समान जल युतस्य सोरकद्रावस्य बिन्दुः-प्रदेयः तत्र नातिचिराद्रक्त बर्णता भवति, सत्व-स्याल्पेऽल्प.ऽऽधिकेऽधिकेति अधमोत्तमपरीक्षाऽपि।'

बस स्थानाभाव से इतना ही प्रकाश डाल सका हूँ।

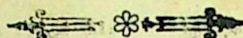
[शेषांश ५३ पेज का]

कंद पर सांप के आकार गंदल निकलता है, सिमला प्रांतमें बहुत होता है, टकसाल में इसको "गोहका, आदा" कहते हैं" यह बनस्पति क्या है इसका निर्णय तज्ञों को करना चाहिये।

आयुर्वेदीय बनस्पतियों का निश्चय करना एक कठिन समस्या है, मैंने यहां यथामति नाकुली का बिचार किया है, इसमें कोई लिपि-दोष या परस्पर बिरुद्ध अंश हो तो बिद्वान वैद्य उसे प्रकाशित करके नाकुली का निश्चय करें यह मेरी नम्र सूचना है;

कुटज

कविराज श्री यतीन्द्रनाथजी गोस्वामी; वैद्यभूषण कतरासगढ़,(धनबाद)



धनबाद के प्रतिष्ठित चिकित्सक श्री गोस्वामी जी द्वारा कुटज पर संक्षिप्त किन्तु खोजपूर्ण प्रकाश डाला गया है। विभिन्न पत्रों में आप लेख लिखते रहते हैं आपके लेख उत्तम साहित्यपूर्ण होतेहैं। कुड़े की छाल पर महत्वपूर्ण विवेचन पढ़कर पाठक अवश्य ही लाभ उठायेंगे।

—ज्ञानेन्द्र पाण्डेय

भैषज्य अनुसन्धान कमेटी की घोषणा के बाद से पाश्चात्य चिकित्सक समाज में 'कुड़ची' के सम्बन्ध में हलचल मचगयी है तथा साथ ही साथ 'कुड़ची' का व्यवहार भी बढ़ गयाहै। भारतीय बनौषधि लेकर बहुतों ने खोज किये हैं शायद 'कुड़ची' के विषय में ही ज्यादा खोज हुआ है। आमाशय में 'कुड़ची' एक विशेष काम करने वाली दवा है।

प्राचीन काल से ही कुड़ची'को भैषज रूप से व्यवहार हो रहा है। यह साधारणत: बंगाल, आसाम, मध्यप्रदेश, गुजरात, त्रिवांकुर, ब्रह्मदेश, इत्यादि स्थान में अधिक मात्रा में पाई जाती है। इसके शाखाग्र कोमल, पत्र तोड़ने से सफेद रस निकलता है। वर्षा ऋतु में सफेद फूल से पेड़ ढक जाता है। इसके बीज को इन्द्रजव कहते है। यह देखने में जव की तरह है तथा ऊपर रोंए हैं। कुड़ची' का संस्कृत नाम कुटज:, देश भेद से इसके नाम–हिं०–कुड़कारैयां, म०–काल्ला-कुड़ा, सफेद कुड़ा, उत०–कुड़िया, ते०–अंकुड़ चेट्टू, बंगला कुष्ट, आसाम में कुटज कहा जाता है, ले०-(Holarrhna Antidysen teriea) एवं एलोपैथी में-(Wrightia Antidysenterica) कहते हैं।

चरक संहिता में कुड़ची के दो भेद देखे जाते हैं। एक सित कुड़ची या सित कुटज, जिसका छिलका पीला, फल बड़ा, फूल सफेद, बीज का रंग कत्थई तथा स्वाद में कड़वा। दूसरा असित कुड़ची या असित कुटज। असित कुटज का छिलका श्याम, फूल लाल, फल छोटा, बीज काला, स्वाद में मधुर रस। चरक संहितामें प्रथमको पु० कुटज तथा दूसरे को स्त्री० कुटज कहा जाता है। लैटिन में दो नाम हैं। जैसे—सित कुटज के नाम Holarrhna Antidysenteria वैसेही असित कुटजके नाम (Wrightio Tiretoria) बंगाल में सित कुटज ही अधिक मात्रा में पाई जाती है। असित कुटज साधारणतः मध्यप्रदेश, गुजरात इत्यादि स्थान में अधिक मात्रा में पाई जाती है, यद्यपि यह देखने में एक नहीं पर गुण में कोई फर्क नहीं है, भैषज अनुसंधान कमिटि कुड़ची का नाम 'होलारेना उल्लेख करने से लगता

है वह बंगाल के कुड़ची के ही खोज के फल उल्लेख किये है, हमलोग साधारणतः सितकुड़ची व्यवहार करते हैं इसके ही फलप्रद गुण लिखे जा रहे हैं।

कुड़चा छाल तथा बीज कडुआ कषाय रस उष्ण, अग्नि दीपक तथा शीतवीर्य यह अर्श, अतिसार, पित्त, रक्तदोष, आंवदोष तथा कुष्ट रोग नाशक कहा जाता हैं पर आमाशय या रक्त आमाशय के लिये ही यह अत्यन्त उपकारी है इसकी तरह रक्त आमाशय का दूसरा दवा नही है, ऐसा कहने से ज्यादती नही होगी, इसके छिलके पर पटासियम, सोडियम, कलसियम लोह घटित लवन, आटा तथा अन्य जैव पदाथ एवं कुर्चिसिन Kurschine कुर्चिनKurchin तथा कनिर्सिन Co-nerssine नाम के उपक्षार एकत्र संमिश्रित अवस्था में रहते है एवं बीज में स्थायी तेल है तथा [वह तेल अतिमकएसिड, प्यमिटिक तथा रेसिन अलिक एसिड]के मिश्रण से प्रस्तुत होता है, इसको छोड़कर मिउसिलेज डेक्सट्रिन, ग्लुकोज काष्टमय, पदार्थ एवं उपक्षार हैं।

कुड़ची के विषय में आलोचना करने से देखा गया है कि १८५८ ई० Haines 'कुड़ची के छिलके से Conessine नाम के उपक्षार सबसे पहले अविष्कार किए हैं एवं १८८० ई० में R.C.Datt महाशय ने Kurch cine नाम का उपक्षार Alklaloid निकाले है तथा कहे है कि यह पुराना आमाशय के लिये अत्यन्त उपकारी दवा हैं, और भी बहुत लोगों ने कुड़ची के विषय में अलोचना किये है, इनलोगों के बिचार से इसके छिलके तथा बीज संकोचक, आमाशय नाशक ज्वर तथा क्रिमि नाश कर है बहुतो का बिचार यह है कि रक्तातिसार की सबसे उत्कृष्ट दवा ही 'कुड़ची' है।

चरक 'सुश्रुत भाव प्रकाश इत्यादि ग्रन्थ में कुड़ची के अनेक रोग नाशिनी शक्ति का उल्लेख देखा जाता है। कुड़ची की तरह आंव, रक्त की और दवा नही है रक्तातिसार' रक्तार्श, आंव रक्त तथा अमाशय के साथ ज्वर रहने में यह दवा बहुत ही उपकारी है कुड़ची के छाल से तैयार कुटजाअवलेह दवा अत्यन्त धारक, फौरन रक्त रोधक, नया पुराना रक्तातिसार में समान फलदायक प्रथक रक्तातिसार में कुन्थन युक्त उदरामय में ग्रहणी दोष में यक्ष्मा अतिसार में रक्तार्श तथा रक्तदस्त में भी यह कार्यकारी है। कुटिजारिष्ट बहुत ही जल्दी रक्त के साथ मिलकर उपकार दर्शा देता हैं। पक्कातिसार में तथा रक्तातिसार में यह फलप्रद इसको छोड़कर यह भूख बढ़ाते और पाचक शक्ति बढ़ाते हैं। कुड़ची बीज इन्द्रजव तथा और कई एक रोगों में फलप्रद चरक के बिचार से इन्द्रयव कुष्ट रोग के लिये हितकर कुड़ची के छिलके के क्वाथ द्वारा धोने से व्रण अर्थात् फोड़ रोपन होता है। इस बिषय में परीक्षा होना चाहिये वाण भट्ट के बिचार से कुड़ची रक्तार्श को प्रशम करते हैं रक्तार्श में पहले ही रक्त वन्ध करने का कोशिश करना चाहिए

दूषित रक्तस्तम्भित होने से शूल अनाह एवं विसर्पादि रक्तज दोष उपस्थित होता है रक्तार्श रोगी को निम्नलिखित दवा सेवन कराने से शीघ्र उपकार होता है:—

(१) कुड़ची के छिलके- २ तोला जल १६ तोला शेष ४ तोला इस जलमें शुन्ठी का चूर्ण एक आना मिश्रित करके रक्तार्श रोगी को सेवन कराने से शीघ्र उपकार होता है।

(२) कुटज लेह:—रक्तार्श दूर करने के लिये महोषध। इसके उपादान एवं प्रधान वस्तु हो 'कुड़ची' मूल के छिलके, तैयार करने का नियम: 'कुड़ची' मूल के छिलके १२॥ सेर जल ६४ सेर शेष ८ सेर यह क्वाथ छानकर उसके साथ पुराना गुड़ ४ सेर एवं घी १ सेर मिलाकर बनाना पड़ेगा। उसके बाद भल्लातक बिड़ंग, त्रिकटु, त्रिफला, रसांजन चितामूल, इन्द्रयव' वच, अतीस तथा वेल शुंठ प्रत्येक का चूर्ण ८ तोला मिलाकर प्रक्षेप देकर उतारकर ठंडा होने पर मधु ६४ तोला मिला लेना पड़ेगा। मात्रा चार आना से आठ आना तक।

अब इस उपादान के गुण विचार करने से देखा गया कि -कुड़ची मूल के छिलके:—रक्तशोधक, पुराना गुड़: वातघ्न, भल्लातक-अर्शोघ्न, बिड़ंग—क्रिमिघ्न शुंठ- ग्राही पिप्पली–त्रिदोष नाशक मरिच–ग्राही हरीतकी–त्रिदोष नाशक आंवला त्रिदोषनाशक, वहेड़ा कफवातघ्न रसायन रक्तशोधक, चितामूल-दीपन, इन्द्रजव, वच–अग्निवधक, अतीसा–दीपन वेलशुठ–ग्राही, मधु–त्रिदोष नाशक

भेषज अनुसंधान कामटि 'कुड़ची' को आमाशय रोग नाशक कहे हैं यह रक्ताश की चमत्कारक दवाहै इसकी परीक्षा करना चाहिए आधुनिक वैज्ञानिकों के विचार से कड़ची के बीजस्थ (इन्द्रजव में) स्थायी तेल (Fixeal oil) पर इसका क्या निर्भर करता है इसलिये आमवात, अतिसार रोग परिपाक नाली की श्लैष्मिक झिल्लि पर क्या करता है छिलके में उपक्षार धुना तथा लेइ रहने से पुराना अमाशय तथा रक्तातिसारमें क्या करता है तथा एमेचिन से भी अधिक फल देता है।

इन लोगों के विचार से एमेटिन में केवल क्षार संस्पर्श क्रिया देखा जाता है और कुड़ची के छिलके में क्षार तथा अम्ल उभय संस्पर्श क्रिया परिलक्षित होतां है वर्तमान समय में कुड़ची के तरलसार बहुल रूप से व्यवहार होते हैं आयुर्वेद में जितने द्रव्य कच्चा व्यवहार करने के लिये कहा गया है कुड़ची के छिलके इनमें अन्यतम इसीलिये कुड़ची के छिलके व्यवहार करने के समय पक्का पेड़ तथा जिस पेड़ में हरसाल फल होता है ऐसे पेड़के नीचे का छिलका कच्चा अवस्था में व्यवहार करना पड़ता है तथा बीज सूखा अवस्था में व्यवहार करना चाहिये

यद्यपि कड़ची के विषय में बहुत खोज हुआ हैफिर भी और खोज करने का है एवं और खोज करने से अनेक नया बिषय आविष्कार होगा।

स्वर्णक्षीरी



वैद्य श्री प्रकाशचन्द्र जी जैन
आयुर्वेदरत्न, हापुड़

प्रस्तुत लेख हापुड़ में स्थित आयुर्वेद-सेवा-सदन के संचालक श्री जैन द्वारा लिखा है। आपने वर्षों रत रहकर सत्यानाशी पर विभिन्न अध्ययन किये। तदुपरान्त साहित्यबद्ध कर 'माला' के वाचकों को भेंट किया है। वास्तव में इस मामूली सी सर्व प्राप्य बूटी में पैनसिलीन से भी अधिक आश्चर्य जनक गुण हैं, इनसे सबको लाभ उठाकर आयुर्वेद को समुन्नत बनाना चाहिये।

—ज्ञानेन्द्र पाण्डेय

सं० स्वर्णक्षीरी, हेमक्षीरी, कटुपर्णी, पीतदुग्धा, स्वर्णा, कांचनी, तिक्त दुग्धा, रुक्मिणी इत्यादि। हिन्दी—सत्यानाशी, बं०—स्वर्ण क्षीर, पीला-धूतरा, मं०—काटे धोतरा, गु०[दारुड़ी, फा०—बादजान—दस्ती, अ०—शजरतरउलशूम, लै-० Argemone-Mexicana

परिचय—

स्वर्ण क्षीरी जिसको हिन्दी में सत्यानाशी कहते हैं हमारे देश में मैदानी प्रान्तों में बहुतायत से उत्पन्न होती है। इसको करीब २ सभी वैद्य जानते हैं। यह सत्यानाशी का क्षुप स्वयंभू होता है जो कि उत्तरी भारत में सर्वत्र पन्जाब, (यू० पी०) देहली इत्यादि में सड़कों के किनारे, रेलवे लायन के आस पास, बञ्जर भूमि एवं खेतों में वर्षा ऋतु के पश्चात दिखाई देता है। इसके पत्ते १ से १॥ वालिश्त तक लम्बे हो जाते हैं, जो कि सफेदी युक्त हरे से होते हैं। पत्तों एवं शाखाओं पर श्वेत वर्ण के छोटे २ कांटे बहुतायत से होते हैं। इसकी नरम २ टेहनियों के तोड़ने से एक तीक्ष्ण गन्धयुक्त पीत वर्ण का दुग्ध निकलता है। फर्वरी मार्च के महीने, में इस पीले रंग के पुष्प आते हैं। इसका फल चोकोर प्याले के समान होता है जिस में छोटे २ काले रंग के बीज होते हैं। जो कि आग पर बारूद की तरह चटकते हैं। इसका क्षुप १ से ३ फीट तक हो जाता है। यह प्रायः प्रत्येक ऋतु में होता है। अप्रल, मई में यह क्षुप सूख जाता है और इसके बीज नीचे भूमि पर झड़ जाते हैं,। जिससे वर्षा के पश्चात पुनः नये पौदे फूट निकलते हैं। यह क्षुप कहीं २ तो इस प्रचुरतासे होता है कि इससे खेत के खेत भरे हुए दिखाई देते हैं। इसी लिये भारतीय किसान इससे परेशान है। इसके बीजों को तेली लोग सरसों में मिलाकर पेल लेते हैं जो कि हानिकारक है। इसकी जड़ को आयुर्वेद में चोक कहते हैं।

सत्यानासी से अत्यन्त मिलता जुलता क्षुप ऊंट कटारा का होता है किन्तु ऊंट कटारे पर फल गोल २ हरे नीले से लगते हैं और फल पर चपटे होते हैं। कहते हैं कि यह क्षुप भारत में अमेरिका से आया है।

रसायनिक विशेषण

यह बूटी अहिफेन कुल से है किन्तु इस में अहिफेन (अफीम) की तरह मादकता नहीं है, इसमें दो क्षारोद बरबेरीन (Barberine)

प्रोटोपीन (Protopine) पाये गये हैं। यह उल्लेखनोय है कि वरवेरीन चारोद रसोत ममीरा तथा ममीरी में भी पाया गया है । वरवेरीन अत्यन्त कडुवा पीत वर्ण का होता है। वरवेरीन के खाने से कुछ ही घन्टों में मूत्र का रंग पीला हो जाता है, जिससे ज्ञात होता है कि यह बहुत शीघ्र रक्त में मिलकर मूत्र मार्ग से शरीर से निहरण हो जाता है, यह फोड़ों तथा आमवात में लाभदायक है।

इसके बीजों से २२-३६ प्रतिशत तक तेल निकलता है। इसका बिशिष्ठ घनत्व २५ सैं० पर ०६२.६; ६० सैं०पर रिफ्रैक्टिव इरडैक्स Refractive Irdex १.४६०१; साबूनी करण मान १६०;अणु आयोटीनमान १२०; और एसिडमान १२:२ पाया गया है। इस तेल के मिश्रित अम्लों में ओलीक एसिड २२ ०/० प्रतिशत और लिनोलिक एसिड ४८ प्रतिशत होता है, कुछ नमूनों में पामीरो ओलिक एसिड लगभग ६१ प्रतिशत पाई गई है।

आयुर्वेद तथा यूनानी ग्रन्थों में इस बूटी का बहुत कम वर्णन है जो की नहीं के वरावर है और एलोपैथी में तो इसका प्रयोग है या नहीं यही कह सकता है कि आधुनिक वैज्ञानिकों ने इसके रासायनिक विश्लेषण पर अधिक ध्यान नही दिया है। बरना इसमें बहुत से द्रव्य है, जिस पर अत्यधिक शोध को आवश्कयता है। यह बूटी मैदानों में इस कदर उत्पन्न होती है कि इससे भारतीय किशान बहुत परेशान है। इसकी बहुतायत को लक्ष्य कर और इसको निष्फल समझते हुये राजकीय वैज्ञानिकों ने इस पर विचार करना आरम्भ कर दिया है और अपने अनुभवों से यह सिद्ध किया है कि यह बूटो खाद के रूप में प्रयुक्तकरने से पैदावार को अत्यन्त बढ़ाती है इसकी मिलाबट को सरसों के तेल से रोकने के लिये भारतीय केन्द्रीय तिलहन कसौटी में स्वर्णक्षीरी के तेल की परख तथा परिमापन करने के सम्बन्ध में एक योजना राष्ट्रीय रासायनिक प्रयोग शाला पुना में चलाई थी; उपरोक्त स्वर्णक्षीरी प्रयोग शाला में स्वर्णक्षीरो को सरसों के तेल में मिलाबट में एसी बिधियां निकाली गई हैं जो कि सरसों के तेल ४००० में स्वर्णक्षीरी का १ भाग तेल भों बिद्यमान हो तो उसे पहिचाना जा सकता है। वास्तव में स्वर्णक्षीरी तथा इसका तेल औषधि रूप में ही व्यवहृत होसकता है, ताकि खाद्य पदार्थों में औषधि रूप में तो मल्ल, कुचला, मीठातेलिया इत्यादि का मी प्रयोग आयुर्वेद यूनानी तथा एलोपेथी में प्रचुरता से होता है।

उपयोगी बूटी

स्वर्णक्षीरी एक अनुपप्रयुक्त बूटी समझी जाती है किन्तु यह गुणों की दृष्टि से स्वर्ण से भी अधिक मूलवान् तथा उपयोगी है, जिसको प्रकृति ने मुक्तहस्त हो इस देश के मैदानों में उत्पन्न किया है। किन्तु यह हमारी अज्ञानता है कि हम अपनी कच्ची पैदाबार से पूर्णतया लाभ नहीं प्राप्त करते उनमें एक स्वर्णक्षीरी भी प्रमुख है, वैद्यबर पर्वतों वनों तथा दुष्गम्य स्थानों में जड़ी बूटियों की तलाश में फिरते हैं किन्तु दिन रात अपनी निकट वाली बूटियों को, निष्फल समझकर उपेक्षा करती है । मैं स्वर्णक्षीरी पर

एक दीर्घकाल से अनुभव कर रहा हूँ और उसका इस लेख द्वारा वैद्य समाज के कर कमलों में समर्पित करता हूँ।

पैनिसिलीन आज संसार की सर्व श्रेष्ठ मूर्धन्य औषधि मानली गई है, क्योंकि यह अनेक रोगों का उन्मूलन करती है। इसी प्रकार एलोपैथी में उन्माद रक्तचाप Blood Praswl हिस्टेरिया, आक्षेप, अनिद्रा इत्यादि मानसिक रोगों पर सर्पगन्धा बूटी को अद्वितीय माना गया है। सर्प गन्धा भी भारतीय बूटी है, जिसको भारतीय वैद्य; हकीम, वर्षों से प्रयोग करते आ रहे है। हकीम अजमलखाँ मरहूम वातज, उन्माद पर निर्भर होकर इस बूटी का प्रयोग किया करते थे। लेकिन यह पहाड़ी बूटी है जिसकी जातियां प्रजातियां १०० से भी अधिक है।

इसके अतिरिक्त स्थान भेदसे भी इसके गुणों में अन्तर पाया गया है। आज इसकी अमरीका में बहुत मांग है और भय है कि इसी प्रकार इस जड़ी को बाहर भेजा गया और इसकी पैदावार की समुचित व्यवस्था न की गई तो इसका अभाव ही न हो जाय। सर्पगंधा की अत्यधिक उपयोगिता के कारण मंहगी भी अधिक हो गई है।

हम उपरोक्त दोनों औषधियों पेनिसिलिन तथा सर्पगंधा के मुकाबले में सर्वत्र प्रचुरता में प्राप्त होने वाली, निरर्थक समझी जाने वाली बूटी स्वर्णक्षीरी को प्रस्तुत करते हैं और वैद्यसमाज आधुनिक वैज्ञानिक प्रयोगशालाओं से अनुरोध करते हैं कि वे इसकी परीक्षा कर देखें कि हमारे लेख में कहां तक सत्यता है। जिन २ रोगों में पेनिसिलीन तथा सर्पगंधा व्यवहृत होता है, उन सभी रोगों में स्वर्णक्षीरी का प्रयोग करें और पेनिसिलिन के जितने विकल्प आज तक बनाए गये हैं वे सब इससे बनाये जा सकते हैं जो कि पेनिसिलिन से उत्कृष्ट होंगे। इसके अतिरिक्त स्वर्णक्षीरी जिन २ रोगों में कार्य करती है यह विशेषता पेनिसिलिन तथा सर्पगंधा में नहीं है। फिर इस औषधि का उपयोग भी बहुत सरल तथा सस्ता है। यह एन्टीवाईटिक Antibitic है। इसका सविस्तार विवरण इस प्रकार है।

प्रयोग विधि—

स्वर्णक्षीरी का प्रत्येक अङ्ग औषधिरूप में प्रयुक्त होता है। मैं प्राय: निम्न योग इस दिव्य बूटी को निम्न विधि से प्रयोग करता हूँ।

(१) स्वर्णक्षीरी की जड़ का चूर्ण।

(२) घनसत्व।

(३) स्वर्णक्षीरी तेल।

(४) बीज।

(५) सूचीवेध

स्वर्णक्षीरी की जड़—वह ग्रहण करनी चाहिये जब कि इस पर फूल और बीज न आये हों, फूल और बीज आने पर इसकी जड़ इतनी वीर्यवान नहीं होती है। इसकी जड़ को प्रात: काल विधि पूर्वक लाकर जड़ के ऊपर की छाल उतारनी चाहिये और इसको सुखाकर वस्त्रपूत चूर्ण बना लेना चाहिये। इसकी जड़ के बीच का भाग अनुपयोगी है अत: इसको प्रयोग नहीं करना चाहिये। जड़ घुन खाई हुई नहीं होनी चाहिये। इस वस्त्रपूत चूर्ण की मात्रा ४ र० से १ मा० तक है। इससे अधिक मात्रा रेचक तथा वामक है।

घनसत्व विधि से इसका घनसत्व बना लेना चाहिये, इसकी मात्रा २ से ४ र० तक है। घन सत्व को मन्द २ अग्नि पर बनाना चाहिये और यह ध्यान रखना चाहिये कि घनसत्व जले नहीं इसके घनसत्व में एक दोष है कि यह सदैव गीला सा पिच्छल शिलाजीत की तरह बनता है पूर्णत: शुष्क नहीं होता है चाहे आप इसको मई जून के महीनों में क्यों न बनावें। मैं इस दोष को दूर करने के लिये इसमें इसकी जड़ का चूर्ण मिला दिया करता हूँ। यदि किसी रोगी को ४ र० की मात्रा से वमन हो जाय तो समझना चाहिये कि यह मात्रा अधिक है इससे कम देनी चाहिये।

स्वर्णक्षीरी तैल

इसके परिपक्व काले बीजों को कुचल कर बादाम रोगन की मशीन में तेल निकालना चाहिये या किसी तेली से तेल निकलवाना चाहिये, पातालयन्त्र से निकाला हुआ तेल सेवन करने योग्य नहीं है। अलवत्ता इसका वाह्य प्रयोग हो सकता है। इसका तेल पीतवर्ण का सुन्दर आभा युक्त होता है इसकी मुख द्वारा सेवन मात्रा—२ से ३ बूंद तक है अधिक मात्रा रेचक है। रेचक के लिये पूर्ण मात्रा ३०–४० बूंद है। इसका रेचन उत्तम एवं निरापद है।

इसकी सूचीवेध विधि एवं प्रयोग इत्यादि हमारी पुस्तक 'आयुर्वेदिक सफल सूचीवेध' में देखिये।

हमारा अनुभव—

स्वर्णक्षीरी का मानव शरीर के प्रत्येक स्थान पर प्रभाव होता है। यह जीर्ण से जीर्ण कष्टसाध्य असाध्य समझे जाने वाले रोगों की एक मात्र औषधि है। जिसके गुणों को देखकर आश्चर्य होता है नवीन रोगों की अपेक्षा जीर्ण रोगों में अधिक कार्य करती है और जहां वहुमूल्य रस भस्म निष्फल होती हैं वहां इससे सफलता प्राप्त होती है।

शिरो रोग—

साधारण शिर शूल, किसी रोग के कारण शिरशूल, जीर्ण शिर शूल, सूर्यावर्त, अर्धावभेदक, (आधाशीशी), अनन्तवात, इत्यादि नया या पुराना किसी भी प्रकार का शिर शूल हो सबको निराकरण करने के लिये इसका सूचीवेध प्रति दिन अथवा जड़ का चूर्ण ४ र० दिन में ३ बार प्रात:, सायं, रात्रि को वा घनसत्व या तेल २ से ४ बूंद तक प्रात: सायंकाल बतासे में सेवन कर ऊपर से दूध का पीना एक सफल सिद्ध उपचार है सूर्यावर्त, अर्धावभेदक तथा अनन्तवात, जीर्ण प्रतिश्याय के प्रकुपित होने से उत्पन्न होते हैं जो कि बड़े जिद्दी एवं कष्टप्रद रोग हैं। अनन्तवात में तो रोगी की आंख तक नष्ट हो जाती है। मोतियाबिन्द से पूर्व भी रोगी के शिर में असह्य वेदना होती है एसी समस्तावस्थाओं में इसका सूचीवेध सर्वोत्कृष्ट है।

मुख द्वारा स्वर्णक्षीरी को प्रात: सूर्य निकलने से पूर्व सेवन करनी चाहिये और साथ ही ऊपर से मावे की कोई वस्तु या दुग्ध लेना चाहिये। प्रतिश्याय की जीर्ण से जीर्ण अवस्था में इससे उत्तम कोई अन्य औषधि नहीं हैं। प्रतिश्याय के बिगड़ने पर कभी २ रोगी को गन्ध दुर्गन्ध का भी ज्ञान नहीं रहता है इसकी आयुर्वेद में

पीनसप्रपीनस रोग के नाम से कहागया है, इस रोग की एलोपैथी में कोई चिकित्सा नहीं है हमने एसे कितने ही रोगी स्वर्णक्षीरी से अच्छे किये है और कितने ही रोगी बिगड़े नजले जुकाम (जीर्ण प्रतिश्याय) के जो कि डाक्टरों के सूचीवेध लगवा लगवा कर हताश हो चुके थे स्वस्थ किये है। शिरशूल तथा प्रतिश्याय में एलोपेथी में प्राय: एसप्रीन, एसप्रो इत्यादि बहु प्रचलित है और जिनका क्षणिक प्रभाव होता है रोग को समूल नष्ट नही करती है और हृदय तथा मस्तिष्क के लिये हानिकारक हैं। वास्तव में एसप्रीन एसप्रो जैसी औषधियों का प्रयोग मांस पेसियों को सुस्त कर देता है। इससे वेदना कम रहतो है जब तक इसका प्रभाव रहता है वेदना कम रहती है फिर कुछ घन्टों के बाद पुन: वेदना ज्यो की त्यों हो जाती है। इसके लगातार सेवन से लाभ यह होता है कि रोगी के रग पट्टे सुस्त पड़जाते हैं। इसी लिये समझदार एलोपेथिक चिकित्सक एसी औषधियों का व्यवहार नहीं करते हैं। स्वर्णक्षीरी में कोई एसा दोष नहीं है, प्रत्युत यह मस्तिष्क एवं हृदय को वल प्रदान करती है और इसका लाभ स्थाई होता है।

स्वर्ण क्षीरी मस्तिष्क के कीड़ोंको और उसके समस्त उपद्रवों को नष्ट करती है। इस हेतु इसके सेवन के साथ२ इसके तेल को नाक में लगाना भी चाहिये इससे कीड़े छीकों द्वारा बाहर निकल कर शान्ति हो जाती है। मस्तिष्क से कीड़े प्रतिश्याय के बिगड़ने से ही उत्पन्न होते हैं। इसके अतिरिक्त किसी २ रोगी को जीर्ण प्रतिश्याय के कारण अत्यधिक छींके आया करती है जिनकी दिन भर में कोई गिनती ही नहीं होती है इससे रोगी बड़ा परेशान होता है इसमें भी स्वर्णक्षीरी एक सफल प्रयोग है। हमने कतिपय एसे रोगी स्वर्णक्षीरी से स्वस्थ किये हैं।

मानसिक रोग

मानसिक रोगों में उन्माद, आक्षेप, हिस्टेरिया, अनिद्रा इत्यादि रोग आते है। इन सब पर स्वर्णक्षीरी अद्वितीय है। उन्माद में नींद नहीं आती है सभी चिकित्सक पद्धतियों में सर्व प्रथम रोगी को निद्रा जनक औषधि दी जाती है, एलोपैथी में निद्रा जनक औषधियां पोटेसियम ब्रोमाईड एवं अहिफेन इत्यादि हानि कर है, सर्प गन्धा अतिउष्ण तथा रूक्ष है जो कि प्रत्येक प्रकृति के अनुकूल नही होती है। स्वर्णक्षीरी उत्तम कक्षा की निद्रा जनक निरापद है जोकिसी प्रकार की मादकता नही करती हैं। दूसरी मुख्य वात उन्माद रोग की चिकित्सा में यह है कि उन्माद रोगी को सप्ताह में कम से कम एक बार तो अवश्य ही कोई तीव्र रेचक देकर उसका कोठा शुद्ध करना चाहिये। एसा कराने से उर्ध्वगामी बायु अधोगामी हो जाती है और रोग का वेग घट जाता है। इस हेतु १ माशा से १॥ माशा तक स्वर्णक्षीरी का तेल दुग्ध के साथ द या इसकी जड़का चूर्ण ६ मासे तक घोट कर जल से दे।

हमने उन्माद रोग के ६-१० रोगी स्वस्थ किये है जिनको हम प्रतिदिन स्वर्णक्षीरी का सूचीवेध मांसगत और ४ र० स्वर्णक्षीरी की

जड़ का चूर्ण प्रातः सायं बकरी (अजा) दुग्ध से पिलाते थे। पथ्य में बकरी का दूध और फल थे रोगी इस उपचार से ३–४ सप्ताह में स्वस्थ हो जाते हैं। स्वर्णक्षीरी जड़ की छाल के चूर्ण के बजाय स्वर्णक्षीरी का तेल २–६ बूंद बताशे में रख कर दुग्ध से दिया जा सकता है। स्वर्णक्षीरी का तेल निद्रा जनक एवं नितान्त निरापद है। इसी प्रकार हिस्टेरिया, आक्षेप, वांयटे आना, पक्षाघात, अर्दित, सुषम्ना नाड़ी के रोगों पर स्वर्णक्षीरी एक अनुभूत महौषधि है जो कि सर्प गन्धा से अधिक लाभ करती है और किसी प्रकार की गरमी या खुश्की नही करती है। जब कि सर्पगन्धा अति उष्ण और रूक्ष है । हमने सर्पगन्धा को भी कतिपय रोगियों पर प्रयोग किया है इसके इन दोषों को नष्ट करने को इसमें ब्राह्मी, शंख पुष्पी इत्यादि को मिलाना पड़ा।

नेत्र रोग

आंखों का आना, रोहे, दृष्टिमान्द्य में इस के सेवन के साथ २ इसके दुग्ध को सलाई द्वारा नेत्रों में लगाना सर्वोत्कृष्ट है रोहों में तथा नेत्रों के दुखने में तो केवल इसके दुग्ध का एक दो सलाई ही लगाना पर्याप्त होता है। पेन्सलीन की ट्यूब रोहों में सर्वोत्तम समझी जाती है। किन्तु हमारा सब से अनुरोध है वहां इसके दुग्ध को सलाई द्वारा नेत्रों में लगा कर देखें और निर्णय करें कि दोनोंमें कौन उत्तम है स्वर्णक्षीरी के स्वरस अथवा दुग्ध में काले सुरमे को खरल कर उस में कपूर इत्यादि मिलाकर सुरमा बनाया जा सकता है जो नेत्र रोगों में उत्तम कक्षा का लाभदायक होगा

जिह्वा रोग

जिह्वा के छाले, तथा गद गदत्व में इसका दुग्ध या हरे पत्तों को कुचलकर जिह्वा पर मलना चाहिये और घनसत्व की वटी प्रातः सायंकाल जल से सेवन करने से अत्यंत लाभ होता है गद गदत्व जन्म से नहीं होना चाहिए प्रायः अधिक उष्ण शुष्क औषधियों के कारण यदि यह रोग उत्पन्न हुआ हो जैसा कि मन्थर ज्वर (मयादी· बुखार) में प्रायः होता है ऐसी अवस्था में इस से लाभ होता है। इससे बादाम, मुनक्का और काली मिर्च की चटनी मिश्री मिलाकर भी देनी चाहिए

फुफ्फुसीय रोग

प्रत्येक प्रकार की कास श्वास पर कंटकारी सदृश कार्य करती है। कफ को सरलता से निकालती एवं फुफ्फु को शक्ति प्रदान करता है।

स्वर्णक्षीरी फेफड़ों की क्षय में भी उत्तम कार्य करती है। इसमें रोगी के फेफड़ों में दर्द रहता है व्रण हो जाते हैं और रक्त मिश्रित कफ आता है इसमें रोगी को प्रतिश्याय तथा मन्द २ ज्वर भी होता है। यूनानी में इसको सिल कहते हैं। इस असाध्य रोग में स्वर्णक्षीरी एक विश्वसनीय महौषधि है। यह क्षय को समस्त उपद्रवों सहित समूल नष्ट कर देती है। शक्ति के लिये स्वर्णभस्म प्रातः सायंकाल इसके घनसत्व या जड़ के चूर्णके साथ दिया जा सकता है किसी २ रोगी को इसके प्रयोग से ज्वर बढ़ जाता है उसमें घबराना नहीं चाहिये क्योंकि स्वर्णक्षीरी दोषों को प्रथम बलात्कार ऊपर लाती है फिर नष्ट करती है, यह शामक नहीं है।

निमोनियां में आज कल पेनिसिलिन का सूचीवेध सर्वोत्तम माना गयाहै, किन्तु स्वर्णक्षीरी का सूचीवेध नितान्त निरापद, पेनिसिलिन से किसी भी प्रकार कम नहीं है। यह सूचीवेध रोगी के समस्त उपद्रवों, प्रलाप, वक्षस्थल का दर्द शोथ इत्यादि को नष्ट करता है। जो इसका सूचीवेध न बना सकें वे इसका घनसत्व २ र० या जड़ का चूर्ण ४ र०, श्रीमृत्युञ्जय रस २ र०, शृंगभस्म २ र०; ऐसी चार मात्रा दिन भर में ४-४ घंटे के अन्तर से दें। पथ्य में उष्ण जल तथा गरम २ चाय दें और छाती पर कोई गरम तेल मलें या केवल तारपीन का तेल मलें। इस उपचार से रोगी २-४ दिन में ही पूर्ण स्वस्थ हो जाता है।

यकृत आमाशय तथा आंत्र रोग

स्वर्णक्षीरी आमाशय की वायु का अनुलोमन करती है, भूक बढ़ाती है तथा टट्टी साफ लाती है यकृत के प्रत्येक रोग में लाभदायक है किन्तु यकृत शोथ पर इसको नहीं देनी चाहिये, यह उदरशूल नष्ट करती है और इसका नियमित सेवन रक्ताल्पता को नष्ट करता है।

अतिसार में यह एक रामवाण औषधि है, इस रोग में प्रथम (कच्चे मल) को निकालना चाहिये। फिर अतिसार के वेग रोकने की औषधि देनी चाहिये। यह इसके घनसत्व को २ र० की मात्रा मल का सम्यक प्रकार से निकालती है अतिसारों में इसमें ४ र० प्रति मात्रा के हिसाब से शंख भस्म मिलाने से अतिसार रोकती है। संग्रहणी में स्वर्णक्षीरी घनसत्व २ र० या जड़ का चूर्ण ४ र० शंख भस्म ४ र० दोनों मिला कर तक्र से साधारण अवस्था में केवल जल से दें और पथ्य में गौतक्र, चावल इत्यादि दें तो इसके प्रयोग से निश्चय ही लाभ होता है। आयुर्वेद में संग्रहणीमें स्वर्णपर्पटी आदि उत्तम कक्षा के रस रसायन हैं किन्तु यह भी किसी से कम नहीं है। इसकी विशेषता यह है की यह आन्त से सञ्चित मल का निर्हरण करती है और आन्त्र को शक्ति प्रदान कर आन्त्र रोग को नष्ट करती है। संक्षिप्त, यह पाण्डु' रक्ताल्पता अजीर्ण, उदर शूल गुल्म आध्मान, विबन्ध, अतिसार, संग्रहणी, प्रभृति रोगों को नष्ट करती है।

अर्श—

अर्श अति कष्ट साध्य एवं पीड़ा जनक होता है। स्वर्णक्षीरी दोनों प्रकार की वातार्श, तथा रक्तार्श को कुछ ही दिनों में निर्मूल करती है। इस हेतु इसकी जड़ का चूर्ण अथवा धन सत्व अथवा इस के बीजों के तेल को दुग्ध से प्रातः सायंकाल सेवन करना चाहिये मस्सों पर इस तेल का घन सत्व अथवा जड़ को ही घिस कर लगाने से कुछ ही दिनों में मस्से मुरझा जाते हैं पैसिलीन उदर, यकृत, आन्त्र अथवा अर्श रोग में कोई कार्य नहीं करती है।

वीर्य रोग एवं नारी रोग—

आज पुरूष-स्त्री गणोंमें गुप्त रोगोंकी बाहुल्यता है। पुरूष गुप्त रोगों के अन्तरगत स्वप्नदोष, प्रमेह, शीघ्रपतन, नपुंसकता, प्रमेह, (सुजाक) उपदंश (आतशक भी गुप्त रोगों में प्रदर, रक्तप्रदर गर्भाशय रोग प्रभृति आते हैं स्वर्णक्षीरी समस्त वीर्य

एवं नारी रोगों को एक शतशानुभूत औषधि है। बीर्य रोगों के लिये आयुर्वेद तथा यूनानी में प्राय: जो योगहैं वे सब बिबन्ध कारकहैं। और क्षुधाको नष्ट करते हैं। बीर्य रोगी एवं प्रदर रोगी को स्वत: ही बिबन्ध रहता है और अग्निमन्द हो जाती है अत: ऐसी अवस्था में बिबन्ध कारक औषधि हानि प्रद होती है इसी प्रकार चिकित्सक बीर्य रोग बिशेष कर शीघ्रपतन में धतूरा अहिफेन, कुचला, मल्ल, इत्यादि हानि कारक प्राणिज औषधियां का प्रयोग करते है जिनसे क्षणिक लाभ प्रतीत होकर अन्तमें सभी हानिकारक सिद्ध होते है हमारी स्वर्णक्षीरी सवथा उत्तम दोषों से मुक्त है। अबिबाहित स्वप्नदोष, प्रमेह, प्रसूति प्रदर में इसकी जड़ का चूर्ण १ माशा तक अथवा घन सत्व २ र० से ४ र० तक या इसी मात्रा में बीजों को जल से लें और बिबाहितों को दुग्ध से दें स्वर्णचोरी समस्त धातुओं का पोषण करतीहै। यह मस्तिष्क, नेत्र, हृदय, फुफ्फुस यकृत आन्त्र, वृक्क इत्यादिका वल प्रदान करतीहै इसका नियमित प्रयोग २-३ मासा तक करना चाहिये प्राय: बीर्य एवं प्रदर रोगी १–२ सप्ताह में ही स्वस्थ होना चाहते हैं एसी समस्त औषधियां अधिक तर हानि प्रद होती हैं उपरोक्त गुण भी पैनिसिलीन में नहीं है

सुजाक—

सुजाक में पैनिसीलीन मानी गयी औषधि है किन्तु स्वर्णक्षीरी भी सुजाक में पैनिसीलीन से किसी प्रकार कम नहीं हैं चाहे परीक्षा करके देख लीजिये। इस हेतु स्वर्णक्षीरी का दुग्ध १ माशा बताशे में रखकर ४ बार दिन में ताजे जल से लें या स्वर्णक्षीरी स्वरस २॥ तो०, मधु १ तो० मिला कर प्रयोग करें। इससे मूत्र भी खुलकर आता है और पीब भी समाप्त होता है। इसके स्वरस को फाड़कर अच्छी प्रकार से कपड़े का २–३ तह में छानकर पिचकारी लेना भी बहुत लाभदायक है, बिशेष कर पुराने सुजाक में।

उपदंश

उपदंश पर पेनिसिलिन कोई बिशेष कार्य नहीं करती है। इस रोग पर रसकपूर, पारद के योग, मल्लयोग (N. A. S.) इत्यादि का प्रयोग होता है। ऐसी औषधियां लाभ के बजाय हानि कारक अधिक हैं और प्रत्येक प्रकृति के अनुकूल भी नहीं हैं। स्वर्णक्षीरी उपदंश की सफल, सद्यः फलप्रद, सरल, सस्ती एवं निरापद है। इस हेतु इसकी जड़ का चूर्ण १ मा० २॥ तो० मक्खन से प्रात:, सायं, रात्रि में लें पथ्य में—बेसनी रोटी लें और नमक, खटाई, तेज इत्यादि का परहेज रक्खें। इनमें स्वर्णक्षीरी का सूचीवेध भी अधिक काम करता है।

वृक्करोग

स्वर्णक्षीरी के स्वरस २॥ तो० में ४ र० शोरा कलमी मिलाकर प्रात: सायं प्रयोग करने से मूत्र खुलकर आता है। यदि गुर्दों में पथरी, संगरेजे इत्यादि हों तो वे नष्ट हो जाते हैं। इससे मूत्र कृच्छ्र, मूत्रजलन, वृक्कशूल इत्यादि भी नष्ट होतेहैं

रक्त दोष

स्वर्णक्षीरी उत्तम कक्षाकी रक्तशोधक औषधि है। फोड़े, फुन्सियां, दाद, खाज पर किसी भी

रक्तशोधक औषधि से गुण में कम नहीं है। इसके अतिरिक्त यह अन्तर्विद्रधि पर भी उत्तम कार्य करती है! हमारे पास एक रोगी ऐसा आया जिसकी बस्ति स्थान में फोड़ा था। इसका एक्सरे भी किया गया था, इसको असह्य वेदना थी। स्थानीय डाक्टरों एवं अन्य डाक्टरों ने उसको शल्यशस्त्र का परामर्श दिया था। हमने स्वर्णक्षीरी के सूचीवेध लगाए और वह एक मास में पूर्णतः स्वस्थ हो गया।

दाद एवं अन्य त्वचा रोगों पर इसका तेल लगाना ही पर्याप्त है। इसी प्रकार पामा में भी इसका तेल सरसों के या तिल के तेल में मिलाकर मलना लाभदायक है। व्रण चाहे कैसा हो सड़ा गन्धा हो इसके बीजों को पीसकर लगाना कुछ दिनों में भर देता है। यह व्रणों के मल का शोधन करता है और उनको भरता है।

ज्वर और स्वर्णक्षीरी

स्वर्णक्षीरी समस्त प्रकार के नये पुराने ज्वरों पर कार्य करती है। किन्तु नये ज्वरों की अपेक्षा जीर्णज्वरों पर अधिक कार्य करती है। यह मलेरिया, साधारण ज्वर, मन्थर ज्वर (म्यादीबुखार) तथा मिश्रित ज्वर इसमें रोगी को ज्वर हर समय रहता है और किसी समय शीत लगकर ज्वर बढ़ जाता है), प्रसूतिका ज्वर, वातश्लेष्मिक ज्वर (Influenza), चूहे काटे का ज्वर, तथा अन्य किसी विषैले जानवर के काटे का ज्वर पर यह एक विश्वसनीय औषधि है। इस हेतु इसका घनसत्व २ र०, दिन में चार मात्रा ४-४ घंटे के अन्तर से दें और ज्वर रोगी को अन्न किसी भी अवस्था में न दें। खाने में केवल चाय, दूध इत्यादि ही लेना चाहिये। जीर्णज्वर, धातुगत ज्वर, न समझमें आनेवाले ज्वरपर यह अद्वितीय एवं आश्चर्य जनक है। जीर्ण ज्वरों में ज्वर मन्द रहता है। स्वर्णक्षीरी के प्रयोग से ज्वर किसी २ रोगी को बढ़ जाता है क्यों कि दोषों को यह बाहर निकालती है ऐसी अवस्था २-३ दिन तक ही रहती है। इससे चिकित्सक को घबराना नहीं चाहिये। फिर यह शीघ्र ही ज्वर को नष्ट कर देती है।

मन्थर ज्वर और मलेरिया में पेनिसिलिन हानिप्रद है। समाचार पत्रों में प्रायः प्रकाशित होता रहता है कि उक्त रोगी की पेनिसिलिन ने अत्याधिक उपद्रव उत्पन्न किया। इसका कारण केवल पेनिसिलिन का अन्धाधुन्ध प्रयोग है। मलेरिया में कनीन अथवा इसी के अन्य मिश्रण अत्यधिक उष्ण और रूक्ष हैं जिसके किसी रोगी को अत्यधिक हानि (कम सुनाई देना, मूत्र में रक्त आना इत्यादि) होती है। फिर कनीन नये मलेरिया में अधिक कार्य करती और जीर्ण मलेरिया में बहुत कम और किसी २ रोगी को तो हानि भी करतीं है। स्वर्णक्षीरी न अति उष्ण और रूक्ष है और जीर्ण मलेरिया पर कनीन से अधिक कार्य करती है।

मन्थर ज्वर में एलोपैथी में आज जितनी भी औषधियां प्रयुक्त होती हैं वे समस्त हानिप्रद बहुमूल्य हैं ज्वर को जड़ से नष्ट नहीं करती हैं, वरन् दबाती हैं। जिससे रोगी को बार २ ज्वर होने लगता है, आंत्र दुर्बल हो जाती है। हमने देखा है कि किसी २ रोगी के तो शिर के बाल ही उड़ जाते हैं और अति उष्ण औषधियों के

प्रयोग से कभी २ रोगी गूंगा हो जाता है। स्वर्ण क्षीरी मन्थर, ज्वर में एक निर्दोष एवं सफल औषधि है। वैद्यवर अनुभव कर देखें। यदि मन्थर ज्वर रोगी को अतिसार भी हो तो उसको चाय के अतिरिक्त कुछ न दें और स्वर्णक्षीरी घन सत्व १ से २ र० तक शंखभस्म २ से ४ र० तक मिला दें।

मसूरिका

चेचक में इसके घन सत्व के प्रयोग से दाने खूब निकलते हैं ज्वर तथा अन्य उपद्रव शीघ्र नष्ट हो जाते हैं चेचक में जल उबला हुआ ०/४ भाग अवशिट, बादाम,मुनक्का की चटनी, देना चाहिये और ज्वर उतरने तक लंघन कराना चाहिये।

स्वर्ण क्षीरी विष जनित रोगों पर भी अच्छा कार्य करती है। एक बार हमारे पास एक ब्राह्मण' का लड़का आयु १२ वर्ष का आया उसको बावले कुत्ते ने काटा था। उसने इसके लिये एलोपेथिक सूचीवेध भी लगवाए थे, किन्तु २ वर्ष बाद उसको इसके उपद्रव होने आरम्भ हो गये थे हमने स्वर्णक्षीरी के प्रयोग से पूर्ण सफलता प्राप्त की।

स्वर्णक्षीरी की एक बिशेषता है कि इसकी अधिक मात्रा वामक व रेचक है और अल्पमात्रा इसके बिपरीत। इसका नियमित सेवन शरीर की पुष्टी, तुष्टी व रसायन करता है। राजयक्ष्मा के समान उपद्रव प्रतिश्याय, कास; फेफड़ों के व्रण, कफ के साथ खून का आना, वक्षस्थल का शूल, सन्धिवात शूल, ज्वरं प्रभृति को नष्ट कर इस असाध्य रोग से मुक्त कर सकता है। इसके साथ २ पुष्टि के लिये स्वर्ण भस्म, अभ्रक भस्म का भी प्रयोग कराना चाहिये। निषेध—स्वर्ण क्षीरी शोथ शीतपित्तमें हानि कर है।

स्वर्णक्षीरी से समस्त धातुए उपधातुए उत्तम बनती है। यह उड़न शील द्रव्यों पारद, हिंगुल रसकपूर, हड़ताल, रससिन्दूर इत्यादि को स्थाई करता है। स्वर्णक्षीरी के तेल में यदि पारद डाल दिया जाय तो आपके देखते ही देखते ५ मिनट में अदृश हो जायगा और फिर इसको खरल करने से एक विटवत काली पिष्टी सी बन जाती है इसको अग्नि पर उड़ाने से पारद श्वेत आभायुक्त चमकदार सुन्दर प्राप्त होता है जो कि शुद्धहै और औषधियोंमेंप्रयुक्त करने योग्य है स्वर्णक्षीरी का रसायन बाद से बहुत घनिष्ट सम्बन्ध है।

अंतिम वक्तव्य

उपरोक्त लेखसे कुछ पाठकों को अतिशयोक्ति का भ्रम हो सकता है किन्तु यह हमारा अनुभव है जिसकी सफलता की परीक्षा का निर्णय केवल परीक्षा से ही हो सकता है। हमने इसका सफल सूचीवेध भी बनाया है जो कि उपरोक्त सभी गुण करता है। यदि हमारी प्रयोग शालाए आज इस बूटी पर बिधिवत परीक्षण करे तो यह भी निरर्थक समझी जाने वाली बूटी अन्तर्राष्टीय ख्याति प्राप्त कर सकती है। सर्पगन्धा पागलों की बूटी कही जाती है किन्तु स्वर्णक्षीरी उसका स्थान लेगी। पैनिसिलीन अनेक रोगों के नष्ट करती है किन्तु स्वर्णक्षीरी पैनिसीलीन सेअधिक रोगों को नष्ट करती है। यदि कोई व्यक्ति हमसे इस के सन्बन्ध में कोई शंका निबारण करना चाहे तो वह सहर्ष हमको लिख सकता है।

विडंग

प्रस्तुत लेख 'अनुभूत योगमाला' के संचालक महोदय द्वारा लिखित है। आयुर्वेद जगत में माननीय श्री वैद्यराज गण्यमान्य विद्वान माने जाते हैं। आपने अपने सम्पूर्ण जीवन को ही आयुर्वेद की सेवा में लगा दिया है। अपनी आर्थिक, मानसिक शारीरिक सभी प्रकार की शक्तियों को आयुर्वेद विकाश हित न्योछावर कर दिया। आपकी विद्वत्तापूर्ण शैली से लिखित इस लेख द्वारा विडंग पर अच्छा प्रभाव पड़ता है। अबतक हुई खोजों को भी लेखक महोदय ने प्रस्तुत किया है।

—ज्ञानेन्द्र पाण्डेय

श्री आ० म० पं० विश्वेश्वरदयालु जी वैद्यराज, बरालोकपुर (इटावा)

हिं०—बाइविडंग, ते०—वायुडिंग पुचेट्ट, व०—वर्वट्टि, अम्बर, काकंणनी, ता०—वायविल गु० वाविडंग, मरहटी—वायविडंग, कारकेन्नि, पं०—ववुक, ने०—हिमलचेरी, फा०—विरंजकाबुली, अ०—वरन्जाकसफ, अं०—अम्बालिया रायबस, (Fmbalia Ribes), संस्कृते—वेल्ल, वेल्ल: अमोघा, चित्रतण्डुला, चित्रतण्डुलम्, तण्डुल: रसायनी, रसायन, पावक:, भस्मक:, कृमिकण्टक: कुमिघ्न: कृमिशत्र: गर्दभ, कैराती, कतारि, जन्तुघ्नी, मृगगामिनी, कैराली, गह्वरा, कापाली वरा, सुचित्रवीजा, वृषनाशन:। गुण:—संस्कृते—कटु उष्ण लघु कफवातघ्नम्, शूलाध्मानोदरघ्नं अग्निमान्द्यारुचिकृमिघ्नम्। रा० नि० व० ६। ईषत्तिक्तं विषघ्न कृमिघ्नञ्च। सु० सू० अ० ६।

अमाघा, चित्रतण्डुला, रसायन, रसायनी, जन्तुघ्नी, वृषनाशन: यह नाम इसके विशेषता के सूचक हैं इन पर प्रकाश डालेंगे जहांतक हमारा स्वाध्याय है और भी बिद्वानों को अपने अनुभवों का प्रकाशित कर इसे पूर्ण करना है।

वलगम (कफ) सौंदा (पित्त) और गियाह (गलीज वायु) लसदार खिलत को दस्तों को राह निकालती हैं और जोड़ों में जुड़ी हुई रतूवत को छांटती है, मेदे व आंतों के कीड़ों को मय थैली के निकाल फेंकती है। जहरीली नहीं।

मात्रा, १० मासे तक है, इसका प्रतिनिध, तुमुस व कबीला है। दर्पघ्न, कतीरा और मस्तगी है। स्वभाव, गर्म और खुश्क है। आंतों को हानि कर है ज्यादा दिन देने से।

पहिचान—इसकी मोटी झाड़ी होती है डालियां खुरदरी वहुत गांठों वाली, पत्ते २–३इंच लम्बे ऊपर से कुछ चमकदार, फूल सफेद, फल, काली मिर्च के समान होते हैं और गुच्छों में लगते हैं इसके अन्दर बीज निकलता है।

भारतीय चिकित्सा में अपने कृमिघ्न गुणों के कारण यह बहुमूल्य औषधि समझी जाती है, महर्षि सुश्रुत ने "सर्वोपघातशमनीय" औषधिको रचकर उसपर कमाल किया और कलम तोड़दीहै

शरीरस्योपघाता ये दोषजा मानसास्तथा।
उपदिष्टा प्रदेशेषु तेषां बक्ष्यामि वारणम्॥

शरीर को हानि पहुँचाने वाले जो भी दोषज (बात, पित्त, कफज) तथा मानसिक सत्व रज, तम की बिकृतिसे जितने भी बाहरी भीतरी रोग हो सकते हैं उनका उन्मूलन इससे होता है।

इससे दोनों विज्ञानों की रक्षा होती है आजकल का विज्ञान कृमिजन्यरोग मानता है हमारी यह जन्तु नाशक औषधि उन हानिकर कृमियों का निवारण (नाश) कर हमें आरोग्य दीर्घजीवन देताहै यह वाह्य, आभ्यन्तरीयकीटाणु नाशक है इस पर वैद्यों को विशेष रूप से अनु-संधान करना चाहिये।

सुश्रुत और चरक में इसके विशेष गुणों पर प्रकाश डाला गया है वह हम दिखा रहे हैं। और रसायन या रसायनी इसका नाम साथक कर रहे हैं बिचारें अनुभव करें—

सर्वोपघातशमनीयं रसायनम्। सु०चि० अ०२७

तत्रविडंग तण्डुलचूर्णमाहृत्य यष्टीमधुयुक्तं यथावलं शीततोयेन उपयुञ्जीत शीततोयं चानु पिवेदेवमहरहर्मासं। तदेव मधु युक्तं भल्लातक क्वाथेनवा मधुद्राक्षाक्वाथयुतंवा,मध्वामलकरसाभ्यां वा, गुडूची क्वाथेन वा, एवमेते पंचप्रयोगाः भवन्तिः जीर्णे मुद्गामलकयूषणालवणेनाल्पस्नेहेन घृतवन्तमोदनमश्नीयात् एते खलु अर्शांसि क्षपयन्ति कृमीनुपघ्नंति, ग्रहणं धारणशक्तिं जनयन्ति, मासेमासे प्रयोगे वर्षशतमायुषोऽभि-वृद्धिर्भवति॥ सु० चि० अ० २७ गद्य ७

विडंग के छिलकों को जरा सा रगड देने से ऊपर की भूसी दूर होकर उसके बीज निकल आते हैं इन्हें महीन पीस कपड़ छनकर रखलें और छिली हुई मौरेठी को कूट पीस कपड़ छन कर अलग २ रखलें फिर वरावर बजन कर एक खरल में ८ घंटे घोट कर शीशी में बंद करलें, मात्रा ३ माशा से १ तोला तक ठंडे जल से लें और ठंडा पानी ही प्यास लगने पर पीवे इस प्रकार यह १ मात्रा प्रातःकाल ही लें एक मास तक। इसे मधु से भी चाटा जा सकता है २–भिलावे के क्वाथ से ३ दाख, मोरेठी के काथ से ४ मोरेठी, आमला काथ से ५ गुडूची काथ से ले इस प्रकार इसके पांच प्रयोग एवं बिधान होते हैं यथा बलकाल रोग देख अनुपान निश्चत करना। भूख लगने पर मूंग और आमलायूषः बिना नमक के और थाड़ा घृत मिला पुराने चांवलों का भात भी दे सक्ते हैं इससे अर्श, कृमि, ग्रहणी, रोग नष्ट होते हैं प्रति बर्ष एक मास प्रयोग कर लेने से १०० बर्ष की आयुवृद्धि होती है।

सुश्रुत में बिंडग तण्डूली एक दूसरी रसायन का प्रयोग भी है—

बिडंग मींग १६ सेर लेकर एक घडे में डाल पानी डाल इतना उबालें कि मींग गल जाय और पानी भी शेष न रहे इसे पीस मधु जल मिला एक मिट्टी के पात्र में बन्द करके जमीन में गाड़ दें इस पर बर्षाऋतु के चारों महीने आषाढ, सावन, भादों, क्वार; बीत जाने दें। फिर इसे निकाल शुद्ध शरीर (पंचकर्म) करके एक हजार आहुतियाँ गायत्री मंत्र से देकर इसका शुभनक्षत्र काल देख प्रातः हवन कर इसका प्रयोग करें। भोजन उपरोक्त प्रकार से करें, बालू (राख) बिछा करसोवे, जमीन पर एक मास बाद समस्त शरीर से कृमि निकलेंगे, इन्हें अणु तेल और वांस की चोपों से हटाते रहें, दूसरे महीने चीटिया तीसरे महीने जुंबा, निकलेंगे उन्हें भी उपरोक्त बिधान से हटाते रहे। चौथे महीने में दांत, नख, रोम निकल पड़ेगे, पांचवे महीने में देवरूप की प्राप्ति

देवरूप की प्राप्ति होगी श्रवणशक्ति नेत्र शक्ति विशेष रूप से बढ़ेगी रज, तम, नष्ट हो सत्व गुण की वृद्धि होगी, वेदगान करने वाला, हाथी के समान बल, घोड़े के समान तेजी होतीं है, १०८ बर्ष की आयु होती है इसमें अणु तेल का मर्दन, अजकर्ण काथ मलने को, खश से पका कुये का पानी स्नानार्थ, आहर-विहार भिलावा सेवन के समान । सु० चि० अ० २७ गद्य ८ ॥

चरकाचार्य ने भी एक विडंगाबलेह का वर्णन किया है यथा—

विडंगतण्डुल चूर्णा नामाढक माढकं पिप्पली तण्डुलानामध्वर्द्धाढकम्। सितोपलासर्पि स्तैलम- ध्व:ढकैः षड्भिरेकीकृत घृत भाजनस्थं पावृषि भस्मराशा बिति सर्व समानं पूर्वेण यावदाशीः ॥ च० चि० अ० १ गद्य ६

बिडंग मींग का चूर्ण ४ सेर, पीपल के दाने ४ सेर, वंशलोचन, घृत, तैल तिल, मधु एक २ वस्तु २–२ सेर लेकर घृत पात्र में भरकर राखके ढेर में दबा रखें चार मास वर्षा का जल उस पर पड़े ऐसे स्थान में रख दें बाद को निकाल प्रयोग करै। इससे भी १०८ बर्ष की उम्र होती हैं।

बम्बई के प्रसिद्ध वैद्य झंड् भट्ट ने अपने रोगियों पर इस सर्वोपघात शमनीय रसायन का प्रयोग अपने रोगियों पर करके लिखा है। कि इसमें अग्नि बर्धक, कृमि नाशक, रक्तशोधक वात कफ नाशक, ज्ञान तंतुओं को शक्ति बर्धक ये सब गुण पाये जाते हैं। इससे अतिसार' संग्रहणी अर्श मंदाग्नि से होने वाले रोग अफारा, गुल्म, शूल-बगैरह और कफ से होने वाले प्रमेह उपदंश, भगंदर, कंठमाला, कुष्ट, रक्त की अशुद्धतासे होने वाले तथा कृमि जन्य रोग उन्माद, अपस्मार. अर्द्धाङ्ग वात ज्ञान तंतुओं की निर्बलता से होनेबाले रोग और क्षय, खांसी, श्वास फेफड़ोंको विकृति से पैदा हुये रोगों में इससे बहुत उत्तम लाभ होता है। इसके अतिरिक्त हैजा, मलेरिया, प्लेग, वगैरह जन्तु जन्य रोगों के आक्रमण के समय इस प्रयोग का सेवन करते रहने से इन रोगों के आक्रमण का भय नहीं रहता।

जंगली जड़ी बूटी के लेखक वैद्य शास्त्री शामलदास गौर लिखते हैं, कि हमने भी सर्वोपघात शमनीय का कई रोगियों पर सफलता पूर्बक अनुभव किया है–इसमें प्रथम बस्तु बिडंग है जो समस्त प्रकार के कृमियों को नष्ट करने में सर्वोत्तम बस्तु है, और दूसरी बस्तुमुलैठी है जो प्राण तत्व की रक्षा करने में और आयु बढ़ाने में अपनी शानी नहीं रखती इन दोंनों बस्तुओं के मिश्रण से यह योग बहुत ही विलक्षण हो गया है। जब कोई रोग बहुत हठीला हो गया हो और किसी भी उपाय से न मिटता हो तब रोगी को पहिले १–२ मास तक इसका प्रयोग करा कर पश्चात रोगोक्त औषधि का प्रयोग कराने से तत्काल फल मिलता है. पित्त जन्य रोगों और पित्त प्रकृति के पुरूषों को यह प्रयोग द्राक्षाकषाय से अथवा गिलोय के स्वरस के साथ देने से वात तथा कफ की प्रकृति वालों को भिलावा काथ से देने से बिशेष लाभ होता है इस प्रयोग को यदि विधी बिधान के साथ प्रयोग किया जाय तो क्षय जैसी प्राणघातक व्याधि से ग्रस्त रोगी तथा उपदंश विष से अन्तिम दर्जे पर पहुँचे हुये तथा व्रण

नासूर, भगंदर, कंठमाला, कुष्ठ, संग्रहणी, अर्द्धांग वात, के असाध्य रोगी भी अच्छे हो जाते हैं

डाक्टर देशाई के मत से बिडंग उष्ण दीपन पाचन, अनुलोमक, मूत्रल उत्तम कृमिनाशक,बल-कारक, मस्तिष्क और मज्जातन्तुओं को शक्ति देने वाली, रक्तशोधक और रसायन होती है। इसको पीने से पेशाब का रंग लाल होता है और उसको अम्लता बढ़ती है इस औषधि की क्रिया शरीर की समस्त ग्रन्थियों पर और प्रधानता से रसग्रन्थि पर होती है यह शरीर की सारी जीवन क्रिया को उत्तेजना देती है।

मनुष्य शरीर पर पारद का जैसा प्रभाव होता है वैसा ही वायविडंग का होता है। इसके लेने से भूंख बढ़ती है। अन्न पचता है। वजन बढ़ता है. त्वचा की कांति दीप्त होती है, शरीर में तेज, मन में प्रसन्नता पैदा होती है। बच्चों के लिये तो दिव्य औषधि है, जिन बच्चों को सूखा रोग हो, खाया हुवा अन्न न पचता हो, हाथ पांव पतले होकर त्वचा ढोली हो गयी हो, और पेट बड़ा होगया हो, एसे बच्चों के प्राण बचाने वाली औषधि वायविडंग ही है–यदि इसे अनंतमूल के साथ दिया जाय तो यह विशेष लाभ करती है, बच्चों को स्वस्थ रखने के लिये वायविडग के दानों को दूध में उबाल कर वह दूध पिलाने से अच्छा रहता है। गंडमाला में सावरशृंग, मन-सिल, और गूगल के साथ मधु से देने से धीरे २ अच्छा लाभ होता है।

मज्जा तन्तु के रोगों (अर्धाङ्ग वायु आदि में) वायविडंग का लहसन के साथ दूध में उबाल पिलाना।

चर्म रोगों में—वायविडंग का भीतरी बाहरी दोनों प्रयोग होते हैं। तरह २ के कुष्ठ रोग तथा चर्म रोग, अन्न की पाचन क्रिया ठीक न होने से ही होते हैं। वायविडङ्ग पाचन क्रिया को ठीक करती है और दस्त साफ लाती है इस लिये चर्म रोग (कुष्ट) पर इसका सुन्दर प्रभाव होता है। चर्म पर उत्तेजक प्रभाव होने से रोग नष्ट हो जाते हैं।

अग्निमांद्य, अरुचि, अजीर्ण, वमन, शूल, अफारा, अर्श में वायविडङ्ग मट्ठे के साथ दिया जाता है। अतिसार, संग्रहणी में क्वाथ बनाकर देते हैं। प्रवाहिका (अमेबिकडिसेन्ट्री) में हम इसका चूर्ण ही देते हैं रक्तामाशय में सत्वर लाभ देता है। अजीर्ण में कभी २ कास, श्वास पैदा हो जाता है तब इसे पीपल के साथ देतेहैं गोल और चपटे पेट के कीड़ों के निकालने के लिये १ तो० वायविडङ्ग का चूर्ण पानी या दही के साथ देते हैं इससे सब कृमि निकल जाते हैं। वाइविडङ्ग देने से प्रथम पेट को साफ करने के लिये अरंडी (काष्ट्रायल) के तेल का जुलाब लेलेना चाहिये और खाली पेट इसे देकर दूसरे दिन जुलाब देना चाहिये। पीनस और आधा शीशी में वायविडङ्ग का चूर्ण सुंघाने से लाभ होता है।

डायमाक के मतानुसार वायविडङ्ग भारतवर्ष में कृमि नाश के लिये अपूर्व दवा मानी जाती है खासकर चपटे कृमियों के लिये यह प्रसिद्ध है। छोटे बच्चों को एक चाय के चम्मच के बराबर मात्रा दिन में दो बार दी जाती है बड़े लोगों को १ तो० तक की मात्रा है। यह बहुत सूक्ष्म, अनु-लोमिक, स्वादिष्ट, सुगंधित और संकोचन होती

है, यह कृमियों को मारकर बाहर निकाल देती है एक दिन प्रथम जुलाब देकर रोगी को तयार कर लेना चाहिये। इसके फूलों को दूध में पकाकर दूध पिलाने का प्राय: रिवाज है इससे बादी और कृमि बच्चों के पेट में पैदा नहीं होते ऐसी जन श्रुति है।

इण्डियन फारेस्टर के अप्रैल १६१६ के अङ्क में घोषित किया गया है कि बाइबिरंग की जड़ का क्वाथ इन्लफ्लूइञ्जा ज्वर पर बहुत ही लाभ कर है इसे दिन में २–३ यार देना चाहिये। ए० सी० परांजपे और जी० के० गोखले ने इस वनस्पति का अध्ययनकर बतलाया है कि बाइबिडंग भारत में बहुत प्राचीन काल से कृमि नाशक धातु की तरह प्रचलित है। यह टेपवर्मस को नष्ट करने में अपनी अद्भुत शक्ति रखती है पर गोल कृमि (रोण्डवर्मस) हूकवर्मस, और ह्विपवर्मस पर कोई प्रभाव नहीं रखती। टेम्पवर्मस पर इसका प्रभाव होने का कारण इम्बेलिक एसिड या इम्बेलिन सार (तत्व) है, जो २.५ प्रतिशत से २,७ प्रतिशत तक पाया जाता है, टेम्पवर्मस के ऊपर इम्बेलिन एक बहुत उपयोगी सुरक्षित ओषधि हैं।

सखाराम अर्जुन का कथन है कि बाइबिडंग का १ तो० चूर्ण सोते समय दही के साथ दिया गया और सुबह रोगा को अरंडी के तेल का जुलाब दिया गया जिसके परिणाम स्वरूप रोगी के चपटे कृमि निकल गये।

वाइविडंग का १ तोला चूर्ण मट्ठे में मिला प्रात:काल देने से पेट के कीड़े मर जाते हैं। इबिड़ंग के कुछ दाने कुचल कर दूध में पोटली वांध डाल पका कर बच्चों को पिलाने से उनका पेट फूलना वंद हो जाता हैं।

बाइविडंग को तमाखू के साथ चिलम पर रख धुवां पीने से आंतों में होने वाला बादी का दर्द वंद हो जाता है।

आयुर्वेद अनुसंधान केन्द्र देहली—दांत और मुख के कठिन रोगों की इसको बिचित्र दवा मानतेहैं परीक्षा करना है वह तो इसे देश विदेश भेज चुके हैं अमेरिका के राष्ट्रपति आइजनहोवर भी इसके विश्लेषण कराने का अपने साथ ले गये है। और रूस आदि भी पहुची है कई डाक्टर इसके परीक्षा में लगे हैं। मैंने अभी तक जितने परीक्षण किये कोई चमत्कारक प्रभाव नहीं देखा इससे मुझे भ्रम है कि यह वाजारू बाइविडंग शायद न हो इसका एक और भेद जंगली है जो दांतों पर प्रभाव करता है। १

पुनर्नवा—को 'रिसर्च' कहकरअपना परिश्रम दिखलानेवाले

इस कथित अनुसंधान केद्र ने 'विडंग' पर दूसरा प्रचार प्रारंभ कर दिया है। मैं पुनर्नवा के इनके अनुसंधान पर काफी अध्ययन एवं सम्पर्क आदि कार्य कर चुका हूँ। इस टाल दिया। अनाबश्यक सम्मान द्वारा दबाने (मनाने)की चेष्टा की गई। वही हाल मुझे बिढंग के विषय में प्रतीत होता है आजकल बायविडग तो कई प्रकार की उपस्थित है कौन सी बिडंग पर इन्होंने खोजकी है! स्पष्टीकरण प्रकाशित क्यों नहीं कराया जाता! मैं इस बिडंग लेख के लेखक (प्रधान सम्पादक जी) के भ्रम से पूर्ण सहमत हूं। बाजारू बिडग पर तो अन्य बिद्वानों ने भी प्रयोग किया है। परिणाम चमत्कारिक तो नहीं हुआ! क्या इन बातों को ही रिसर्च कहते हैं!

—बिशेषांक सम्पादक

बाय बिडंग न० २

हिन्दी में—वायविडंग, मिगी, बम्बई—आ-मटी, आंबट, बवेटी, बायबिडंग नेपाली में–चंचल कलइवोवोटी। लेटिन–Embelia Rohustra इम्बेलिय। रोवुष्टा।

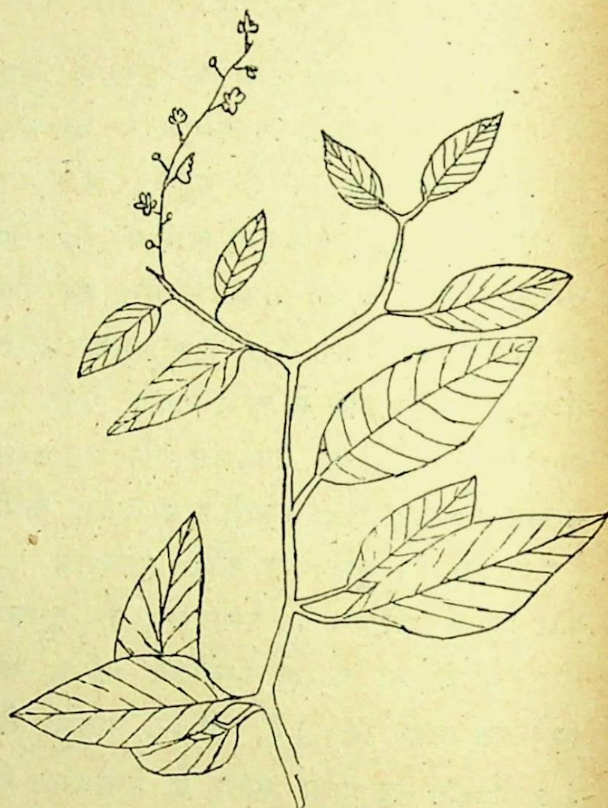
यह भी बायविडंग से मिलता हुआ पौधा है इसके पत्ते ६०३ सेंटीमीटर से ११०५ सेंटोमीटर तक होते हैं। ३०८ से ५०७ सेंटीमीटर चौड़े होते हैं इसके फूल हरापन लिये पीले रंग के होते हैं यह बनस्पति हिमालय में जमुना के पूर्व की ओर बंगाल तक और दक्षणी की ओर सीलोन तक होती है।

यह कोष्ट बायु नाशक, कृमि, अर्श बेदना नाशक, सूजन, दूर करने वाला रसायन होता है इसमें वायबिडंग के समान गुण होते हैं शोथ नाशक विशेष गुण होता हैं।

गंडमाला में इसकी जड़ अनंतमूल के साथ घोट कर पिलाते हैं और पानी में घिस गांठों पर लेप करते हैं।

सडे हुये दांत की पोल में इनके फलों को पीस हींग मिला भरने से दांत का दर्द बन्द कर-ता है इसकी जड़ की सूखी छाल का मंजन करने से भी दन्त वेदना कम हो जाती है

इसके कोमल पत्तों का सोंठ के साथ बनाये क्काथ की कुल्ली करने से गले के छाले मिटते हैं फुफ्फुस के परदे की सूजन में इसके फलों को मक्खन के साथ मिलाकर लेप करते हैं। इसके बीजों के चूर्ण की फंकी लेने से अर्श रोग में आ-राम होता है



शास्त्रीय प्रयोग

आयुर्वेद में इसके मिश्रित प्रयोग तो हैं जिन्हें लिख कर कलेवर बढ़ाना व्यर्थ है बिडंग के नाम पर प्रचलित योग निम्न है—

पानं स कृष्णा कृमिशत्रु चूर्ण
विनाशनं सर्व कृमीरुजानाम्।
बिड़ंग कम्पिल्ल, बिडंगदन्ती, हारीत अ० ५

पीपल, वायबिडंग। बिडंग, कबीला। बिडंग, दन्ती। यह तीन योग कृमिहर है।

पाण्डुमें—बिडंगादिलौह, राजयक्ष्मणि—यक्ष्मारिलौह। कृमिरोगे—बिडंगतैल, बिडंगघृत। व्रण शोथे—बिडंगारिष्ट श्लीपदमें—बिडंगादितैल, आमवात में—बिडंगादिलौह, भैषज्यरत्नावली में आये हैं।

योग रत्नाकर में

बिडंगाद्यवलेह, अग्निमांद्ये। विडंगादितैल, कृमि रोगे। बिडंगादि चूर्ण छर्द्याम्, बिडंगासव वात रोगे। विडंगादि मोदक परिणामशूले, विडंगादि चूर्ण प्लीन्हि, विडंगादितैल श्लीपदे, विडंगादिचूर्ण शोथे, विडंगतण्डुलायचर्वण वा० भ० कल्प अ० २ यह गुल्म प्लीहा, कास हलीमक, वात कफ, के रोगों को दूर करता है।

विडंगादि चूर्ण कुष्ठे, इस प्रकार हजारों योग संग्रह किये जा सकते हैं। मणिभद्रमोदक बंगसेन का रेचन कर मलादि रोग नाशक है।

विडंग चूर्ण (मींग चूर्ण)-१।। से ३ मासा तक उस प्रवाहिका में दें, जल से या मधु से जिसमें आम सफेद के साथ अधिक दर्द होता हो, इसे एमेविक डिसेंट्री कहते हैं।

हमारे अनुभव

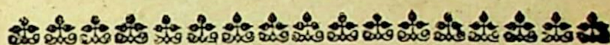
बिडंग मज्जा चूर्ण १।। से ३ माशा तक अभ्रक भ म १ र० मिला देने से सर्व प्रकार की सूजन दूर होती है विशेष कर राजयक्ष्मा केरोगी के पैरों पर आई सूजन दूर होती हैं।

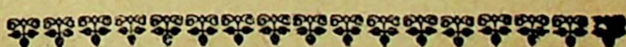
बिड ग, आजवाइन का चूर्ण गर्म जल से देने से विष्टंभहर होता है।

हम अरूचि, दर्द, भूंख न लगने में भी देते हैं यह योग बृ० नि० रत्नाकर का है।

यक्ष्मा में—वाइबिडंग के २५ दाने, लहसन की १ पुथी, नारियल की गिरी ६ मा० को दूध में पका मिश्री मिला छान कर पिलाते हैं। और हर पांचवे दिन २५ दाने और १ पुथी लहसन बढ़ाते है लहसन ५ पुथी से अधिक नहीं, और बाइविडंग के दाने २०० सो से अधिक न करें इसी क्रम से घटावें इतने में ही काश, श्वास, यक्ष्मा सोपद्रव शान्त हो जाता है।

लेख प्रस्तुत करने में—मखजन उलमुफर्दात; शब्द सिन्धु, बृ० औषधि चंद्रोदय, सुश्रत, चरक, बाग्भभट्ट; योगरत्नाकर, हारीत, आदि से सहायता ली गई हैं। उनके लेखकों को धन्यवाद हैं।



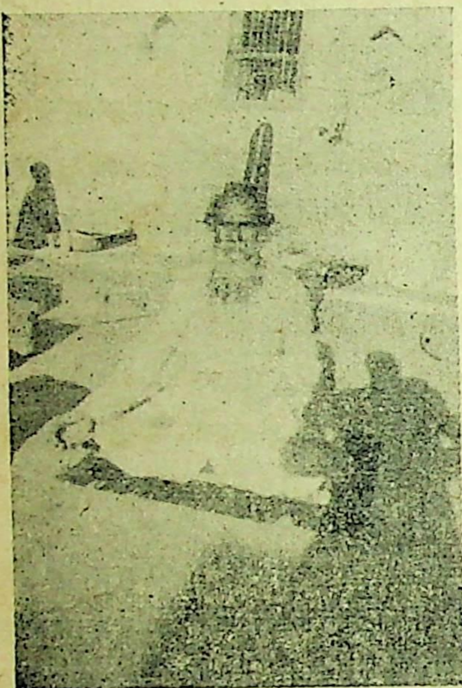


तुलसी

वैद्यराज श्री पं० महेन्द्रनाथ जी अग्निहोत्री
ललुआमऊ (हरदोई)



इस लेख के अनुभवी लेखक श्री मान्य अग्निहोत्री जी ने अपनी वृद्ध अनुभवपूर्ण शैली द्वारा तुलसी पर गम्भीरता से प्रकाश डाला है। आप सफल अध्यापक भी रह चुके हैं, अब अपने ग्रामीण गृह में ही 'महेन्द्रपूजन वानाप्रस्थी' नाम रखकर निवास कर रहे हैं। आशा है इन 'माला' के पुराने लेखक की इस खोजपूर्ण कृति से भी पाठक लाभान्वित होंगे।
—ज्ञानेन्द्र पाण्डेय



तुलसी मानस अर्थात् रामचरित मानस (रामायण) और तुलसी क्षुप दोनों का सेवन साधन सत् चित् आनंद स्वरूप बनाता है। आज वनस्पति विशेषांक के अङ्ग तुलसी क्षुप का वैज्ञानिक ढंग से गुण गान किया जा रहा है।

तुलसी में असीम शक्ति

तुलसी काननं चैव गृहे यस्यावतिष्ठते।
तद्गृहंतीर्थ भूतंहि नायान्तियमकिङ्कराः॥

तुलसीविपनस्यापि समन्ततपावनं स्थलम्।
-क्रोश मात्रं भवत्येव गांगेयेन चाम्भसा॥

तुलसी के आसपास का स्थान पवित्र माना गया उसमें मलेरिया (विषमज्वर) के दूर करने की अद्भु क्षमता है। विषाक्त वायु तुलसी से स्वच्छ हो जाता है मलेरिया के उत्पादन में सहायक मच्छर इससे दूर भाग हैं। यह सब प्रकार के ज्वरों को हटाकर स्वास्थ्य देती जिन रोगियों के स्वास्थ्यार्थ गंगातट के पास जाने में विधा न हो उन्हें तुलसी सेनोटोरियम (स्वास्थ्यगृह) रक्खा जाता है वही लाभ उन्हें यहां मिल जाता है। हम पूर्वज जड़ो पासक नहीं थे, जड़ वस्तुओं को अधिष्ठ देवता मान कर उनकी पूजा किया करते थे। स्वास्थ्य होने से ही धर्म्माचरण में प्रवृत्ति हो सक्ती है।

धर्म्मार्थ काम मोक्षाणामारोग्यं मूल साधनम्।
रोगास्तस्यापि हर्त्तारः श्रेयसो जीवितस्य च॥

अतः स्वास्थ्य वर्धक वस्तु का धर्म्म से सम्बन्ध अ चित नहीं है।

तुलसी की सञ्जीवनी शक्ति

गङ्गा जल और तुलसी के समान गुणों की तुलना हिन्दू प्राचीन विज्ञानानुसार ऊपर लिखी जा चुकी है। समान गुण धर्म्म मिलने से ही महान शक्ति बनती है, इसी हेतु जीवन वृद्धि की अभिलाषा से आज भी हिन्दू लोग अपने रोगियों को अन्तिम श्वाँस तक तुलसी स्वरस मिश्रत गङ्गा जल पिलाते चले आरहे हैं। यदि जीवन शक्ति शेष नहीं है तव भी आत्मा पवित्र होकर सुख शान्ति से लोकान्तर की यात्रा में सफल होती है।

हृदय सम्बन्धी रोग

श्री विश्वनाथ प्रसाद जी एम० ए० लिखते हैं: मेरे एक मित्र जिनकी अवस्था ३५ साल थी। एक बार कुछ अस्वस्थ हुए डाक्टरों की चिकित्सा हो रही थी पर लाभ कुछ भी न था। लोग वड़ी परेशानी में थे फिर उन्हें पटने के वड़े अस्पताल में लाया गया। यहां यह निदान हुआ कि इन्हें कलेजे के धड़कन की बीमारी है उसमें कमजोरी आगयी है। यहां वहुत काल तक दवा कराई, पर लाभ कुछ भी न हुआ, काडलिवर आयल की अनेकों शीशियां साफ हो गई। अन्तिम काल निकट जानकर गंगा सेवन के लिये गंगा तट पर ले गये, वहां उन्हें एक कुटी में रखकर साधारण भोजन दिया जाने लगा। एक दिन घूमते फिरते एक साधू जी आ पहुँचे, उन्होंने कहा कि एक काम करो तुम जल्द अच्छे हो जाओगे सुबह शाम तुलसीदल और गंगाजल का सेवन करो, उनके कहने के अनुसार तुलसीदल और गंगाजल का सेवन कराया गया। एक ही महीने में उनकी बीमारी जाती रही, फिर आज तक कभी भी नहीं हुई।

वक्तव्य

निशान्ते पिवेत् जलमः—ऊषः पान स्वयं अमृत पान है। फिर गंगाजल मिश्रित तुलसीदल तो पूर्ण ब्रह्मरूप है वहां पाप (रोग) कैसे रह सकते हैं। यह हमारा अपना मत है।

आश्चर्य जनक विष नाशक शक्ति

जिला चौबीस परगना ग्राम गोबरगाड़ा निवासी उड़िया माली ने पेड़ के नीचे पड़ा हुआ एक आम का फल उठाकर खालिया था खाने के आधघंटा पश्चात् उसके शरीर में सनसनाहट उत्पन्न हुई, सारा शरीर नीलवर्ण होकर वह अचेत हो गया। और वहुत जल्द धराशायी हो गया दौड़-धूप शुरू हो गई डाक्टरों के अनेक उपचार हुये कोई भी कारगर न हुआ। रोगी मुर्दा घोषित कर दिया गया दैवयोग से पं० हृदयभूषण भट्टाचार्य वैद्य आ गये उन्होंने रोगी के नेत्रों में अपने शरीरकी परछाईं देखकर जीने की आशा पर तुलसी माताका आवाहन किया। अपनेहाथों से लगभग आधपाव स्वरस निकाला रोगी के मुख कान, नाक, आंखों में भरवाया सर्वाङ्ग में भली भांति मालिश कर वाई। आध घंटे वाद रोगी ने कुछ हरकत की अर्थात् मुख में भरे हुये स्वरस को पीने की चेष्टा करता हुआ मालूम पड़ा यह देखकर लोगों का हौसला बढा, और बिशेष रूप से सुश्रूषा करने लगे, दो घन्टे बाद रोगी उठ बैठा और कहने लगा मेरे शरीर में भयंकर दाह हो रही है। यह दाह शरीर में बहुत देर तक

नहीं; रही अल्प काल में ही रोगी चंगा हो गया। तुलसी की यह आश्चर्यजनक शक्ति देखकर सभी लोग दंग रह गये।

विद्युत् शक्ति

तुलसीगन्धमादाययत्र गच्छन्तिमारुत:।
दशोदिश पुनात्याशुभूतग्रामाश्चतुर्बिधान्॥

जहां तक तुलसी की गन्ध युक्त वायु जाता है। दशोदिशायों के रोग प्रसारक जन्तु मच्छर मक्खी, सांप विच्छू आदि को दूर करके पवित्र (रोग रहित) करने का विधान करता है। मानसिक व्याधिग्रसित रोगियों के भूत चुड़ेल जिन्द पीर भगाने को अपूर्व शक्ति रखता है। जहां तुलसी के वृक्ष होते हैं वहां वज्रपात नहीं होता अर्थात् विजली नहीं गिरती। पुराने मठ, मंदिर वाग बगीचों की भूमि में भली भांति तुलसी के वृक्ष लगाये जाते थे। यहां तक कि प्रत्येक आम के पेड़ के पास एक तुलसी का क्षुप जरूर होता था। धार्मिक धनाढ्य पुरुष धूम धाम से आम्रदेव के साथ तुलसी देवी का बिबाह करते थे। यह बात अब भी यदा कदा सुनने में आती है वास्तव में आम्र पेड़को वज्रपात से बचाने के लिये धार्मिक हिन्दू समाज कामनी विनोद पूर्ण वैज्ञानिक रहस्य है। तुलसी की लकड़ी के गुरिया की कण्ठी माला या कमर में धारण करने से वज्रवात का भय नहीं रहता कोई रोग आक्रमण नही कर सक्ता। शारीरिक विजली स्वरक्षित रहती है। यह लोग कुछ सदाचारी, दीर्घजीवी होते हैं। चतुर गृहस्थ नबीन इमारत वनवाते समय हल्दी से रंगे कपड़े में हल्दी की गांठ, तांबा, सुपारी के साथ तुलसी की लकड़ा भी चौखट में बांध देते हैं। जि[illegible] उनका भवन विजली के आघात से स्वर[illegible] रहता है। कुछ माताए ग्रहण के समय पका भोजन सामिग्री में उनकी शक्ति स्वरक्षित र[illegible] के लिये तुलसी पत्र रख देती है। तुलसी लकड़ी मैस्मेरेज्म (मनोयोगिक) खेल तमा[illegible] में प्रयोग की जाती है। बच्चों को गंडा ताबी पहनाते हैं जिससे दांत सुगमता से निकल आ[illegible] है और सूखा रोग नही सताता। भूत बा[illegible] पक्षाघात का भी भय नहीं रहता। स्वरस पिला[illegible] लगाने, अथवा लकड़ी घिसकर पिलाने लगा[illegible] कब्ज से बचाव रखने से चेचक फोड़ा, फुन्सि आदि से रक्षा रहती है। देशोपकारक १५ जून सन् १५ ई० अमृतधारा लाहौर से ज्ञात हुआ नर्मदा नदी के तट के सौ वर्ष से अधिक आयु वाले एक महात्मा का अनुभव है। कि तुलसी बीजों को पीसकर पुराना गुड़ मिलाये, घोट कर झरवेर के वारावर गोली वनाये प्रात: सायं १-[illegible] बटी गोदुग्ध के साथ सेबन करने से बुढ़ापे में जबानी की ताकत आजाती है। बीजों की खी[illegible] पौष्टिक होती है। तुलसी वृक्ष के नीचे की मिट्टी में तुलसी की विद्युत् शक्ति भरी रहती है जो दाद, खाज, छाजन, दर्द शिकम, कब्जियत बुखार आदिक अनेक रोग लगातार के प्रयोग से अच्छे हो जाते हैं।

तुलसी की जन्म कथा

जेहिलागि विरागी अतिअनुरागी विगतमो[illegible] मुनिबृन्दा। निशिवासर ध्यावहि गुनगनगावहि जयति सच्चिदानन्दा॥

भक्त बृन्दा ने ही बिराटात्मा लोक सेवा करके सत्चित् आनन्द स्वरूप सुख लाभ प्राप्ति के लिये ही तुलसी क्षुप का रूप धारण किया है, भगवान् ता भक्तवत्सल ही हैं वह भी तुलसी को शीश पर स्थान देते है। इतना ही नही है तुलसी दल और चुल्लू भर पानो अर्पण कर देने बाले के लिये भी आत्म समर्पण कर देने को रजिष्ट्री करते हैं।—

तुलसीदल मात्रेण जलेन चुलुकेन च।
विक्रीणीतो स्वमात्मनः, भगवद्भक्तवत्सलः॥
पुनः—नैवेद्य युक्तां तुलसी च मिश्रतां,
बिशेषतः पाद जलेन विष्णोः
योऽश्नाति नित्यं पुरतो मुरारेः,
प्राप्नोति यज्ञायुत कोटि पुरायम् ॥ २॥
पुनरपिः—दुःखदौर्भाग्य नाशाय सर्व व्याधि बिनाशनम्।
बिष्णोःपञ्चामृतं पीत्वा पुनर्जन्म न विद्यते॥ ३

भगवान अपने भक्तों को कभी नहीं भूलते वास्तव में रजिष्ट्री करते ही रहते हैं। इस मन्द बुद्धि लेखक को भी अनेकों प्रतिज्ञाए ज्ञात हैं। किन्तु लेखके विस्तार भय से तीन प्रमाण पर्याप्त है आम जनता त्रिवाचक का बिश्वास करती है, अदालत भी तीन वार ही गङ्गाकीकसम लेकर बयान लेती है। सत्वरजःतम त्रिगुण की वात पित्त, कफ, त्रिधातु मयी सृष्टि के ब्रह्मा, विष्णु, महेश त्रिदेब ही प्रमाण मान्य है।

भक्ति में शक्ति

बर्षा ऋतु के सञ्चित् पित्त को जहरीले मच्छर मक्खियों ने विषाक्त बना दिया है। शरत् के आगवन से ही ज्वर, जूड़ी मलेरिया (विषम-ज्वर) ने मानव शरीरों पर धावा बोलना प्रारम्भ कर दिया है।

धार्मिक हिन्दू और तुलसी

माता, बहिन, भाइयों ने शरत् पूनो से ही प्रातः स्नान तुलसीदल पान पूजनकरके शारीरिक और मानसिक चित्त की शुद्धि करनी प्रारम्भ करदी है। इनके आस पास मलेरिया नहीं फटक सक्ता।

ताको अरिका करि सके, जाको यतन उपाय।
जरै न तातीं रेत में; जाके पनही पांय॥

लक्ष्मण जी के शक्ति

लक्ष्मण जी बेहोश पड़े हैं रामादल में शोक सागर के ज्वारभाटे उठ रहे हैं। विभीषण की राय से रावण का प्रायबेट वैद्य सुखेन बुलाया गया सुखेन नारी देखता है थर्मामीटर से शारीरिक सन्ताप नापता है। स्तेथेस्कोप तथा अंगुलियों से हृदयगति की भी जांच करताहै। एक्सरे से अन्तरपट भी देखता है मदिरा, मास रक्त, मिश्रित सूक्ष्माति सूक्ष्म इञ्जेक्शन भी मौजूद हैं। क्योंकि इन्ही का इस्तेमाल रावण सरकार में हुआ करता है। किन्तु यहां तो और ही बात है इन दबाइयों से काम नही चल सकता यह सभी उनकी प्रकृति बिरुद्ध पड़ेगी और रही सही जीबनाशक्ति को अति शीघ्र ध्वन्स कर देबेगी यह लोग तो शाकाहारी वैष्णव हैं। इनके लिये तो हरि प्रिया ही अनुकूल पड़ेगी किन्तुः—लङ्का निश्चर निकर निबासा। यहां कहां सज्जन कर बासा॥ जहां सज्जन कर बासा नहीं वहां तुलसी केरनिबासा कस कस होई॥ रही बिभीषण के घर

की बात वहां के पेड़ उनके चले जाने बाद निश-चरों ने बिध्वंस कर डाले। ऐसा विचार करके सुखेन ने दो चार बोतल तुलसी स्वरस करने की पैदा करने की राम जी से प्रार्थना की सुनते ही हनूमान जी उठ खड़े हुये और बोले कहां है तुल-सी का बन, उत्तर मिला दोंनागिर पर तुलसी का बन है। पबनपुत्र पवनवेग से पवत पर गये और विचार करने लगे की पाँसी दो पाँसी से काम न चला तो लक्ष्मण जी के प्राण न बचेंगे। पर्वत की पूर्ण शिला उखाड़ लाये। सुखेन ने स्वरस निकल-वाया लक्ष्मण जी के मुख, हृदय, नाभि नाक, कान आंखों में भरवाया, मर्दन करवाया। बिष्णु प्रिया कीबिद्युत शक्ति ने शक्ति के बिष को भस्म कर दिया। लक्ष्मण जी राम २ कहते हुये उठ वैठे रामादल में आनन्द के नगाड़े बजने लगे जय हनुमान बली की गगन चुम्भी ध्वनि गूंजने लगी सुखेन का किसी ने नाम तक भी नही लिया केव-ल राम जी ने अपने हृदय (रामचरित मानस) का एक सफल सदस्य निर्वाचित कर लेने की अ-नुग्रह अवश्य की। इस उपहार के आगे त्रिलोक का राज्य हेय है। यह लेखक का अपना बिचार है।

हुक्का चाय अंग्रेजी दवा

ठाकुर फूल्लन सिंह दारोगा अनन्य ईश्वर भक्त थे जहां यह एक घण्टे के लिये भी पहुचते थे कि कीर्तन मण्डल स्थापित हो जाता था, प्रान्त में इनके स्थापित किये हुये अनेकों कीर्तन मण्डल स्थापित हैं दारोगा जी के साले, दारोगाइन जी, बुआ बाल बच्चों की मौसी तथा उनके बाल ब-च्चों से लेखक का भाई बहन का सम्बन्ध चल रहा है। दारोगा जी ईश्वर भक्त के साथ ही उक्त तीनों व्यसनों के भी अनन्य भक्त हैं आप मन्दा-ग्नि कब्ज रक्ताल्पता अशक्त शरीर से ७/३६ में ललुआमऊ आये मेरे पास गुड़ पुराना साफ स-फेद पर्याप्त मात्रा में मौजूद था दुग्ध भी था। मैंने बिषाक्त चायसे पिण्ड छुड़ा दिया और उसके स्थान पर दुग्ध गुड़युक्त शिव शक्ति चा का प्रयोग प्रारंभ किया दो मास के अवकाश में सञ्चित विष दूर होगया शरीर में शुद्ध रक्त का संचार होने लगा और यहां से सशक्त बलिष्ट पुष्ट शरीर लेकर के ड्यूटी पर उपस्थित हुये। सन् १९४४ में डालीगञ्ज लखनऊ अध्यापकी का रिफ्रेसरकोर्स करने गया टहलता हुआ इनके मकान पर पहुँचा। कई बार आवाज देने के बाद नौकर को आज्ञा मिली कि बाड़ खोल दो मैं अन्दर गया एक कमरे में लल्ली उनकी ननद और मुन्नी कराह रही हैं वगल के कमरे में चन्द्र हास जी जो कि इस स-मय जिलाधीस के पद को सुशोभित कर रहे हैं पड़े हुये थे. रमासिंह की कहानी। कठिन है इन्हों ने बुखार आते ही मैगनेसिया साल्ट सेवन कर लिया दस्त न आने पर डा० की राय से कास्ट्रायल पान किया बायु गुम दस्त नदारद वेतहाशा दर्द शिकम हो रहा था। मैंने सभीकी रोग परीक्षाकी उक्तचार के बुखार दूसरे दिन रोक देने का प्रण तथा रमासिंह के उदर पर चना भुने हींग, अजवायन; नमक, सोंठ के सफूफ का धूसर कराने की व्यवस्था करके दर्द शान्त होते ही चला आया रातों रात आदमी थाना खागा फतेहपुर गया। दारोगा जी और बुआ जी आगईडाक्टर बुलाया गया रमासिंह को मोतीझाला करार देकर सो ल

रु० रोज का नुस्खा तथा २१ दिन तक सिवा दूध दवा और कुछ न देने की तजवीज हो गयी मैं बाद चार वजे गया बुआ जी को बिलकुल उदास देखकर कारण पूछा डाक्टर साहब की बतलाई हुई व्यवस्था सुनकर मैंने दस दिन के भीतर रोग मुक्त कर देने तथा अन्न दूध के अतिरिक्त सभी प्रकार के ऋतु फल का रस लेने की छूट दे दी। रमासिंह को दुग्ध स्वाभाविक अप्रिय था सर्व सम्मिति से दवा करने का आदेश प्राप्त हो गया स्कूल बाटिका में तुलसी, हजार दानी, द्रोण पुष्पी सौवर्चला, सूर्यमुखी अनेकों बूटियां मौजूद थी आवश्यक रसादि के लिये गुरुकुल कांगड़ी फार्मेसी से सम्बन्ध स्थापित था उक्त रोगियोंकी दवा मेंतुलसी और सूर्यमुखी ही प्रधान दवा रही केवल रमासिंह के लिये महामृत्युंजय रस और सौभाग्यवटी की समय २ पर साहयता लेनी पड़ी सातवें दिन ज्वर छूट गया, उदर शुद्ध हुआ भूख बढ़ी फलों का प्रयोग इच्छानुसार बढ़ाने और शिव शक्ति चा की व्यवथा करदी गयी। दशवें दिन इच्छानुसार हींग, जीरा, नमक, धनियां युक्त खूब फेंटे गये बेसन को घृत में भुनी फूली २ कुरकुरी पकौड़ियां खा कर रमासिंह यूनी वर्सिटी गये। इस समय आप लखनऊ में और श्री मुन्नी देवी हिन्दी यूनीवर्सिटी बनारस में प्रिंसिपला हैं।

सरकार की ओर से वेद भाष्य करने का बजीफा भी प्राप्त हो रहा है। दारोगा जी पेंसन पा रहे हैं आमदनी लातादाद हैं तो खर्च भी उदारता पूर्ण हो रहा है बुआ जी ठाकुर जी को स्नान भोग तुलसी दल अपर्ण किये और प्रसाद बांटे बिना जलपान तक नही करती हैं।

मगर

दरोगा जी उक्त तीनों मगरों के अनन्य भक्त बने ही रहे इस समय निर्बल शरीर प्रभुमन्दिर पाकर इन विषाक्त व्यसनों ने कीर्तन भजन तथा स्वलिखित पुस्तक मणिमाला के बितरण की गहरी कर्म रेखाओं में शोथ पींव और क्रमि पैदा कर दिये हैं जो कि भैया मौत बुला दो, कन्हैया मौत बुला दो मुन्नी रमा मौत बुला दो पण्डित पांलागों मौत बुलादो केवल शब्द रूप विल बिला रहे हैं। तबा हमेशा गर्म रहता है जरा भी ठंडा होते ही खुद चिलम लेकर खाट से कूद पड़ते हैं बुआ और नौकरों के चिलम मांगने पर भी नहीं देते और खुद भर कर हुक्का तड़तड़ाने लगते हैं। मुक्ति मिच्छसि चेतात विषयान्विषवत्त्यज। क्षमार्जव दया शौचं सत्य पीयूष वद्भज। का उपदेश और सतत सेवनाभ्यासी जीवन भूरि तुलसीदल गङ्गा जल तथा शिव शक्ति चाके अमृत पान का नाम सुनना भी मंजूर नहीं है। अकाल मृत्यु के दूत ढक्का, चा, नशीली दवाइयों ने मस्तक राज्य पर मारूसी कब्जा कर रखा है। दरोगा जी का पता है, सिंह भवन गोकर्ण नाथ पार्क हसनगञ्ज, लखनऊ है। जेन मित्र दुख, होहि दुखारी। तिनहिं बिलोकत पातक भारी॥ की कहाबत हमारे ऊपर घटित हो रही हैं।

अमृत पान (शिव शक्ति चाय)

तुलसीपत्र ११, काली मिर्च, ५, थोड़ी सी अद्रक या सोंठ डाल कर उबाले सुहाता गर्म रहने पर मल छान कर यथा रुचि शुद्धि साफ गुड़ अथवा देशी शकर मिलाकर पीये, यह एक

मात्रा है। भोजन त्याग कर तीन चार बार पीने से सर्दी, जुखाम, खांसी; श्वांस, जूड़ी ज्वर, ताप, नाप(अङ्गों में ऐंठन) दूर हो जाती है। पसीना आता, टट्टी पेशाव खुल कर होती है। रोग की अवस्था में पसीना आने पर तेज दवा से बचाव रक्खे, शरोर को कपड़ा से ढका रख अन्यथा दर्द सर्दी बढ़ने का अन्देशा है।

चाय पान या विष पान

अमेरिका के प्रसिद्ध डाक्टर आन त्रिडल ने एक अद्भुत गवेषणा की है। उन्होंने परीक्षा द्वारा मालूम किया है कि एक पौण्ड चा से सत्तरह हजार खरगोशो के प्राण नष्ट हो सकते हैं। दस बिन्दु चा एक बलवान खरगोश के मारने के लिये काफी है। साधारण एक मनुष्य एक पौण्ड चा तीन महीने में पीता है। इस प्रकार वह प्रतिदिन जितनीं चा व्यवहार करता है। उससे एक सौपचहत्तर खरगोशों का जीवन नष्ट हो सक्ता है। क्या शिक्षित वर्ग हमारी इस बात पर ध्यान देवेंगे कि हम प्रति दिन कितना विष पान करते हैं।

चायपान या आत्मघात

डा० पी० ज:० धाणेकर यम० बी० बी० यस०, डा० त्रिलोकीनाथ बर्मा सि० स० सं० प्रां० मे० स० डा० मुकुन्द स्वरूप बर्मा यम० बी० बी० यस०, डा० गणपति, डा० सुशीलकुमार वसु डा० पञ्चानन बसु यम० डी० (वर्लिन), डा० के० सी० वसु कलकत्ता, बि० सं० रामदास गौड़ एक कराठ से १-मला वरोध,अग्निमान्द्य,अजीर्ण अनिद्रा वृक रोग, शारीरिक मानसिक दुर्वलता, चाय का दैनिक एसिड़ (कषाय रस) होने से श्लेष्मिक त्वचा को अपने सम्पर्क से सख्त बना कर अन्न रस शोषण करने की शक्ति को कम कर देता है। चायका बुरा परिणाम दातों पर प्रत्यक्ष और अप्रत्यक्ष दो रूप में होता है। (१) अम्लप्रतिक्रिया होने से दातों में कीट लगता है। लार कम टपकने लगतो है। (२) रक्त विकृत हो जाता है, लार उचित परिणाम में तैयार न होकर दान्त खराब हो जाते हैं। बाल बच्चों को चाय पिलाने से उनका वजन नही बढ़ता, स्कूल के बच्चों को उनके मां बाप और मास्टरों को इस बुरी लत से रक्षा करनी चाहिये चाय, काफी, तम्मांखू, भाँग बीड़ी, चुरट, शराब, इत्यादि नशे की चीजों के सेवन करनेसे धमनियां रोग ग्रसित हो जाती हैं फलस्वरूप हाईब्लडप्रेसर तन्दुरुस्त अवस्था घूमते फिरते म हार्ट फेल होता है।

बुद्धि और सिर

उक्त अपराधों (पापों) से बाल,किशोर युवा प्रोढ़ की जब अकाल मृत्यु हो जाती है, तब मनुष्य अपनी बुद्धि रूपी हथौड़ा को भगवान के निहाई रूपी सर पर बार २ पटकता है कितने ही हमारे पुत्र, भाई, वहिन, स्त्री, (पति)को मारडाला तेरा क्या बिगाड़ा जो हरामजादे ऐसा किया हाय, दैया रे ध्वनि मचाता है किन्तु अपने शिर में एक बार भी हथौड़ा नहीं लगाता जो कि अमर बनाने का साधन है।

जटिल रोगों पर तुलसी द्वारा कुठारा घात

अस्थि यस्य कीलां सस्य तनू यस्य च यत्वाच।
दुस्याकृतस्य ब्रह्मणा लक्ष्म श्वेत मनीनशत ॥
वेद मंत्र

शुक्ला तुलसी का स्वरस खाते और लगाते रहने से गलित कुष्ठ जिसमें अंगुलियां सड़कर गिर रही हो, घाव हो गये हों, मुख विरूप हो रहा हो लगा तार एक साल तक सेवन करते रहने से अच्छा हो जाता है। साथ ही गङ्गा जो स्नान, गङ्गा जल पान, घृत युक्त अलोनी चना की रोटी खाई जावे। तो वहुत जल्द गारंटी के साथ अच्छा हो सक्ता है।

सरूप कृत त्वयोषधेषः सरूपमिदम् कृधि।
श्याम स्वरूप करणी पृथिव्यां अत्युद्भुतायद
भेषज प्रसाधय पुनारूपाणि कल्पम्

कृष्णा तुलसी सरूप वनाती है अर्थात इसके सेवन करने से कुरुपवान् सुन्दर रूप वान वन जाता है। प्रायः रामा और कृष्णा समान गुण युक्त है।

बोबई (बन तुलसी) और दौना मरुवा दोनों प्रथक २ पीनस रोग कृमि पड़ रहे हो नाक बैठ रही हो लगानेको लुगदी वान्धने और सूंघने से शीघ्र लाभ हो जाता है। वन तुलसी का स्वरस सर्व शरीर विशेष कर तालु और मेरु दण्ड पर मलते रहने से वच्चों का सूखा रोग शीघ्र अच्छा हो जाता है। स्वरस और कड़आ तैल कान और नाक में भी थोड़ा २ यथास्थान मात्रा से डालना चाहिये। सूखा की तृतीयावस्था खतरनाक होती है। उस प्राणसंकट अवस्था (निकट मृत्यु) में परिचारक की स्वीकृति पर ही 'यावत कन्ठगतप्राण, तावत्कार्यः प्रतिक्रियाम्" सिद्धान्त पर उपचार करना चाहिये अन्यथा वैद्य और दवा दोनों की बदनामी होती है।

४—दद्ररोग में—तुलसी स्वरस को खुजलाकर मालिश करने अथवा कपड़छन चूर्ण को नीबू के रस में मिलाकर लगाते रहने से बिला किसी प्रकार का जलन दाह के दाद अच्छा हो जाता है स्त्री, बच्चों या कोमल प्रकृति पुरुषों के लिये दैवी नियामत है।

५—४ तोला तुलसी पत्र, १० मा० तूतिया। विधि—खरल में तूतिया का कपड़छन चूर्ण डाल कर थोड़े २ तुलसी पत्र डाल २ कर खूब घुटाई करें, एक दिल हो जाने पर आठ गोलियां बना लेवें। १ गोली फेक देवें शेष सात गाली सात दिन १–१ गोली नित्य प्रातः सूर्योदय से प्रथम पानी के साथ निगल लिया करें ऊपर से एक गिलास (पावभर) शीतल जल धीरे २ घूंट २ करके पी जावें, वमन या दस्त होवें तो भयभीत न होवें। बिना नमक की गेहूँ या चना की रोटी पुराना साठो चावल, मूंग की खिचड़ी, दलिया और घी खूब खावें। तो पुराने से पुराना आतशक चन्द दिन में अच्छा हो जाता है।

६—तुलसी, गूमा के पत्ते, कालीमिर्च, छोटी पीपर १–१ तो०, शुद्ध कपूर ३ मा०, सब चीजों को पीसकर नीब की कोंपल के रस में खरल करके ४–४ र० को गोलियां बना लेवें। मात्रा—रोगी की अवस्था के अनुसार एक से चार गोली तक ३–३ घंटे के अन्तर पर जल के साथ खिलाते रहने से प्लेग और विषम ज्वरों में आश्चर्य जनक फल दिखाती है।

७—तुलसी और निर्गुण्डी पत्र स्वरस ६–६ मा०, छोटा पीपरि चूर्ण १ मा० मधु मिश्रित सेवन करने से वातश्लेष्मज्वर (इन्फ्लूएञ्जा) अवश्य अच्छा हो जाता है। शीत पदार्थ और शीतल जल से नितान्त परहेज रहे।

८—प्रतिपदा से प्रति दिन सायं प्रातः १-१ तुलसी पत्र बढ़ाकर अमावस्या को दोनों समय १५+१५=३० पत्र खाकर १-१ प्रतिपदा से घटा कर पूर्णिमा को समाप्त करें अलोनी रोटी शाक भाजी गो दूध घृत मधुर मेवा सात्विक पदार्थ सेवन करने से ब्रह्मचर्य का पालन करते रहने से चन्द्रमा के समान कान्तिवान निर्मल हो जाता है अनेक रोगों से शरीर स्वरक्षित रहता है।

९—साहित्य मनीषी डा० गणपतसिंह वर्मा सम्पादक रसायन मासिकपत्र देहली आपबीती कहानी लिखते हैं कि—मैं जौलाई सन् १९२० ई० में मलेरियासे ग्रसित हो गया था। दो मास तक खाट पर एड़ियां रगड़ता रहा, इस कालमें शरीर सिर्फ हड्डियों का ढांचा मात्र रह गया था, बहुत सी स्वदेशी और विदेशी औषधियों का सेवन व्यर्थ रहा। हमारे घर में तुलसी का पौधा लगा हुआ था पिता जी ने ७ तुलसीपत्र ३ काली मिर्च अल्प मात्रा मिश्री घोटकर प्रातः सायं पिलाना शुरू कर दिया, इसने ऐसा चमत्कार दिखलाया कि दूसरी ही मात्रा से ज्वर आना रुक गया, अब तो उत्साह बढ़ा और नित्य एक सप्ताह तक प्रातः सायं सेवन किया, ज्वर ऐसा लुप्त हो गया कि फिर कभी भी मेरे पास नहीं फटका।

१०—इसी प्रकार एक रोगी बारी ज्वर ग्रसित मेरे पास दवा लेने आया, सारा बृतान्त सुनने के बाद मैंने तीन पत्ता तुलसी गुड़में लपेट कर दे दिये और कहा कि ज्वर चढ़ने के आध घंटा पूर्व इसको सेवन करना, ज्वर का समय निकट ही था, उसने उसी समय वह गोली खा ली, आश्चर्य है कि तुलसी की तीन पत्तियों से ही ज्वर रुक गया फिर नहीं आया।

११—मलेरिया और प्लेग के दिनों में तुलसी के पत्तों को चबाते और स्वरस नस्य रूप सूंघते रहने से रोगों से बचत रहती है।

१२—तुलसी का तेल लगाते रहने से जूं लीख मर जाते हैं, मच्छर पास नहीं आते, नींद खूब आती है, तेज की वृद्धि होती चेहरा दमदमाने लगता है।

निर्माण विधि—खालिस तिल अथवा कड़वा तेल पौन बोतल, तुलसी स्वरस १ छ०, मिलाकर मजबूत डाट लगायें, एक सप्ताह तक तेज धूप में रखकर सूर्य-रश्मियों से शक्तिशाली बना लेवें। फिर छानकर यथा रुचि रूह सन्तरा मिला लेवें, महान गुणदायक तेल तैयार हो गया, इसके लगाने और सूंघने (नस्य लेने) मात्र से पुराने से पुराना सर दर्द भी अच्छा हो जाता है।

१३—चूर्णं तुलसीमूलं ताम्बूलै सह भक्षयेत्।
न मुञ्चन्ति नरोवीर्यमेकैकेन न संशयः॥

अपनी प्रकृति के अनुसार मात्रा में तुलसी जड़ के चूर्ण को पान में रखकर सेवन करने से वीर्य स्तम्भन शक्ति बढ़ती है। ब्रह्मचर्य पालन और पथ्य परहेज शास्त्रानुकूल होकर एक मास का सेवन पूर्ण लाभ दिखलाता है।

१४—जिनको स्वप्न में बीर्यपात (स्वप्नदोष) की लत पड़ गई हो वह सप्ताह में दो दिन तुलसी जड़ का चूर्ण अपनी प्रकृति के अनुसार सेवन करना प्रारम्भ कर देवें। शारीरिक विद्युत् प्रबल होकर व्यर्थ के बीर्यपात को रोकेगा।

१५—वस्त्रपूत तुलसीदल का चूर्ण घृत युक्त दोनों समय सेवन करने और सुपाड़ी छोड़ कर इन्द्री पर लगाने और पान या बरगद के कोमल पत्र सेंककर बांधते रहने से शरीरमें पुनः विद्युत् क्रिया संचालित होने लगती है। पथ्य परहेज ब्रह्मचर्य पालन करने से ध्वजभंग सदा के लिये दूर हो जाता है।

"पुत्रार्थे क्रियते च भार्या न तु विषयार्थे"

एक नारी सदा ब्रह्मचारी का फारमूला धारण करने से सन्तति निरोध कानून कुदरतन रद हो जावेगी।

१६—तुलसी स्वरस ६ मा०, बीज रहित घटनी मुनक्का ६ मा०, एक अदद छोटी पीपरिका चूर्ण, १ तो० घृत, ३ मा० मधु अवलेह बनाकर चाटते रहने से श्वास और क्षय कास को नाश करने में परम लाभदायक सिद्ध हुआ है। रुचि बढ़ती, जठराग्नि तीव्र होती, अन्न पाक ठीक होता, टट्टा खुलकर होने लगती, सुखोष्ण जल का सेवन किया जाय, गरिष्ठ भोजन से परहेज रहे।

१७—तुलसीपत्र २ तो०, समुद्रफल १ तो०, धुली हुई शुद्ध भांग ६ मा०, कालीमिर्च १ तो० सब चीजों को तुलसी स्वरस में घोट पीस कर एक दिल कर लेवे। २–२ र० की गोलियां बना बना कर छाया शुष्क करें। कागदार शीशा में स्वरक्षित रखें अवस्थानुसार १ से २ गोली तक गर्म जल के साथ सेवन करे। यह गोलियां कोनैन से अच्छा प्रभाव दिखाती हैं और कोनैन से होने वाली हानियों से शरीर को स्वरक्षित रखती है। कौनैन के भक्तों को हठधर्मी त्यागकर अवश्य परीक्षा करके फलाफल माला में प्रकाशित कराना चाहिये।

१८—तुलसी स्वरस की मालिस और शकर देशी युक्त शर्वत पान असाध्य से असाध्य जीर्ण लू से सताये हुये ज्वर रोगियों को लाभ पहुँचाता है। केवल नाम मात्र नहीं प्रचुर मात्रा में बार २ लगाया और पिलाया जावेगा तभी लाभ की आशा हो सकती है। अन्यथा दवा और वैद्य दोनों का मुख काला होता है।

१९—सरकारके प्रचार विभाग और डाक्टरों की मेहरवानी से लोगों के दिमाग में ठूंस २ कर भरा हुआ है कि मलेरिया की एक मात्र दवा कोनैन है। यद्यपि साधारण जनता और पढ़े लिखे भी समझते हैं कि बिना दूधके यह चांडाली शरीर को दग्ध कर देती है तथा बहिर्मुखी उष्णता को अन्तर्मुखी करके जीर्णज्वर, क्षय, खांसी, श्वांस, रक्तपित्त, रक्तालपता, अशक्ति, कब्ज, अतिसार, यकृत, प्लीहा, प्रमेह, सुजाक, आदि का प्रसाद समर्पण कर जाती है। देशी और विदेशी डाक्टर तथा वैद्यराजों ने मलेरिया की निरापद औषधि तुलसी को स्वतन्त्र, अनुपान तथा चा रूप से सेवन करना वतलाया है।

विश्व विज्ञान में प्राचीन भारत

तुलसी के गुणगान बिश्व की सभी सभ्य जातियों हिन्दू मुस्लिम ईसाई पारसी के बिज्ञ मण्डल ने एक स्वर सेकि ये हैं। बनस्पति बिज्ञानाङ्क में सभी अनुभवों का वर्णन करना असम्भव है। इस समय भारत विज्ञान मृत प्राय हो रहा है, क्योंकि यह पूर्व पुण्य पुरुषों के गुणगान

में मस्त है करना कराना कुछ नहीं चाहता। अन्य देशीय केवल कर्म क्षेत्र में ही अवतीर्ण हो रहे हैं केवल उनके अनुकरण से हमारा कल्याण कदापि नहीं हो सक्ता है। हमारा देश धर्म प्राण है हम यहां धर्म के साथ अर्थ पैदा करके कामनाओं का भोग भोगते हुये मुक्त (स्वतन्त्र सुख) लाभ के लिये इस सत्य (धर्म कर्म) क्षेत्र में आये हैं। उसी समय जब कि भारत पूर्ण सत्य विज्ञान के तटस्थ ही था बिश्व बिजयी सिकन्दर ने भारत बिजय कामना से अपने गुरु सुकरात से प्रश्न किया वही प्रश्नोत्तर एक पुरानी कबिता रूप में पाठकों के विनोदार्थ अङ्कित किया जा रहा है। कविता पुरानी है लगभग ५० बर्ष हुआ तब मेने नोट किया था कोई साहब मन गढन्त न समझें

सिकन्दर

सिकन्दर ने कहा सुकरात सेक्या मैं तुमकोलाऊँगा
विजडङ्का बजा कर हिन्द से जब लौट आऊँगा ॥

सुकरात

कहा सुकरात ने राजन् विजयकर जबयहां आना।
हमारेवास्ते भारत से इक ज्ञानी पुरुष लाना ॥

क्योंकि

वह बिद्यापीठ है गुरुद्वार है सद्गुरुसदन बह है।
बड़ेत्यागी बड़ेयोगी ऋषीमुनि का भवन बह है ॥
कहीजाती नहीं उस पुण्यभूमी की बिशदमहिमा।
कहीजाती नहीं उनशिष्ट पुरूषोंकी सुखदमहिमा ॥

कौनसी सुखद महिमा

वही से रोशनीआती है सारे विश्व में छनकर।
दिशा प्राचीही में सूरज निकलतेहैंकमल सुन्दर ॥
अमरबेली बहां की घास बह गुण आकर
वहां की पक्षियांगाती हैं भगवद्गीत मोठे स्वर।
महाविज्ञान का द्योतक बही जलपुष्प नेमी है
कमल सब उसको कहते हैं वहोसूरजका प्रेमी है।
हमारे वास्ते लाना अमर बेली कमल गीता
नृपति मतभूलजाना फिर कहानी राम ओसीता।
वहांके बांस की इकबांसुरी भी साथ में लाना
बजाकर हमभी देखेंगे कि कैसास्वर है मस्ताना।
पुनःयदि हो सके राजन् तो गंगाजलभीले आना
जिसे पा पीकर सत्पुरुषों ने गहरेतत्व को छाना।

बशर्ते कि—

हमारी सात चीजें खोज कर जब आप लावेंगे।
तभी सातों महाद्वीपों के नायक भी कहायेंगे॥

॥ इति ॥

दी रजिस्ट्रार न्यूज पेपर फारइण्डिया

नाम पेपर—अनुभूत योगमाला मासिक पत्रिका
सम्पादक—पं० विश्वेश्वरदयालु बैद्यराज
प्रकाशक— ,,
मुद्रक— ,,
नेशेनेल्टी—भारतीय
प्रेस नाम—हरिहर प्रेस
पूरा पता—बरालोकपुर-इटावा यू० पी०

तुलसी : विशिष्ट अनुभव

श्री द्वारिका मिश्र जी वैद्य, सञ्चालक–बिहार प्रान्तीय
वैद्य सेवा-संघ ओड़ो (गया)



बिहार प्रान्तीय वैद्य सेवा संघ के यशस्वी संचालक श्री मिश्र जी 'माला'के चिर हितैषी हैं । सदैव उत्तमोत्तम साहित्य भेंट करते रहते हैं । अभी "विधि-विधानांक" में प्रचुर सामग्री देकर अपनी सक्रियता का परिचय दिया है । राष्ट्रीयस्वास्थ्य परीक्षा संस्थान भी आपके निर्देशन में चलरहा है । आप अपने क्षेत्रके सिद्ध चिकित्सक भीहैं । तुलसी पर संक्षिप्त किन्तु उपयोगी परिचयप्रस्तुत किया है ।

—ज्ञानेन्द्र पाण्डेय

तुलसी का पौदा प्रत्येक हिन्दू के घरों में एक देवतारूप में आंगन के पिण्डाल में लगा रहता है जिसे वहुधा लोग तुलसी चौरा कहते हैं। यह तुलसी दो प्रकार की होती है। श्वेत व कृष्ण तुलसी की उत्पत्ति कथा पुराणों में मिलती है। तुलसी का माहात्म्य तथा प्रतिष्ठा स्वयं श्रीकृष्ण भगवान ने इतनी की है कि—बिना तुलसी के भगवान की पूजा निष्फल होती है। भगवान सत्यनारायण की पूजा तो बिना तुलसी के होती ही नहीं, सभी प्रसाद नैवेद्य में तुलसीदल छोड़ा जाता है पूजा समय पंचपात्र में तुलसी और जल रहता है। तुलसी इतनी पवित्र मानी गई है कि मनुष्य के अन्तकाल मुखमें तुलसी गंगाजल दिया जाता है। इतना ही नहीं तुलसी नामक क्षुप का गुण भी उतना ही आयुर्वेद शास्त्रों में वर्णनकिया है। अर्थात् (तुलसी कफपित्तघ्नी वायूपित्त कफा पहा) से वायु, पित्त, कफ यानी तीनों दोष के विकृति होने पर शान्ति होती है। इस तरह तुलसी में ज्वर हारक शक्ति भी विद्यमान है तथा अनेक गुण तुलसी में अमृतोपम हैं जैसा कि निघण्टुकारों ने लिखा है। परन्तु मैं यहां अनुसंधानात्मक गुण का वर्णन कर रहा हूँ।

तुलसी और विद्युत् शक्ति—जिस घरमें तुलसी रहती है उस घर में बज्रपात नहीं होता अर्थात् बिजली के करेन्ट को रोकना इस क्षुप का कार्य है। बिजलीके करेन्ट लगे व्यक्ति या बिजली गिरने से बेहोश व्यक्ति को तुलसी के स्वरस का लेप सर्वाङ्ग में लगादे एवं इसका इंजेक्शन लगा तथा कस्तूरी भैरव तुलसी स्वरस के साथ दे ऐसा करने से रोगी चंगा होता है।

श्लैपदिक ज्वर (सांकर)—मिर्च गोल ५ अदद, १० पत्ता तुलसी खाने से सोजर या ज्वर का भय जाता रहता है।

[शेष ६८ पेज पर]

मंजिष्ठा

श्री ज्ञानेन्द्र पाण्डेय वैद्य (गुरुकुल के वनस्पति शास्त्र में विशेषयोग्यता प्राप्त स्नातक)
गुरुकुल काँगड़ी–हरिद्वार (जिला–सहारनपुर) उ० प्र०

लम्बे समय तक सलग्न रहकर हमने 'माला' के पाठकों के लाभार्थ मजीठ पर वनिस्पति विज्ञान की शास्त्रीय शैली की परिष्कृत विधि का अनुकरण करते हुए इस रचना को तैयार किया है। इसमें जहाँ शास्त्रीय परिचय मिलेगा वहाँ रोगों में विस्तृत उपयोग भी।

—ज्ञानेन्द्र पाण्डेय



नाम

संस्कृत—मजीठके शास्त्रोंमें निम्न लिखित पर्याय मिलते हैं—१

मंजिष्ठा, विकसा जिङ्गी, समङ्गा, कालमेषिका, मण्डूकपर्णी, भण्डीरीं, रक्ता, योजनवल्लिका, काला, योजनवल्ली, मण्डूका, काण्डीरा,

---

१–(क) मंजिष्ठा लोहिता रक्तांगी रक्तयष्टिका।
पद्मिका(छद्मिका)मंजुला भंडी भंडीरा ताम्रवल्यपि
समङ्गा विकसा ताम्रा विजया वस्त्रभूषणा।
ताम्रमूला कालमेषी जिङ्गी योजन वल्ल्यपि ॥
(कै० नि०)

मंजिष्ठा विकसा जिङ्गी समंगा कालमेषिका।
मण्डूकपर्णी भण्डीरी भण्डीयोजनवल्ल्यपि ॥
रसायन्यरुणा काला रक्तांगी रक्तयष्टिका।
भण्डीतकी च गण्डीरी मंजूषा वस्त्ररंजिनी ॥
(भा० नि०)

(ख) मंजिष्ठा बिजया रक्ता रक्तांगी कालमेषिका।
रक्तयष्टी ताम्रवल्ली समङ्गा वस्त्रभूषणा ॥
मंजुला विकशा भङ्गी छद्मिका ज्वरनाशिनी।
(मद० नि०)

वस्त्ररंजनी, भण्डी, रक्ताङ्गी, रक्तयष्टि, योजनवर्णिका, रसायनी, अरुणा, रक्तयष्टिका, भण्डीतकी, गण्डीरी, मंजूषा, कलिमेषिका, विजया ताम्रवल्ली, वस्त्रभूषिणी, विकसा, भद्रा, छद्मिका, मंजुला, ताम्रा, लोहितलता, ज्वरहन्त्री।

अन्वर्थ संज्ञा-२ परिचय ज्ञापिका

रक्तयष्टि (लालकाष्ठ वाली) योजनवल्ली, (पर्वतों पर योजनों तक फैलने वाली), रक्तांगी (लाल रंग की जड़ों आदि से युक्त लता), भण्डी (बहुत फैलने वाली जो होती है), लोहित लता (बेल लाल रंग की), ताम्रा, अरुणा, रक्ता आदि भी इसी तरह के पर्याय हैं

गुण प्रकाशिका—ज्वरहन्त्री (बुखार को नष्ट करने वाली), रसायनी (कर्म में रसायन होती है) आदि नाम पड़ते हैं।

व्यवहार ज्ञापिका—वस्त्ररंजनी (कपड़ों को रंगनेवाली), वस्त्रभूषणा आदि उल्लेखनीय हैं।

हिन्दी–मंजीठ, मजीठ, मज्जीट, बंगाली–मंजिष्टा, अरुण, मंजेठ, मराठी–मञ्जिष्ठा, मु० मंजीठ, जिंगनी, जिंगिनी, इतारो, इटसि, तेलगू–मंजिष्टतीडी, ताम्रवल्ली, मण्डासिक, तमरवल्ली, तामिल–शेवेल्ली, मंजीडी; मंजिट्टी; कन्नड-मंजिष्टा मजिष्ट, मंजिष्ठ, मंजष्टा, गुजराती–मजीठ, पंजाबी–मंजीठ, द्राविण-मंजिष्टि, मलयालम–पून्त, फारसी–रोदक, अरबी–फुवहतु, फोह, फुब्बाह, अकुस्सयागीन, सिबगउरू, कुसुबागीन, फौहुल, अबागीन्।

आँग्लभषा में–Madder root, Indian madder

लैटिन भाषा में--Rubia cordifolia, rubia mangista

वर्गोलेख
(CLASSIFICATION)

पाश्चात्य प्रकृतिगत साधर्म्य अनुसार Rubiaceae (रुबिएसी) N.O. (मंजिष्ठ वर्ग) में रखते हैं। प्राचीन द्रव्यगुण के अनुसार। मजीठ को चरक संहिता में ३ वर्ण्य, विषघ्न,

---

२—मञ्जिति-मंजौ शोभने वर्णे तिष्ठति। 'सुपिस्थः' (३ २ ४) इति कः।

'अम्बाम्ब'–(८ ३ ६७) इतिषत्वम्। पृषोदरादि (६।३।१०९) यद्वा अतिशयेन मंजुः। अतिशायने तमबिष्ठनौ (५।३।५५)

विकसति। कषगतौ (भ्वा० प० से०)। अच् (३।१।१३४)। विकषति। 'कष हिंसायाम्' (भ्वा० प० से०) विकषा इति मुकुटः।

नृत्र मंजिष्ठायाः मँजीठ इति ख्यातायाः। इत्यमरकोषः

वर्ण्ये—

चन्दन तुङ्ग पद्मकोशीरमधुकमञ्जिष्ठाया सारिवा सारिवापयस्या सिता लता इति दशेमानि वर्ण्यानि भवन्ति।

विषघ्न गणे मंजिष्ठा—

हरिद्रा मञ्जिष्ठा सुवहा सूक्ष्मैलापालिन्दीचन्दनकतक शिरीष सिन्धुवार श्लेष्मातका इति दशेमानि विषघ्नानि भवंति।

ज्वर हर महाकषाये मंजिष्ठ—

सारिवाशर्करा पाठा मञ्जिष्ठा द्राक्षापीलुप रूपकाभया मलक विभी तकानीति दशेमानि ज्वर हराणि भवन्ति

ज्वरहर गण में और सुश्रुत संहिता में ४ प्रियंग्वादि, पित्तसंशमन वर्ग में इसे रखा गया है।

(क) भावप्रकाश निघण्टु में—हरीतक्यादि वर्ग

(ख) कैय्यदेव निघण्टु—मिश्रित समूहे।

(ग) अभिनव निघण्टु—हरीतक्यादि वर्ग

(घ) मदनपाल—अभयादि वर्ग

समन्वयात्मक रूप से विचार करते हुये देखा जाये तो आज कल मजीठ को रक्तप्रसादन द्रव्यों की जगह लिखा गया है।

उत्पत्ति स्थान
(HABITAT)

मजीठ पश्चिमोत्तर, हिमालय, नेपाल, नीलगिर, तथा अन्य पर्वतीय-प्रदेशों में पाई जाती है। पहाड़ी स्थानों में इसकी बाहुल्यता रहती है। दक्षिण की ओर तथा मलाया, सीलोन में भी उत्पन्न होती है।

वानस्पतिक परिचय

मजीठ की बहुत बिस्तार से फैलने वाली आरोहणा लता जाति की वनौषधि होती है। डण्ठल कई गज लम्बा, गावदुम और जड़ की ओर कठोर सा प्रतीत होता है। त्वचा-श्वेताभ अन्तःत्वचा-लाल होती है। शाखाप्रशाखा हो कर के यह लता सघन होता है। पत्र-सघन, तेजपात के समान (कुछ) पत्र आकार में छोटे बड़े बिभिन्न प्रकार के होते हैं चौड़ाई १॥ इंच और लम्बाई २-४ तक होती है। अनीदार, गोल और कुछ खुरदरे होते हैं पत्र जड़ की ओर गोल होते हैं। पत्रवृन्त पत्रों से द्विगुणित लम्बे होते हैं। पुष्प-छोटे-पीताभ, श्वेत, गुच्छों में आते हैं। फल-छोटे गोल लम्बे तथा मांसल होते हैं। पकने पर जामुनी रंग के हो जाते हैं। मूल-लाल' लम्बी, भूमि में दूरी तक घुसी रहती है ग्रीष्म ऋतु में प्रायः लता पत्र सूख जाते हैं। किन्तु भूमि के भीतर इसकी जड़ सुरक्षित रहती है। शरदमें फूल आतेहैं, फिर फल आतेहैं।

शास्त्रीय गुण

रस-तिक्त, कषाय, वीर्य, उष्ण, बिपाक-कटु गुण-गुरू, रूक्ष, दोषप्रभावक-कफपित्तहर, कम. वर्ण्य, विषघ्न, कृमिघ्न, व्रण-रोपण, स्तम्भन, दीपन शोणितास्थापन, त्वच्य, गर्भाशयोत्तेजक, बल्य रसायन, शोथहर, कुष्टघ्न, आर्त्तवजनन, ज्वरघ्न, स्तन्यशोधन, प्रमेहघ्न, कासघ्न।

संघटन
(CoNSTITUENTs)

मात्रा	गुण	भूत	रस
उत्तम	गुरु	पृथ्वी, जल	तिक्त
मध्यम	रूक्ष	वायु, आकाश	कषाय
अवर	शुष्क	अग्नि	मधुर

(यह लेखक द्वारा मौलिक रचना है विशेष अनुमान है)

---

४ प्रियंग्वादि गणे—

प्रियंगु समङ्गा धातकी पुन्नाग नागपुष्प चन्दन कुचन्दनमोचरस रसांजन कुम्भीक स्रोतांजनपद्मकेसर योजनवल्ल्यो दीर्घमूला चेति।

पित्तसंशमनगणे—चन्दन कुचन्दन ह्रीवेरोशीर मञ्जिष्ठापयस्या बिदारी शतावरी गुन्द्रा शैवलकल्हार कुमुदोत्पल कन्ददली दूर्वा मूर्वा प्रभृतीनि.....।

ज्ञाति

अभिनव निघण्टु अर्थात् आयुर्वेदीय द्रव्य-निधान (Thi Hindu system of medicine)नामक ग्रन्थ के अनुसार मंजीठ की जातियां इस प्रकार हैं:—

बौलस्त्रियोंजनी कौचो माहिली च चतुर्बिधा।
मंजिष्ठा चैव सा प्रोक्ता विलोमेचोत्त मोत्तमा।।

अर्थात् बौल, त्रियोजनी कौचि और माहिली ये चार भेद मंजिष्ठा के हुआ करते हैं। इसमें बिलोम गिनने से एक दूसरी से उत्तम जानना चाहिऐ जेसे माहिली से कौची से त्रियोजनी और त्रियोजनी से बौल संज्ञक मंजीठ को उत्तम जानना उचित है।

(ख) मूल में रालयुक्त सत्वपदार्थ, गोंद, शर्करा, रंजक द्रव्य तथा चूने के लवण होते है। रंजक द्रव्य में एक पर्प्युरीन लाल स्फटिकीय तत्व प्राप्त होता है। यहीं नहीं इसमें पीत ग्लूकोसाइड मंजिष्ठिन, गैरेन्सिन अलिजैरिन, जैन्थिन भी होते हैं। ५

गुण धर्म

हमारे प्राचोन आचार्यो एवं निघण्टु कारों ने मंजिष्ठा के गुण अपने २ विचारों के अनुसार रखे हैं। ६ सम्पूर्ण विचारों को देखने से यही ज्ञात होता है कि मंजीष्ठ का मुख्य रूप से आन्त्र अंग (Intstine) और रक्त धातु पर प्रभाव पड़ता है।

मजीठ के बिशेष गुणों पर भी ध्यान देना आबश्यक सा प्रतीत होता है। पत्तों का शाक-मधुर, लघु, स्निग्ध, जठराग्नि को प्रदीप्त करने बाला तथा वात, पित्त को नष्ट करने बाला होता हैं। मजीठ के फल–प्लीहा रोग को नाश करने बाले होते है। मंजिष्ठा को जड़ विशेष रूप से चर्म रोग और शरीर के तिल को नष्ट करने बाली हैं। मदनपाल निघण्टु में कहा भी है—

मंजिष्ठा·································।
तच्छाकं दीपनं स्वादु स्तिग्धं पित्तानिलापहम् ॥

यूनानी द्रव्य गुणानुसार मंजीठ के गुण धर्म इस प्रकार हैं—

दूसरे दर्जे में गरम और रूक्ष, रोध की उद्-घाटक, मूत्र को लाल करने बाली, आमाशय को

५. The root contain resioni and extractive matter, gum, sugar, colouring matter and salt of lime The colouring matter consists of a red crystalline priuciple purpurine, a yellow Principle manjistin garancin alixarin (orange red)and xanthine (yellow).

६—मंजिष्ठा दुवरा तिक्ता बीर्योष्णा मधुरा गुरुः!
कर्णाक्षियो निरोगघ्नी कषशोषबिपापहा ॥
बिसर्प मेह कुष्ठार्शोव्रण रक्तातिहार जित्।
(कैयनि०)

मंजिष्ठा कुष्ठवैस्बर्म शोघघ्नी मूत्रकृच्छ्र जित्।
(रा० ब०)

मंजिष्ठा मधुरातिक्ता कषाया स्यरवर्णकृत।
गुरूरुष्णा बिषश्लेष्मशोथयोन्यक्षिकर्णरुक ॥
रक्तातीसार कुष्ठास्त्रबीसर्पव्रणमेहनुत।
(भा० नि०)

मंजिष्टा मधुरास्वादे कषायोष्णा गुरुस्तथा।
कफोप्रव्रणमेहास्त्र बिष नेत्रामयाञ्जयेत् ॥
(ध० नि०)

बलकारी, शीत के रोग, स्नायु की बीमारियों, पक्षबद्ध, अर्दित बात, और पाण्डु रोग को गुणकारी, तिल्ली और जिगर को फायदेमन्द, दाद, और चमड़ी के दागों में मिटाने वाली, रक्तातिसार को बांधने वाली, शिर और वस्ति को नुकसान करती है।

आमयिक प्रयोग

मंजीठ के विषय में यह संक्षिप्त वर्णन समयाभाव एवं स्थानाभाव से किया गया। अब कुछ रोगों में प्रयोग भी देखिएगा—

(१) बाह्य संस्थानिक
(EXTERNAL USES)

चर्म रोगों की यह एक मुख्य औषधि मानी जाता है। शोथ, व्रण आदि विभिन्न रक्तविकारों में मधु के साथ मिला कर इसका लेप करते हैं। इसी प्रकार मंजिष्ठामूल के तेल को भी ऐसे व्याधित स्थानों पर मलते हैं। मधुयष्ठी और मजीठ के चूर्ण को अच्छी प्रकार निर्मित कांजी में मिला कर तयार करले, फिर इस योग को अस्थिभग्न पर शोथ (Inflamation and spelling) आदि उप लक्षणों के विनाशार्थ लगाने के काम में लाना चाहिये। इससे अवश्य लाभ पहुँचता है। मंजीठ के बाह्य प्रयोगों के प्रकरण में आचार्य चक्रदत्त का मंजिष्ठाद्यघृत ७ अविस्मरणीय है। मंजीठ, चन्दन, मूर्वा—के कल्क को घृत में सिद्ध करे, इस घृत को अग्नि से दग्ध समस्त प्रकार के व्रणों पर प्रयोग करने से आश्चर्य जनक लाभ होता है। व्यंग नामक [...] में मजीठ को मधु में पीसकर रुग्ण स्थान में [...] करना लाभकारी होता है ८ तत्काल लगे घा[व] पर मजीठ का चूर्ण बुरकना हितकर पाया ग[या] है। सामान्य व्रण के रोपणार्थ मंजीठ, पुण्डरि[...] खस, पद्माख, मोरेठी के साथ हल्दी मिश्रि[त] कल्क को दूध और घी के साथ सिद्ध हुये यो[ग] को प्रयोग करते हैं प्रपौंण्डरीकाद्यघृत। ९ व्र[ण] शोथ एवं विभिन्न प्रकार के व्रणों में निश्च[...] लाभदायक योगों, यथा—

जात्याद्य घृत, गौराद्य तेल एवं घृत, क[...] जाद्य घृत।

में मजीठ प्रयोग होती है। त्वचा को शु[द्ध] करने के लिये मैनशिल, हरताल, मजीठ, ला[...] हरिद्राद्वय को घी व शहद के साथ लेप कि[या] जाता है–मनशिलादि लेप। १० पित्तज नाड़ीव्र[ण] में तिल, मजीठ, नागदमन, हल्दी को पीस[कर] लेप करना लाभदायक होता है,

मजीठ का भगन्दर में भी प्रयोग होता है [...] अपक पीडिकाओं के उत्सादनार्थ निशोथ ति[ल] मजीठ, नागदमन को पीस कर घी, शहद, सें[धा] नमक का चूर्ण मिलाकर उबटन करना चाहिये [...] व्रण में मजीठ, रसौंत, हरिद्राद्वय, नीम, च[...]

७—मंजिष्ठा चन्दनं मूर्वां पिष्ट्वा सर्पिर्विपाचयेत्।
सर्वेषामग्निदग्धानामेतद्रोपणमिष्यते॥

८—व्यङ्गेषु मञ्जिष्ठा वा समाक्षिका।

९—प्रपौंडरीकमंजिष्ठा मधुकोशीरपद्मकैः।
सहरिद्रैः श्रृतं सर्पिः सक्षीरं व्रणरोपणम्॥
(चक्रद[त्त])

१०—मनःशिलाले मञ्जिष्ठा सलाक्षारजनीद्वयम्।
प्रलेपः स घृतक्षौद्रस्त्वग्विशुद्धि करः परः॥

न्ती के कल्क को प्रयोग करें । ११ पैत्तिक उपादंश में मजीठ, खश, गेरू, सुरमा का स्निग्ध लेप लाभकारी है । अस्थिभग्न में मंजीठ को लेपनार्थ प्रयुक्त करने के अतिरिक्त गंध तेल भी उपयोगी होता है। कुष्ठाधिकार में चक्रदत्त द्वारा आदित्यपाक तेल एवं महासिंदूराद्य तेल में भी मंजीठ प्रयुक्त है ।

पित्तज बिसर्प में मजीठ, पद्माख, नीलोफर चन्दन को दूध में मिलाकर पीसने के बाद लेप कराना चाहिये । मुख के बिस्फोट नाशनार्थ मंजीठ, शिरीषमूल, आमला, चमेली का चूर्ण शहद मिलाकर कवल धारण करना उचित हैं। रक्तचन्दन, मजीठ, लोध कूठ, प्रियंगु, वटाकुंर मसूर का लेप मुखकान्तिकर है। १२ नीलिका, व्यानपीडिकादि रोगों में रामबाण हरिद्रादि लेपा में भी मजीठ प्रयुक्त है। मजीठ, नीलोफर ...ग्गुंग का कल्क से सिद्ध तेल भी मुंह की शोभा को बढ़ाता है । इसी प्रसंग में मंजिष्ठादि तैला १३ का उल्लेख उचित जान पड़ता है। मंजीठ, मोरेठी, लाख, बिजौरा नीबू, मोरेठी इन द्रव्यों को एक एक तोला की मात्रा में लें, तेल १६ तोला लीजिये। बकरी का दूध तेल से दुगना लें और सबको मिलाकर मन्दी आग पर पकालें। इसकी मालिश करने से झाई, फुन्सियां व्यंग नष्ट होते हैं। मुख प्रसंन एवं स्थूल होता है झुर्रियां एवं बालों की सफेदी समाप्त होती है। सप्त रात के प्रयोग से मुख स्वर्ण समान हो जाया करता है। महानीलतेल, कुंकुमाद्य तेल में भी मंजिष्ठा का प्रयोग किया जाता है।

जिह्वा रोग में मजीठ, देवदारु, संभालू से सिद्ध तैल का प्रयोग करना चाहिये। अनेक मुख रोगों में लाभकारी लाक्षादितेल एवं वृहत् खदिरादि गुटिका में भी मजीठ का प्रयोग किया जाता है। मजीठ कर्ण रोग में भी लाभकारी है अनेक नेत्र रोग, ऊर्ध्वजत्रुज रोगों आदि में प्रयुक्त नृपवल्लभ तेल में मंजीठ का प्रयोग बताया गया है।

(२) पाचन संस्थानिक रोग

रक्तार्श में जब रक्त प्रवाह जारी हो जाता है तो मजीठ, नीलकमल, मोचरस, काले तिल द्वारा सिद्ध बकरी का दूध लाभ पहुँचाता है। रक्तार्श में प्रयुक्त कुटज रस क्रिया योग से भी मजीठ उपयोग की जाती है। यकृद्रोग बिनाश के लिये फल काम में आते हैं।

मंजिष्ठायाः फलं प्रोक्तं यकृद्दोषहरं बुधैः ।

इसके अतिरिक्त मजीठ, अतिसार, कृमि-रोग, आमदोष एवं अग्निमांद्य में भी प्रयोग की जाती है।

११-रसांजनं हरिद्रा द्वे मञ्जिष्ठा निम्बपल्लवः ।
त्रिवृत्तेजोंवतीदन्ती कल्को नाड़ी व्रणापहः ॥

१२-रक्तचंदन मंजिष्ठा लोध्रकुष्ट प्रियङ्गवः ।
वटांकुरमसूराश्च व्यङ्गघ्ना मुखकांतिदाः ॥

१३-मंजिष्ठा मधुकं लाक्षा मातुलुङ्ग सयष्टिकम् ।
कर्ष प्रमाणैरेतैस्तु तैलस्य कुडवं तथा ॥
आजं पयस्तद्द्विगुणं शनैर्मृद्वग्निना पचेत् ।
नीलिका पीडका व्यंगानभ्यंगादेव नाशयेत् ॥
मुखं प्रसन्नोपचितं वलीपलित वर्जितम् ।
सप्तरात्र प्रयोगेण भवेत्कनक सन्निभम् ॥

(३) प्रजनन मूत्रसंस्थानिक बिकार

स्त्रियों के ऋतु बिकार पर मजीठ का प्रयोग किया जाता है यदि किसी नारी का मासिकस्राव बन्द हो, साफ न होता हो अथवा प्रसूति के बाद निश्चित समय पर स्खलित न होता हो तो मजीठ २ तो० लीजिये, उसको मोटा २ कूटलें पुनः क्काथ बनाकर २–३ प्रयोग कराने मात्र से ही आश्चर्य जनक लाभ होता है। मजीठ मूत्रकृच्छ्र को भी नाश करता है। इसमें चीनी मिलाकर मजीठ का काथ रोगी को सेवन कराना चाहिये। योनि व्यापदाधिकार की प्रमुख एवं प्रसिद्ध औषधि फलघृत मंजिष्ठा का प्रथम स्थान है। पुरुष एवं स्त्रियों दोनों ही के लिये लाभकारी विशेषतः प्रजनन सम्बन्धी व्याधियों में प्रयोग होने वाले सोमघृत में भी मजीठ प्रयुक्त है। गर्भवती को गर्भस्राव की शंका होने पर आयुर्वेद में प्रथम मास से ही उपचार प्रारम्भ करने की आज्ञा दी गई है, द्वितीय मासमें मजीठ, शतावरी, कचनार तिल को दूध के साथ देने का उल्लेख शास्त्रों में प्राप्त होता है।

इसी प्रकरण में डा० जी० प्लेफेयर का भी मत अवलोकनीय है—If taken to the extent of about there drachms saveral times dailx it affects the nervous system iucluding temporary delirium etc. with evident system. determination to the unterine.

Dr. G. PLAYFAIR, TALIFII-I-SHARIFI)

दी इण्डियन मेटेरिया मेडिका में लेखक श्री डा० नादकर्णी लिखते हैं—

"When adminstered in the form of decoction, it tinges the blood, urine and euen the bones, red. Hakim prescribe an infusien of the root as a drink to women after delivery to procure copious flow of lochia."

आयुर्वेद में प्रमेहाधिकार में भी मंजिष्ठा का उपयोग बतलाया गया है। मजीठ एवं लाल चन्दन का क्वाथ मंजिष्ठमेह में प्रशस्त है। आचार्यसुश्रुत ने कहा भी है—'मञ्जिष्ठा चन्दन कषायं मञ्जिष्ठा मेहिनाम्।' त्रिदोषज प्रमेह में प्रयुक्त होने वाले त्रिकण्टकाद्य स्नेह में भी मजीठ का प्रयोग किया गया है। मजीठ को प्रमेह में विधिवत प्रयोग करने से २–४ दिनों में ही मूत्र स्वच्छ आने लगता है।

(४) रक्तवहसंस्थानीय बिकार

रक्तातिसारों में मंजिष्ठादि क्वाथ का उपयोग करते हैं मजीठ, बहेड़ा, हरड़, आमला, दारुहल्दी, वायविडंग, निशोथ, गुरुच, कुटकी, नीम की छाल, धच–इन द्रव्यों को लेकर कूट लेना चाहिये, पुनः काढ़ा बनाकर अष्टमांस शेष रखना चाहिए। इसको प्रातः सायं अपने रोगी को देना चाहिए इससे तमाम तरह की खून की खराबियां दूर होती हैं।

(५) श्वसन संस्थानिक रोग

कास एवं स्वरभेद में मजीठ प्रयुक्त होती है क्योंकि यह कफघ्न है। मोरठी मजीठ, वासा का क्वाथ

बनाकर इस स्थान के सभी रोगों में प्रयोग कर सकते हैं।

(६) अन्य रोग

मजीठ ज्वर में भी उपयोगी है अभ्यगं से ज्वर नाश करनेवाले अंगारक तेलमें इसका प्रयोग किया गया है इसके अतिरिक्त लाक्षादि तेल १४ जो ज्वराधिकार में लिखा गया है। लाख मजीठ हरिद्रा, का कल्क तिल तेल से छे गुनी काजी मिलाकर पकाना चाहिए इसका अभ्यगं करने से दाह तथा शीत सहित ज्वर को शमन करता है। मजीठ ज्वर को नष्ट करती है अत: इसका पर्याय ज्वर हन्त्री लिखा है। जीर्ण ज्वर में यह विशेष रूप से उपयोग में आती है साथ ही स्त्रियों के प्रसूति के ज्वर में अति लाभकारी सिद्ध हुई है, इस अवस्था में मजीठ के साथ स्वेदजनक एवं मूत्रजनक द्रव्य मिला देना चाहिए।

पक्वाशयगत बिष रोगाधिकार में मजीठ भी उपयोग आती है। जो व्यक्ति बिष से पीड़त हो उसे छोटी, पीपल, मजीठ हरिद्राद्वय–को समान भाग लेकर गोपित्त में पीसकर पीना लाभदायक होता है। मूषक बिष में गृहधूम, मजीठ, हल्दी, सेंधानमक–इनको पीसकर लगाया लेप कर्णिका को गिराता है। और बिष प्रभाव को नष्ट करता है। बिष वेग में अनिवार्यत: लाभकारी महागद में भी मंजिष्ठादिगण उपयोग किया गया है।

मजीठ नाड़ी संस्थान सम्बन्धी व्यक्तियों में भी उपयोगी है। अर्थात् वातरोगों में लाभदायक है +इसी कारण यह वात व्याधि में उपयोगी एलादि तैल, महाबलातैल, अश्वगन्धातैल माषतेल, प्रसारणीतैल, महाराजप्रसारिणीतैल, में इसे उपयोग किया जाता है। मजीठ नाड़ी संस्थान (Nervous–System) के मस्तिष्कीय उद्वेग प्रधान रोगों में विशेषत: लाभकारी है, क्योंकि ये मस्तिष्क एवं नाड़ियों को शान्ति पहुँचाती है।

जीर्ण ज्वर में शिर:शूल की अवस्था में इसकी मस्तक पर लेप करने से काफी लाभ अनुभव होता है कामला, पक्षबध में भी मजीठ का उपयोग किया जाता है रक्तपित्त में भी आयुर्वेद में इसका प्रयोग हुआ है। दूर्वाद्य में यह ग्रहण की जाती है विशेषांगो के बर्णन के समय एक बात रह गयी थी यहां लिखता हूँ मजीठ की मूल १५ के भी अपने बिशेष गुण हैं। यह त्वग्रोग में बिशेष उपयोगी है मंजिष्ठा शाक के बिषय में भी कहा है।

शाके स्यान्मधुरा लघ्वी स्निग्धा दीपि करीमता।
वातपित्तहरी चोक्ता ऋषिभि: सत्यवादिभि:॥

उपादेयांग, प्रतिनिधि

मजीठ की मुख्यत:मूल काम आती है। यही लाल रंग की शुष्कमूल मजीठ है। साथ ही फल, पत्र भी उपयोगी है। मजीठ प्रतिनिध–कवींबा और सलीखा. मजीठ का अति प्रयोग शिर तथा वस्ति को हानिकारक है। दर्पनाशक–गोंद कतीरा और अनीसून।

१४—लाक्षा हरिद्रा मञ्जिष्ठा कल्कैस्तैलं विपाचयेत्।
षड्गुणेनारनालेन दाह शीत ज्वरापहम्॥

१५—त्वग्वैवर्ण्यहरं मूलं तिलकालकयोस्तथा।
लेपात्तन्नाशकं प्रोक्तं प्रत्यहं नीरपेषितम्॥

व्यवहारिक प्रयोग

लोक में मजीठ 'वस्त्ररंजिनी, पर्याय खूब सार्थक करती है। प्रचीन काल में तो यह उपयोग और भी अधिक था किन्तु अब जमनी ने मंजीठा रंग कृत्रिमरूप से बना कर काष्टिक मंजिष्ठा का व्यवहार नील की तरह बन्द करा दिया है औषधों में यह तैलों के रंजन तथा शोधनार्थ व्यवहृत है।

भूलसुधार

दिसम्बर १९६० में—

पृष्ठ ४१३ दूसरी हैडिङ्ग की लाइन में सभापति पर दिया गया भाषण के स्थान पर सभापति पद पर से दिया गया पं० विश्वेश्वरदयालु सम्पादक—"अनुभूत योगमाला" का भाषण सुधार कर पढ़ें। पुनः 'कुकरोंधा" का फार्म 'गर्भविज्ञान' से प्रथम लगाकर पढ़ें फार्म इधर से उधर हो गया है।

—सम्पादक

तुलसी

[शेषांश ८८ पेज का]

वात श्लेष्म ज्वर (इन्फ्लुएञ्जा) में—तुलसी की चाय उत्तम है। तुलसी २भाग, वेलपत्र १ भाग बनफसा १ भाग, दालचीनी १ भाग, इलायची दाना १, गोलमिर्च १ भाग, पत्रज आधा भाग, मिश्री ८ भाग का क्वाथ चाय की तरह पीने से साधारण प्रतिश्याय ज्वर शमन होता है।

मलेरिया—फिटकरी फूला १० मा०, तुलसी पत्र २०, गोलमिर्च ५ में रख सुबह शाम खानेसे मलेरिया ज्वर नही आता। तुलसी के निकट मच्छर नहीं आते। वनतुलसी 'वरबरी' यह भी मच्छर भगाने के उपयोग में लाया जाता है।

प्रत्येक हिन्दू घरों में कार्तिक महीना प्रवेश करते ही तुलसी के निकट घृत का दीप जलाया जाता है इसका मुख्य कारण मलेरिया प्रायः इसी महीने में होता है अतः तुलसी की हवा से मलेरिया के कीटाणु मरते हैं अतः धर्म कृत्य से रोग से बचाव होता है।

वचा

आचार्य श्री विरंचि शर्मा जी वैद्य आयुर्वेद बाचस्पति, रतनशहर(राजस्थान)
(प्रधान मन्त्री—राजस्थान प्रदेश वैद्य सम्मेलन)

आयुर्वेदोन्नति के लिये आदर्श राजस्थान प्रान्त के आयुर्वेदीय नेताओं में उल्लिखित मान्यवर आचार्य जी द्वारा हमारे विशेष निवेदन पर 'माला' के लिये यह लेख रत्न भेंट किया है। आप राजस्थानीय प्रदेश वैद्यसम्मेलन के प्रधानमन्त्री होने के साथ ही आप अपने क्षेत्र के सफल चिकित्सक, अध्यापक एवं प्रसिद्ध लेखक हैं। अनेक धमार्थ औषधालयों को जनता के परोपकारार्थ संचालन कर रहे हैं। अपने व्यस्त समय में से कुछ कार्यक्रम 'माला' की ओर लगाकर जो आपने यह अनुभवपूर्ण लेखलिखा, तदर्थ हम आभारी हैं।

—ज्ञानेन्द्र पाण्डेय

संस्कृत में वच को सुगन्धा. उग्रगंधा, षड़गंधा जटिला, शतपर्विका—महामारी, वचा, मलयबचा कहते हैं। हिन्दी में—बच, घुड़बच, बंगला—बच, म०—कोष्ठकुलीञ्जन, गु०—कुलिञ्जन, बज, घोड़ा बज, फा०—अगरेतुर्की ते०—बडज, अं०—Sweetflagroot, ले०—Acoruscalamsr

उत्पत्ति स्थान—सीलोन आदि जगहों में है। भावप्रकाश निघन्टु आदि ने कई प्रकार की वतलाई है। स्वर को ठीक करने वाली, आम को पचाने वाली, बद्धकोष्ठहर, तृषा को दूर करने वाली, पाक में चरपरी, कटु तिक्त रस—उष्णवीर्य कटु बिपाकी, वातकफघ्ना, पित्तला, रुचिकर दीपन स्वरभेद, कण्ठशोथ, प्रतिश्याय, कफकास, शामक; मुखकन्ठ शोथघ्न, लालास्राावक, अनुलोमक, हृद्य, बुद्धिवर्धक, उन्माद, भूतग्रह आदि को दूर करती है, कान्ति बढ़ाती है, इसका मूल काम में आता है। ज्वरघ्नी भी कहा है, इसमें स्वेद लाने की बड़ी ताकत है। मात्रा इसकी २ से ६ रत्ती तक है। ज्यादा मात्रा में देने से हानि कारक है। इसका उपयोग प्राचीन काल से आयुर्वेद में विशेष होता है। विशेष कर इसके प्रयोगों का अपना अनुभव लिखता हूँ विशेषोपयोगी सिद्ध हुई है।

(१) यह स्नायु दौर्वल्य आदि नाड़ीजन्य व्याधियों की महौषधि है। स्त्रियों और बच्चों के लिये तो विशेष उपयोगी है। हिष्टेरिया, उन्माद, पागलपन, अपस्मृति (मृगी) आदि में १॥ रत्ती वच का चूर्ण शहद के साथ दिन में चार बार देते रहने से वहुत लाभप्रद पाई गई है जहां कोई औषधि काम न करे वहां इसका प्रयोग मैंने देखा है बहुत आश्चर्यजनक फायदा करता है।

(२) प्रतिश्याय (जुखाम) में वच के कपड़ छन चूर्ण की पोटली करके सूंघता रहे और इसके चूर्ण की १॥—२ रत्ती की मात्रा पान में लेते रहने से विशेष फायदेमंद है।

(३) अपचन से आध्मान में यदि वच का चूर्ण १ माशा नमक थोड़ा विशेष मिलाकर गरम पानी से देने से ही तत्काल वमन होकर आध्मान ठीक हो जाता है यदि १ रत्ती वचका चूर्ण ४ रत्ती काला नमक के साथ दें तो वमन भी नहीं होता और तत्काल आध्मान का दोष मिट जाता है।

(४) पेट के दर्द में भी नमक मिलाकर या उबाल कर क्वाथ में नमक का प्रक्षेप देकर देने से तत्काल फायदा करता है।

(५) पेट के कृमियों को निकालने में भी इसका १ माशा जो कूट चूर्ण १० तोला पानी में उबाल छान कर मिश्री या चीनी मिला पिलाने से कई रोज में घोर कृमि नष्ट हो जाते हैं कृमि इसे मीठे के साथ ही देना चाहिए

(६) शिर: दर्द में सूंघने व लेप करने से आधा शीशी अर्धाव भेदक आदि दर्द ठीक हो जाते हैं।

(७) अम्लपित्त में वचका चूर्ण—और खाने के साथ या दो र० भोजन के बाद लेने से पूरा फायदा होता है

(८) मृगी में भी इसके चूर्ण की २ र० मात्रा शहद में बराबर देते रहने से फायदा होता है।

(९) अनिद्रा में—पीपलामूल १ र०, वचा १ र० गुड़ २ र० की गोली रात को देने से अच्छी नींद आती है।

(१०) स्वरभेद में इसका दूसरा टुकड़ा मुख में रख चूसने से पूरा फायदा होता है।

(११) कर्णस्राव में भी इसे तिलों के तेल में पकाकर छान कर २-२ बूंद डालने से पूरा फायदा होता है।

(१२) प्यास ज्यादा लगने पर इसका टुकड़ा मुह में रखें मिश्री के साथ तो और भी अच्छा रहता है।

(१३) मंदाग्नि में भी इसका दूध के साथ प्रयोग करने से फायदा करती है यहां तक की कइ रोगियों का तो विशेष क्षुधा से दिक्कत हो जाती है।

(१४) मूर्च्छा रोग में इसका नस्य और चूर्ण दूध या शहद से देना चाहिए।

(१५) पक्षाघात के लिए इसका पूरी मात्रा १-१॥ माशा की मात्रा में दूध में उबाल मीठा मिलाकर देवें तथा वच को जलाकर तेल में मिला आधा शरीर में मालिश करना भी फायदेमंद है।

(१६) बच्चों के न्यूमोनियां आदि में इसको घुट्टी बनाकर थोड़ा सुहागा मिला देने से तत्काल फायदा करती है।

(१७) चोट जन्य दर्द वात जन्य दर्द हो बहुत दिनों का हो या न हो उसके तेल में इसे बाल कर उस तेल की मालिश की जावे बहुत फायदामंद है

(१८) इसका लेप अपक्वव्रण व वात शोथ में मेथी के दाना के साथ दूध में पीस लेप करने मात्र से ठीक हो जाते हैं

(१९) संधिवात का दर्द या अन्य किसी भी जगह का दर्द हो इसका दूध में क्वाथ करके पिलाते रहने से बहुत रोगी ठीक हुये हैं।

(२०) कई बार किसी प्रकार का बिषपान स्नान वगैरह स्त्रियां कर लेती है उसमें वान्ति कराने में ३-६ माशा कालानमक १ तो० के साथ दो देने से ठीक होता है।

(२१) मैं तो कई बार २-४ काली मिरच डाल कर बुड़ वचा चूर्ण ४-४ र० की पुड़िया दे देता हूँ बोल देता हुँ ज्वर (मलेरिया) आने से पूर्व २ दे दिया करो दधि देवें तो फायदा शीघ्र ज्वर रुक कर हट जावेगा।

(२३) घर में इसका तथा नीम के पत्तों का धुआँ देने से मच्छर मक्खी कम हो जाते हैं मर जाते हैं।

(२४) श्वास के रोगी को भी कफ नहीं निकलता है। और कष्ट पा रहा हो तो चूसने से ही नहीं इसका क्वाथ कर नमक मिलाकर पिलाते रहने से ठीक होगा।

(२५) खांसी में बच्चों को आधी से १ र० तक शहद में कई बार देते रहने से फायदा बहुत होता है।

(२६) जिसको वृषण शोथ हो जावे और वह ज्यादा समय का नहीं हो तो इसका लेप करे गरम पानी के साथ लेप दें।

(२७) जिसकी आंत उतरती हो उसको इसके क्वाथ में काष्ट्रायल ६-६ मा० मिलाकर पिलाना चाहिये।

(२८) बच को ज्यादा वाह्य उपचार में ली जा सके तो वहुत फायदेमन्द है। मैं इसकी राख व्रण, नासूर व्रण, अन्य कई लोगों को फायदा करता है।

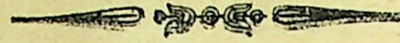
(२९) आसन्नप्रसवा को केसर या कस्तूरी के साथ दशमूल देने से ज्यादा इसका क्वाथ लाभ करता है।

(३०) बच जैसी निर्भय औषधि खोजने पर भी नहीं मिलेगी।

(३१) यह स्वप्नमेहमें २-२ र० कबाबचीनी के चूर्ण के साथ इसे भी २-२ र० देने से बहुत फायदा हो सकेगा। इस पर मैंने विशेष ध्यान देकर अनुभव किया है अतः और आगामी फिर कभी लिखेंगे।

वनपुष्पा (वनप्सा)

कविराज श्री भोलादत्त जी पांडेय आयुर्वेद बृहस्पति, एम० आर० ए० एस० पिलखोली (अल्मोड़ा)



पर्वतीय वनस्पति वेत्ताओं में श्री आचार्य जी का नाम उल्लेखनीय है। आयुर्वेद में अनुक्त पार्वत्य वनौषधियों के अन्वेषण तथा निघण्टु निर्माण का कार्य उत्तर प्रदेश वैद्य-सम्मेलन ने अपने पीलीभीत अधिवेशनावसर पर आपको सौंपा गया था। इस आदेश को पालन करते हुये मान्य लेखक ने वर्षों पहाड़ी जड़ी-बूटियों की उपासना कर उनका विशेष मौलिक शैली से अध्ययन करते हुये २००० संस्कृत श्लोकों में 'पार्वतीय निघण्टु'' की रचना की, जिस पर झांसी विश्वविद्यालय द्वारा डाक्टरेट भी प्राप्त हुई है। प्रस्तुत लेख उसी ग्रन्थ में से लिखकर लेखक ने 'माला' के भेंट किया है। वास्तव में आपका यह प्रयास आयुर्वेद जगत के वनस्पति विशारदों एवं ज्ञान पिपासुओं के लिये एक नवीन निर्देशन है। आपने वनस्पति उद्यान का भी निर्माण किया था जो कि कुछ स्थानीय सज्जनों का कोपभाजन हुआ। आप स्थानीय फिजीशियन एसोशियेसन के सेक्रेटरी भी रहे हैं आशा है आयुर्वेदीय निघण्टु के विकाश में इसी प्रकार संलग्न रहेंगे।

—ज्ञानेन्द्र पाण्डेय

दुद्भातो, वनप्सा वा समरूपेण जायते।
पर्वतीय प्रदेशस्य साधारण वनादित: ॥
उर्वराक्षेत्र भूमीनां भित्ति यावत् वनप्सिका।
आह्वीव भू विस्तरणी नैरन्तर हरिद्वती ॥
वानस्पत्या छदान्यस्या: क्षुद्रातिक्षुद्ररूपत: ।
भवन्ति पाठा-ताम्बूलदलवत् फाल्गुनेतथा ॥
दण्डैव सूक्ष्मश्चोत्पत्य बिकासी भवतिस्वत:।
पुष्पवर्ण श्वेतकिंचित नीलाभामयमाप्यते ॥
मृदुगंधयुतं पुष्पं पिच्छिल दर्शनीयकम्।
पर्वतीया ग्राम्यजना एकीकृत्वा सुमानि ते ॥
विक्रीणन्ति; विशेषेण कफरोगेषु लाभदा:।
वानस्पत्यास्ति, फुप्फुस-प्रदाह शोष रोगयो:
शुष्ककासश्च हिक्काया हृद्रोग श्वासयोस्तथा।
तृष्णा मूत्राबरोधस्य पित्तजान्तर्दहस्य च ॥

पीनस स्वरभेदश्च प्रमेहो रक्तातस्य च।
रक्तपित्तं प्रदरयो र्वमनस्य विशेषत: ॥
राजयक्ष्मादि रोगाणां अनुभूतास्तिचौषधि:
प्रयोगोऽस्या: कषायस्य हिमश्चपानकस्यच।
अवलेहश्च चूर्णश्च घृत-तैलस्य रूपके।
क्रियन्ते चानुसारेण रोगस्थित्याभिषग्वरै:।
अस्याहिमं पानकश्च पित्तस्य प्रवलस्य हि
नाशको, मदकारी च तृप्तिकारक निश्चितम्
पुष्पम्लानान्तरं तस्या तद्दण्डेषु भवन्ति च
फलानि लघुवृत्तानि, फलान्त: संभवन्तित
सूक्ष्माति सूक्ष्मबीजानि, श्वेतवर्णानिवर्ण
एतद्द्वारा वनप्साया वृद्धिर्भवति सर्वदा
दण्डयुक्तानि पुष्पाणि गृह्यन्ते कार्य साधने
मूलानि पत्र जातानि नो गृह्यन्ते कदाच

पुनर्नवा

श्री ज्ञानेन्द्र पाण्डेय वैद्य, गुरुकुल काँगड़ी हरिद्वार (बनस्पति बिशेषांक सम्पादक)

> आज पुनर्नवा एक आश्चर्य जनक प्रसिद्ध वनिस्पति बन गई है। जो कि वस्तुतः ठीक है। अनेक रोगों में साधारण जड़ी से आशातीत लाभ होता है। पर कहीं से इसके 'रिसर्च' (?) की भी भ्रमात्मक आवाज़ आ रही है। इसका भी खण्डन इस लेख में पढ़िये कि आयुर्वेद की पूर्व वर्णित वनिस्पति पर किस प्रकार रिसर्च का जाल चढ़ाया गया है।
>
> —ज्ञानेन्द्र पाण्डेय

चिकित्सा जगत में पुनर्नवा सदैव से महत्व-पूर्ण द्रव्य मानी जा रही है। इसकी प्राप्ति सुलभ है और सभी ग्रमीण, नागरिक वैद्य बन्धु क्या सम्पूर्ण लगभग जन साधारण इससे सुपरिचित है। फिर भी पुनर्नबा के बिषय में कुछ अन्यवान स्पतिक परिचय देना आवश्यक है।

नाम-पर्याय

पुनर्नबा के संस्कृत में निम्न पर्याय है १—पुनर्नबा, श्वेतमूल, शोथघ्नी, दीर्घपणिका, रक्ता, रक्तपुष्पा, शिवाटिका, क्षुद्र, बर्षाभू, जटिला, सद्यो बिशेष; बृश्चिको, मण्डल पत्रक, दीर्घपत्र, बर्षकेतु, कठिनतलक, क्रूरको, रक्तवृन्तक, शिवाटिका, श्वेतमूली, पृथ्वाक, विशांष, दीर्घताभू, पुनर्भू मण्डल, च्दद, भुबकेतु, कटिल्लक, परातिक्ता क्षुद्रवर्णा, रक्तकण्डा, प्राबृषायणी।

पुनः पुनर्नवा भबति इति (जो प्रतिवर्ष फिर से नवीन हो जाये), शरारं पुनर्नवं करोति (जो रक्तवर्धक होने से शरीर को पुनः नया बना दे)।

हिन्दी—गदहपुरना, गदहविण्डो, **बिसखपरा** सांट, गदहपुर्णा, इटसिट और बंगाली—**पुनर्नवा,** गदापुण्या, पंजाबी, इटसिट, मराठी— **घेटुली,** खापरा, गुजराती—रातीसाटोडी, **वसेडो, तामिल** सुकुण्ट्टि, तेलगू—आतातासाभिदि. अरबी—**हन्द-**कूकी, कन्नड़—मुचोहुगोनी, अंग्रेजी—**स्पेडिंग** हांगबीड Spreding-Hogweed **लैटिन—बो-**र्हेविया डिप्पयूला (Boerhavia-**Diffusa)** श्वेत पुनर्नवा के पर्याय भी इस प्रकार हैं—**पंजाबी** राजस्थानी—यिषखपरा, बंगाली—**श्वेतपुष्पा,** मराठी—नर्मा, खापरा, गुजराती—सफेद **साटोडी,** फारसी—दव्व अस्पत, अरबा—जिन्दकूका, **गन्द-**कोका, तामिल—शारुननाई, तेलगू—**गलीजेरू,** लैटिन-ट्रीयन्थेमा—पेन्टेण्ड्रा (Triantho**ma-**Pentandra)।

बर्ग परिचय

आधुनिक प्राकृतिक समानता के **आधार** पर पुनर्नवा को (Natural order) में **निक्टे-**निनेसी (Nyctaninaceae **पुनर्नबा कुल)** वर्ग में रखा जाता है। आचार्य सुश्रुत **ने इसे** बिदारीगंधादि गण में रखा है—'विदारिगन्धा

१—अपरा क्षुद्रावर्षाभू रक्तपुष्पा शिवाटिका।
कठिल्लको वर्षकेतु, क्रूरको रक्तवृन्तकः॥

विदारी बिश्वदेवा, जीवकर्षभकौ महासहा बृहत्यौ पुनर्षवैरण्डो हंसपादी बृश्चिकाल्य वृषभी चेति।' आचार्य चरक ने इसी बयःस्थापन, कासहर, स्वेदोपग, अनुबासनोपग बर्गों में रखा है।

सभेद बानस्पतिक स्वरूप

पुनर्नबा-लोक में इटसिट, गदहपूर्णा. बिसखपरा, के नाम के पर्याप्त प्रसिद्ध है। अत: इसका परिचय नहीं दे रहा हूँ। हां इसके भेदों के बिषय में कुछ कह देना आबश्यक सा है।

कुल मिलाकर चार प्रकार की पुनर्नबा कही जा सकती है। रक्त, श्वेत, नील, कृष्ण। श्वेत और रक्त तो प्रसिद्ध ही है, श्वेत भेद अधिक प्राप्त नहीं होता है। रक्त सांठ श्वेत के समान फल पाकान्त नहीं होती है। पुष्पों में बर्ण भेद तो होता ही है। शोषाकृति में कोई विशेष भेद होता नहीं। रक्त भेद श्वेत की अपेक्षा अधिक प्राप्त होता है। इस वहुवर्षायु प्रसारिणी लता जाति की बूटी पुनर्नवा की जातियों के बिषय में अधिक पड़ने की आबश्यकता नहीं। इस बोर्हेबिया बानस्पतिक कुटुम्ब में ८३ प्रकार वनस्पतिज्ञों द्वारा बताये जाते है और ५ जातियां भी लिखी गयी है, चिकित्सोपयोगी निम्न चार हें।

Boerhavia-Verticillata, Boerhavia-Diffusa, Boerhavia-Repana, Boerhavia, Repens और श्वेत पुनर्नवा (जो कि नैसर्गिक कुल (N. O.)—Ficoideac में भी रक्खी जाती है) के ट्रायेन्थेमा वनस्पति परिवार में ५५ प्रकार और नौ जातियां हैं। चिकित्सा में प्रयुक्त भेद इस प्रकार रखे जाते हैं—

Trianthema-Porteelacastreem, Trainthema-Pentandra, Trianthema-Erystallina, Trianthema-Decandra.

इन दो पुनर्नबा रक्त एवं श्वेत के अतिरिक्त नील और कृष्ण भी होती है। रक्त व श्वेत में भी जातियां पाई जाती हैं। ऊपर कुछ संकेत किया भी है नील पुनर्नबा का पुष्प नील बताया गया है। कृष्ण में भी नील की तरह अप्राप्त है। यदि अप्राप्त न मानना चाहे तो दुर्लभ तो निस्सन्देह ही है। वैसे आजकल रक्त एवं श्वेत व्यवहार्थ हैं।

गुण धर्म

आयुर्वेद मतानुसार पुनर्नवा के गुण इस प्रकार हैं—रस–तिक्त, मधुर, कषाय, वीर्य–उष्ण (रक्तपुनर्नवा–शीतवीय), बिपाक–मधुर (रक्तभेद कटु), गुण–लघुरूक्ष। पुनर्नबा त्रिदोष नाशक होती है। शीत होने से रक्तपुनर्नवा वात वर्धक और पित्त हर हो जाती है।

कटु: कषायानुरसा पाण्डुघ्नी दीपनी परा।
शोफानिलगरश्लेष्महरी ब्रघ्नोदर प्रणुत्॥
(भा० प्र०)

पुनर्नवाऽरुणा तिक्ता कटु पाका हिमा लघुः।
वातला ग्राहिणी श्लेष्म पित्त रक्त विनाशिनी॥

सामान्य रूप से भी देखिए:—

पुनर्नवा भवेदुष्णा तिक्ता रूक्षा कफापहा।
सशोथपांडु हृद्रोगकासोर: क्षत शूलनुत्॥
(ध० नि०)

शरीर पर प्रभाव

पुनर्नवा का उक्त रूप से शरीर के प्रमुख उनका वृक्कों पर प्रभाव डालती है वैसे मूत्रजनन

शोथघ्न, हृद्य कर्म सम्पादन के अतिरिक्त, दीपनी व्रणहर, शूलप्रशमन, वृष्य, रक्तभारवर्धक, अनुलोमन, रेचन, कासघ्न, स्वेदजनन, रसायन, कुष्ठघ्न, ज्वरघ्न, विषघ्न भी है।

यूनानी मतानुसार भी जानना अप्रासंगिक नही है। दूसरे दर्जे में गरम और रूखी, किसी के तजुर्बे में इसका फूल दूसरे दर्जे में गरम और रूक्ष, भीतर की जड़ मृदुकारक, कफ और पित्त के बिकारों को और फोड़े का नाश करने वाला खून साफ करती है, भूख बढ़ाती है, प्रायः अवयवों के वरम को नष्ट करती है, अधोवायु को उत्पन्न करने वाली भी है।

श्री के० एम० नादकर्णी लिखते हैं—

"Bitter stomachic, laxative, diuretic, expectorant and emetic. The root is purgative, onthelmintic and febrifuge. The active principle is a diuretic chiefly acting on the glomeruli of the kidney through in creasing the heart beats and strengthening and raising the peripheral blood pressure in consequnce on liver the action is principalli secondry On otherorgans the durg has practically no effect,"

श्री डाक्टर बा० ग० देसाई पुनर्नबा काशरीर प्रभाब बताते हैं (नव्यमत)—'पुनर्नवा से मूत्रपिण्ड को कुछ भी त्रास न होकर मूत्र का प्रमाण दूना बढ़ता है। मूत्रजनन गुण आधा तोला की मात्रा में देने से हा होता है। कफघ्न किया थोड़ी २ बार २ देने के बाद देखने में आती हैं। वमन होने के लिए ४० रत्ती की मात्रा एक-दो बार देनी पड़ती है। इससे उल्टी के विरेचन होकर दोनों मार्गो से कफ निष्काशित हो जाता है। पुनर्नवा का स्वेदजनन गुण अल्प हैं। इसका असर हृदय पर अल्प प्रमाण में, किंतु धीरे २ स्पष्ट होता है। हृदय को संकोचन क्रिया बढ़ती हैं। रक्तजोर से धमनियों में जाता है, रक्तप्रेसर बढ़ जाता है। और शिराओं से हृदय में रक्त अधिक शोषण होता है।'

आमयिक प्रयोग

पुनर्नवा के संगठन सम्बन्धी (Constituents) अनुसन्धान भी यहां अवश्य देख लेने चाहिये। इसमें पुनर्नवीन (Punarnavine) नामक एक क्षार तत्व Alkaloid sulphate ०·०१प्रतिशत, पोटेशियमनाइट्रेट Potassium nitrate ६·४१ प्रतिशत, साथ ही स्नेह द्रव्य (an oily amorphous) होते हैं इसकीभस्म (ASH) में सल्फेट, क्लोराइड, नाइट्रेट और क्लोरेट पाये जाते हैं।

मूत्रवह संस्थान सम्बन्धी रोग

पुनर्नवा मूत्रवहसंस्थान (Urinarysystem) पर मुख्यतया प्रभाव डालती है। इसका सम्बन्ध हृदय से भी रहता है। पुनर्नबा का मूल क्वाथ जब रोगी पर प्रयोग किया जाता है तो मूत्र अधिक मात्रा में आने लगता है। मूत्रजनन गुण आधा तोला की मात्रा में देने से सम्पादन होता है। पुनर्नबा का प्रयोग करने से रक्त का दबाव बढ़ता है। इस रक्तचाप वृद्धि से मूत्र का प्रमाण बढ़ता है, शरीर में जमा हुआ पानी कम होता है पुनः यह शोथ को कम करती है।

The drug may by given in conditions where there is lessened secretion or where increased secretion of kidney is wanted; thus in all renal affection stopping recretion of kidney, in ascites either from cirrhosis of liver or heart or kidney. As it increases the systolof heart it may be useful in all stenosed conditions of the valws

(Indian meteria medica)

जब कि हृदय या वृक्क विकृतिजन्य शोथ, जलोदर आदि रोग हो जाते हैं, तब यह, वृक्क विकृति को सुधार देती है। यह कार्य इस स्थल पर बहुत अच्छा करती है।

ड्राप्सी (Dropsy) में मूल का चूर्ण, चिरायता, सोंठ, पोटास नाइट्रेट मिलाकर बाह्य प्रयोग लाभदायक होता है। पत्रों का शाक भी मूत्र संस्थान सम्बन्धी रोगियों पर अधिकाधिक प्रयोग करना चाहिये।

पुनर्नवायुग्ममुष्णवीर्यं रसायनं सरम्।
कफानिलामदुर्नामव्रध्न शोथोदरापहम्॥

(चक्रपाणिकृत द्र० स० शाकवर्गे)

इसके पत्रों का स्वरस उष्ण, गुण विशेषरूप से स्पष्ट करता है। पुनर्नवा के कल्क में ताम्रभस्म पाई जाती है। पत्रों के शाक का गुण राजनिघण्टु में—

वर्षाभूवसुकौश्लेष्म वह्निमान्द्यानिलापहौ।
पाके रक्तनौ गुल्म प्लीहशूलापहारकौ॥

(राजनिघण्टु, मूलकादि वर्गे)

आचार्य चरकने चरकसंहिता के शोथ चिकित्स[illegible] में लिखा है—

'पुनर्नवा क्वाथ कल्क सिद्धं शोथहरं घृतम्[illegible] यही नहीं सुश्रुत ने भी– वर्षाभूकषायं मूलकल्[illegible] वा शृङ्गवेरं पयोऽनुपानमहरहर्मासम्, (सु० चि० अ० २३) चरक पूर्वोक्त पुनर्नवा घृत पर्याप्त लाभ करने के कारण प्रसिद्ध हो गया है। सिद्धयोग संग्रह का पुनर्नवाष्टक क्वाथ—रक्त पुनर्नवा मूल हरीतकी, पटोल, नीम, सोंठ गिलोय, दारुहल्दी सबको सम भाग लेकर क्वाथ बनाया जाता है। इसमें १–२ तो० गोमूत्र मिलाकर पिलाना चाहिए यह क्वाथ यकृत प्लीहा वृद्धि उदररोग शोथ सन्धिबात में लाभ करता है। सुश्रुत ने पुनर्नवा शाक (तेषुपौनर्नवंशाकं बिशेषाच्छोफ नाशनम्) को बिशेष रूप से शोथ रोग में उपयोगी बताया जाता है पुनर्नवा के साथ मरिचचूर्ण मिलाकर शोथ में लाभकारी पाई गई है।

हृदौर्बल्य जन्य शोथ एबं दकोदर में पुनर्नवा का प्रयोग हृद्य है। फिर वही मूत्रल क्रिया प्रारंभ हो जाती हैं ऐसे समय यह काकमाची से किसी प्रकार कमनहीं। पुनर्नवा, देवदारु सौंठ, खश, [illegible] क्वाथ में गोमूत्र मिलाकर प्रयोग करने से शोथ किसी प्रकार रह नहीं सकती यह सिद्ध योग है।

श्वेत पुनर्नवा शोथ रोग की प्रमाणित औषधि है इसके दो तोले स्वरस में ६ माशा म[illegible] दिन में दो बार देना चाहिए। पुनर्नवा की लुगदी खूब बनाकर काढ़ा बनाइये फिर उसमें मिश्री और उसका सोलहवां हिस्सा शोरा मिला दें ठीक प्रकार से गल जाने पर छान कर शीशी [illegible]

रख लें। इसका सेवन विशेष सज्वर शोथ में लाभ करता है। मूत्र बढ़ा देता है।

पुनर्नवा मूल मूत्रसंजनन होने के नाते उपदंश (गिनोरिया आन्तरिक विभिन्न शोथ, Strangury आदि में लाभ करती है पुनर्नवा के शाक को पकाकर सैन्धव लवण मिलाकर रोटी के साथ साथ रोगी को सेवन कराना पथ्य भी है। साथ ही भोजन का भी काम चल जाता है ऐसा श्री वाट्ट अपनी 'डिक्शनरी आफ दी एकनामिक प्रोडक्ट्स आफ इंडिया में लिखते हैं श्री आर० एन० खोरी के अनुसार पुनर्नवा का लेप त्वग्गत शोथ में भी लाभ पहुँचाता है।

यदि शोथ रोगी केवल पुनर्नवा शाक का नियमित सेवन करता रहे और लवण परित्याग कर सैन्धव का प्रयोग (मात्रा यथान्यून ही हो) करता रहे तो उसे अन्य किसी औषधि की आवश्यकता नहीं पड़ती ऐसा देखा गया है।

नेत्ररोग एवं 'रिसर्च' (?)

पुनर्नवा आजकल नेत्र रोगों की एक प्रख्यात औषधि मानी जा रही है। दिल्ली के किन्हीं 'आयुर्वेद अनुसन्धान केन्द्र' ने इसे अपनी एक नवीन खोज कहकर, इस विज्ञापन को दुनियां में बोलबाला करने का एक प्रयास किया। उनके विचार से पुनर्नवा नेत्र रोगों में ही लाभकारी है, यह उनकी खोज है। इसके विरुद्ध मैंने भी आवाज उठाई और इसी सिलसिले में मैंने अपने विचार नवभारत टाइम्स, हिन्दुस्तान, अनुभूतयोगमाला, आयुर्वेद सन्देश, धन्वन्तरि आदि में प्रकाशित कराये। परिणमत, इस केन्द्र (१) से पत्र व्यवहार भी हुआ, मामले को टालने के साथ ही हमको अनावश्यक, व्यर्थ का आदर सम्मान दिखाकर दबाने की चेष्टा की गई। आप भी जानते होंगे कि पुनर्नवा तो प्राचीन कालसे हीं नेत्र रोगों की अव्यर्थ औषधि है फिर रिसर्च किस बात का? रही, 'विमल ज्योति' की बात इसके विषय में समझ में नहीं आता कि यह कोई वनस्पति है या अदृश्य शक्ति अन्यथा स्पष्टीकरण न किया जाता। आशा है हमारे पाठक वृन्द ऐसी रिसर्चों से अप्रभावित रहेंगे।

आचार्य भावमिश्र एवं योगरत्नाकरने[२] पुनर्नवा के नेत्ररोग सम्बन्धी प्रयोग लिखे हैं। जो यथास्थान पाठकों को देख लेने चाहिए। उनमें से सिद्ध योग कुछ इस प्रकार है–पुनर्नवा जड़ को नीबू के रस में घिस कर लगाने से नेत्रों की फूली नष्ट होती है। मोतियाबिन्द पर जड़ को भृंगराज के स्वरस में घिसकर लगाना चाहिये। नेत्रों के स्राव में शहद में घिस कर अंजन करना चाहिये। आंखों की कण्डू एवं अश्रुस्राव मेंइसकी

२—(क) घृतेन मूलकं चास्य ह्यञ्जितं हन्तिपुष्पकम्
मधुना सह मूलन्तु ह्यञ्जितं स्त्रावनाशकम्
अञ्जित मार्कवरसैर्नेत्रकण्डू निवारणम्। केवलेन
जलेनैव ह्यञ्जितं तिमिरापहम्॥
जलेन गोशकृता च पिपल्या चाञ्जितं यदा।
रात्र्यान्ध्यंनश्यते तेन चोष्णाः पर्णरसःस्पटतः॥
(ख) दुग्धेन कण्डूं क्षौद्रेण नेत्रस्रावञ्च सर्पिषा।
पुष्पं तैलेन तिमिरं कांजिकेन निशान्ध्यताम्॥
पुनर्नवा हरत्याशु भास्करस्तिमिरं यथा
(भा० प्र० म० ख० ४ भा०)

The drug may by given in conditions where there is lessened secretion or where increased secretion of kidney is wanted; thus in all renal affection stopping recretion of kidney, in ascites either from cirrhosis of liver or heart or kidney. As it increases the systolof heart it may be useful in all stenosed conditions of the valws

(Indian meteria medica)

जब कि हृदय या वृक्क विकृतिजन्य शोथ, जलोदर आदि रोग हो जाते हैं, तब यह वृक्क विकृति को सुधार देती है। यह कार्य इस स्थल पर बहुत अच्छा करती है।

ड्राप्सी (Dropsy) में मूल का चूर्ण, चिरायता, सोंठ, पोटास नाइट्रेट मिलाकर बाह्य प्रयोग लाभदायक होता है। पत्रों का शाक भी मूत्र संस्थान सम्बन्धी रोगियों पर अधिकाधिक प्रयोग करना चाहिये।

पुनर्नवायुग्ममुष्णवीर्यं रसायनं सरम्।
कफानिलामदुर्नामव्रध्न शोथोदरापहम्॥

(चक्रपाणिकृत द्र० स० शाकवर्ग)

इसके पत्रों का स्वरस उष्ण, गुण विशेषरूप से स्पष्ट करता है। पुनर्नवा के कल्क में ताम्रभस्म पाई जाती है। पत्रों के शाक का गुण राजनिघण्टु में—

वर्षाभू सुकौश्लेष्म वह्निमान्द्यानिलापहौ।
पाके रूक्षतरौ गुल्म प्लीहशूलापहारकौ॥

(राजनिघण्टु, मूलकादि वर्ग)

आचार्य चरकने चरकसंहिता के शोथ चिकित्सा में लिखा है—

'पुनर्नवा क्वाथ कल्क सिद्धं शोथहरं घृतम्। यही नहीं सुश्रुत ने भी– वर्षाभूकषायं मूलकल्कं वा शृङ्गवेरं पयोऽनुपानमहरहर्मासम्, (सु० चि० अ० २३) चरक पूर्वोक्त पुनर्नवा घृत पर्याप्त लाभ करने के कारण प्रसिद्ध हो गया है। सिद्धयोग संग्रह का पुनर्नवाष्टक क्वाथ—रक्त पुनर्नवा मूल हरीतकी, पटोल, नीम, सोंठ गिलोय, दारुहल्दी सबको सम भाग लेकर क्वाथ बनाया जाता है इसमें १–२ तो० गोमूत्र मिलाकर पिलाना चाहिए यह क्वाथ यकृत प्लीहा बृद्धि उदररोग शोथ सन्धिबात में लाभ करता है। सुश्रुत ने पुनर्नवा शाक (तेषुपौनर्नवंशाकं बिशेषाच्छोफ नाशनम्) को बिशेष रूप से शोथ रोग में उपयोगी बताया जाता है पुनर्नवा के साथ मरिचचूर्ण मिलाकर शोथ में लाभकारी पाई गई है।

हृद्दौर्बल्य जन्य शोथ एवं दकोदर में पुनर्नवा का प्रयोग हृद्य है। फिर वही मूत्रल क्रिया प्रारंभ हो जाती हैं ऐसे समय यह काकमाची से किसी प्रकार कमनहीं। पुनर्नवा, देवदारु सौंठ, खश, के क्वाथ में गोमूत्र मिलाकर प्रयोग करने से शोथ किसी प्रकार रह नहीं सकती यह सिद्ध योग है

श्वेत पुनर्नवा शोथ रोग की प्रमाणित औषधि है इसके दो तोले स्वरस में ६ माशा म[illegible] दिन में दो वार देना चाहिए। पुनर्नवा की लुगदी खूब बनाकर काढ़ा बनाइये फिर उसमें मि[illegible] और उसका सोलहवां हिस्सा शोरा मिला दें ठीक प्रकार से गल जाने पर छान कर शीशी

रख लें। इसका सेवन बिशेष सज्वर शोथ में लाभ करता है। मूत्र बढ़ा देता है।

पुनर्नवा मूल मूत्रसंजनन होने के नाते उपदंश (गिनोरिया आन्तरिक बिभिन्न शोध, Strangury आदि में लाभ करती है पुनर्नवा के शाक को पकाकर सैन्धब लवण मिलाकर रोटी के साथ साथ रोगी को सेवन कराना पथ्य भी है। साथ ही भोजन का भी काम चल जाता है एसा श्री वाट्ट अपना 'डिक्शनरी आफ दी एकनामिक प्रोडक्स आफ इंडिया में लिखते हैं श्री आर० एन० खोरी के अनुसार पुनर्नवा का लेप त्वगत शोथ में भी लाभ पहुँचाता है।

यदि शोथ रोगी केवल पुनर्नवा शाक का नियमित सेवन करता रहे और लवण परित्याग कर सैन्धव का प्रयोग (मात्रा यथान्यून ही हो) करता रहे तो उसे अन्य किसी औषधि की आवश्यकता नहीं पड़ती एसा देखा गया है।

नेत्ररोग एवं 'रिसर्च' (?)

पुनर्नवा आजकल नेत्र रोगों की एक प्रख्यात औषधि मानी जा रही है। दिल्ली के किन्हीं 'आयुर्वेद अनुसन्धान केन्द्र' ने इसे अपनी एक नवीन खोज कहकर, इस विज्ञापन को दुनियां में बोलबाला करने का एक प्रयास किया। उनके विचार से पुनर्नवा नेत्र रोगों में ही लाभकारी है, यह उनकी खोज है। इसके बिरुद्ध मैंने भी आवाज उठाई और इसी सिलसिले में मैंने अपने बिचार नबभारत टाइम्स, हिन्दुस्तान, अनुभूतयोगमाला, आयुर्वेद सन्देश, धन्वन्तरि आदि में प्रकाशित कराये। परिणमत, इस केन्द्र (१) से पत्र व्यवहार भी हुआ, मामले को टालने के साथ ही हमको अनावश्यक, व्यर्थ का आदर सम्मान दिखाकर दवाने की चेष्टा की गई। आप भी जानते होंगे कि पुनर्नवा तो प्राचीन कालसे हीं नेत्र रोगों की अव्यर्थ औषधि है फिर रिसर्च किस बात का? रही, 'विमल ज्योति' की बात इसके विषय में समझ में नहीं आता कि यह कोई वनस्पति है या अदृश्य शक्ति अन्यथा स्पष्टीकरण न किया जाता। आशा है हमारे पाठक वृन्द एसी रिसर्चों से अप्रभावित रहेंगे।

आचार्य भावमिश्र एवं योगरत्नाकरने२ पुनर्नवा के नेत्ररोग सम्बन्धी प्रयोग लिखे हैं। जो यथास्थान पाठकों को देख लेने चाहिए। उनमें से सिद्ध योग कुछ इस प्रकार है-पुनर्नवा जड़ को नीबू के रस में घिस कर लगाने से नेत्रों की फूली नष्ट होती है। मोतियाविन्द पर जड़ को भृंगराज के स्वरस में घिसकर लगाना चाहिये। नेत्रों के स्राव में शहद में घिस कर अंजन करना चाहिये। आंखों की कण्डू एवं अश्रुस्राव मेंइसकी

२—(क) घृतेन मूलकं चास्य ह्यञ्जितं हन्तिपुष्पकम्
मधुना सह मूलन्तु ह्यञ्जितं स्त्रावनाशकम्
अञ्जित मार्कवरसैर्नेत्रकण्डू निवारणम्। केवलेन
जलेनैव ह्यञ्जितं तिमिरापहम्॥

जलेन गोशकृता च पिपल्या चाञ्जितं पदा।
रात्र्यान्ध्यंनश्यते तेन चोष्णः पर्णरसःस्पटतः॥

(ख) दुग्धेन कण्डूं क्षौद्रेण नेत्रस्त्रावञ्च सर्पिपा।
पुष्पं तैलेन तिमिरं कांजिकेन निशान्ध्यताम्॥
पुनर्नवा हरत्याशु भास्करस्तिमिरं यथा
(भा० प्र० म० ख० ४ मा०)

मूल को दुग्ध या भृंगराज के रस में घिस कर लेप करिये, अवश्य लाभ पहुँचता है। इससे काफी रोगी अच्छे किये जा चुके हैं। रतोंधी में इटसिट को गोबर के रस में घिसकर प्रयोग करना चाहिये। नेत्र रोगों सम्बन्धी योगों में श्वेत पुननवा ही लाभ कारी है, रक्तपुननवा उतनी नहीं।

अन्यरोगों में निश्चित लाभदायक

श्वांस संस्थान (Respiratory system) सम्बधी बिकारों में भी पुननवा लाभ करती है। अनेकों प्रयोग बिद्धानों द्वारा बत ए गये हैं कुछ अनुभूत प्रयोग लिखता हूँ पत्रों का रस, मिश्री मिलाकर पानक तैयार कर पच्यमानावस्था में छोटी पीपल मिलादें। फिर यह शर्बत बालकों के कास, श्वांस, फुफ्फुस-शोथ, प्रतिश्याय आदि में काफी लाभ करता है। कभी २ फेफड़ों में शोथ होकर खांसने में ज्ञात होता है कि वक्षस्थल श्लेष्मा से पूर्ण है। भयानक श्वांस कष्ट भी हो जाता है उस अबस्था में पुनर्नबा को बिधिवत प्रयोग करना चाहिए श्लेष्मा या वात में अथवा फुफ्फुस बिकृति जन्य वक्ष-शूल में सांठ को पानी में पीसकर पिलाना चाहिए शुष्कप्रतिश्याय में पुनर्नबा चूर्ण को दूध में उबालकर क्वाथ बना कर पिलाने से आश्चर्य जनक लाभ होता है। उत्तम स्वच्छ पुनर्नबा मूल का स्वरस निकाल कर उसमें $\frac{1}{8}$ हिस्सा स्प्रिट (रेक्टीफायड) मिलाकर एक सप्ताह बाद छानलें। उस समय चौथियाई हिस्सा स्प्रिट मिलाकर व्यवहार में (४ बूंद से आधा ड्राम मात्रामें खानेसे कास श्वास प्रतिश्याय में लाभ करती है।

रक्तवहसंस्थान (circulatory system) पर भी पुनर्नबा का अच्छा प्रभाव पड़ता है हृदय शूल एवं गति वृद्धि में इसकी जड़ का चूर्ण जल के साथ सेवन कराना लाभदायक होता है। यह प्रयोग दिल धड़कने की बीमारी जो कि आजकल खूब व्याप्त है और सामान्य मेहनत से द हृदय पर प्रभाव पड़ता हो+एसी अवस्थाओं में पुनर्नवा का अवश्य प्रयोग कराना चाहिये

पुननवा उपदंश रोग में भी लाभ करती है। कुछ देहाती चिकित्सक इस योग को काममें लाते हैं। पुनर्नवा के मूल चूर्ण में ८ वां भाग सिंगरफ मिलाकर गोलियां बना लें उसे बेरी की अग्नि से चिलम में रख कर धूम्रपान कराते हैं मुखपाक इस प्रयोग से हो जाता है तो कत्थ। और चमेली से गण्डूष करना चाहिए उक्त प्रयोग से रोगी का उपदंश अच्छा होने लगता है केवल जड़ का ही धूम्रपान भी गिनोरिया में लाभप्रद है। साथ ही उपदंश व्रणों पर-पुननवा मूल को निम्ब स्वरस में घिसकर लगाना चाहिए जब मूत्र दाह होता है तो पुनर्नबा चूर्ण का प्रयोग जल के साथ करना चाहिए योनिशूल की पुनर्नबा अव्यर्थ औषधि है। अपामार्ग पत्र द्वयं यानिमध्ये निबिष्टे व्रणाद्यानि शूलं निहन्ति। सुदुर्वारमप्येवमेव प्रयुक्तो बिद्धप्रद्र सस्तत्र पौनर्भवोऽपि ॥

स्त्रियों के योनि शूल में पुनर्नबा का स्वरस घृत में मिलाकर लेप करने से भी शान्ति प्राप्त होती है यह सिद्ध योग है (श्री रामनाथ वैद्य शास्त्री) स्तन की गिल्टियों में पुनर्नबा का लेप अतिशय लाभकारी है। स्त्रियों के मूढ़ गर्भ में पुनर्नबा का प्रयोग है—

मूलं पुनर्नवायाः सतैलमीषत् कृतं गुह्ये ।
गर्भं प्रवेपमानं सहसा स्त्रीणां बहिः कुरुते ॥
(शोढ़ल :)

इसी प्रकार सुखप्रसवार्थ भी प्रशस्त है:—

क्षुण्णा सतैला बर्षाभूशिफा च सुखप्रसूतिदा ॥
(वैद्य म०)

पुनर्नवा बिषघ्न द्रव्य के रूप में भी काफी प्रयोग की जाती है। मूषिक बिष में अत्युपयोगी है।

क्षौद्रेण लिह्यात् श्वेतां चापि पुनर्नवम् ।
(सु० कल्प स्थान)

अलर्क बिष में लाभ दायक सिद्ध हुआ है—

श्वेतां पुनर्नबाञ्चास्य दद्याद्धत्तूर कायुताम ।
(सुश्रुत कल्प०)

यह सर्पबिष पर भी प्रयोग की जाती है। जड़ को पानी में पीस कर कई बार पिलाने से बिष नष्ट हो जाता है। जब विष नष्ट हो जावे तो तुरन्त घृतादि सेवन कराना चाहिये।

पुनर्नवा के शुष्क पत्तों के चूर्ण को घी में मिश्रित कर मलहर तैयार करके कपूर घोंट देना चाहिये। इससे सर्व प्रकार के व्रण भगन्दर, नाड़ी व्रण, पृष्ठव्रण आदि अच्छे हो जाया करते हैं। भगन्दर में इसका यह योग विद्वानों द्वारा खूब प्रयोग हो चुका है हल्दी को हुक्का के पानी में पीसकर—पुनर्नवा की जड़ को इसमें पीस कर दिन में कई बार लेप करना चाहिये। साथ ही ३ माशा जड़ पानी में पीस कर प्रातःकाल पीना चाहिये। इस प्रयोग से कुछ ही दिनों में लाभ हो जाता हैं।

आमवात में पुनर्नवा लाभकारी है। कमर के दर्द का जब प्रातःकाल निद्रा के उपरान्त अनुभव होता हो तो सोते समय इसका चूर्ण गरम पानी से लेना चाहिये। वातकण्टक में भी प्रशस्त है—

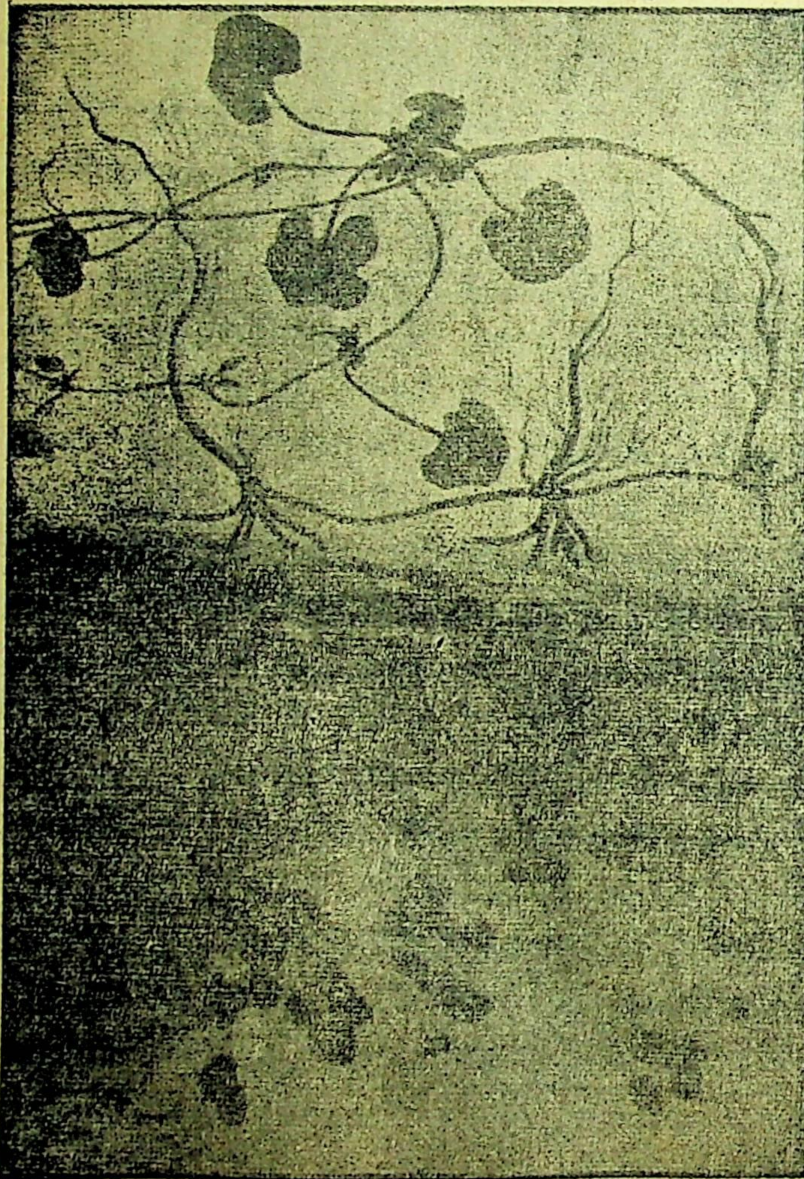
पुनर्नवायाः श्वेतायास्तैलं मूलेन साधयेत् ।
वात कण्टकमाहन्यात् पादाभ्यंगेनमर्द्दनात् ॥

निद्रा करण के लिये भी—पुनर्नवा क्वाथो निद्राकरो नृणाम्. (हरीत)। मदात्यये—पयः पुनर्नवा क्वाथ यष्टी कल्क प्रसाधितम्। घृतं पुष्टिकरं पानान्मद्यपानहतौजसाम्, (बृन्द) अश्मरी में भी उपयोगी है (वर्षाभूसिद्धमेव वा, सुश्रुत)। इसके अतिरिक्त पुनर्नवा ज्वर, कर्ण रोग, उरःक्षत, विद्रधि, कुष्ट, गुल्म, प्लीहोदर, पाण्डु, प्रदरआदिमें लाभकरतीहै, बिस्तृतविवेचन स्थानाभाव से नहीं कर सकता।

पुनर्नवा अनेक शास्त्रीय एवं अन्य योगों में प्रयुक्त की जाती है। यथा—पुनर्नवाष्टक क्वाथ, पुनर्नबा सब, पुनर्नबादिमण्डूर, पुनर्नवाम्बु, पुनर्नबातेल एवं घृत, पुनर्नवाबलेह, पुनर्नबादि क्वाथ; पुनर्नवा क्षार, पुनर्नवाक्षार, पुनर्नबा अर्क। पुनर्नबा का पञ्चांग पत्र, बीज और सर्बाधिक मूल अंग उपादेय है। प्रतिनिधि काकमाची है।

ब्राह्मी

वैद्यराज श्री हकीम दलजीतसिंह जी आयुर्वेदीय विश्वकोषकार
चुनार (मिर्जापुर)



आयुर्वेद यूनानी के समन्वय के प्रबल समर्थक आदरणीय श्री वैद्यराज जी द्वारा आयुर्वेदीय विश्वकोष का निर्माण किया गया है। अन्य ग्रन्थों का प्रणयन कर आयुर्वेद जगत् का आपने पर्याप्त भला किया है। 'सचित्र आयुर्वेद' के विशेषांक का भी आपने सम्पादन किया है। 'माला' पर आपकी सदैव से कृपा है। अतः पुनः आपने अपने उच्च वनस्पति ज्ञान की झलक से प्रतिपादित करते हुए ब्राह्मी पर वैज्ञानिक विवेचन किया है। हमारे वाचक इससे अवश्य ही लाभ उठायेंगे।

—ज्ञानेन्द्र पाण्डेय

आयुर्वेदिक प्राचीन प्रामाणिक एवं आधारभूत ग्रंथों के अवलोकन एवं परिशीलन से यह स्पष्टतया ज्ञात होता है कि ब्राह्मी और मण्डूकपर्णी दोनों एक ही द्रव्य के दो नाम नहीं हैं, अपितु दो भिन्न-भिन्न द्रव्यों के नाम हैं,

आदरणीय विद्वद्वर सुश्रुताचार्य महोदय ने स्व-रचित सुश्रुत नामक ग्रन्थ के चिकित्सा स्थान अ० २८ में मण्डूकपर्णी और ब्राह्मी के प्रयोग भिन्न २ लिखे हैं। इससे यह स्पष्ट होता है कि उस समय इनको भिन्न २ मानते और जानते थे। परन्तु कालवशात् आज इसमें भ्रान्ति जान पड़ रही है और दोनों को एक में मिलाकर भ्रम कारक बना दिया गया है। इसी लिये ब्राह्मी में ही मण्डूकपर्णी का और मण्डूकपर्णी में ही ब्राह्मी का बर्णन किया हुआ मिलता है। अथवा यदि किसी ने मण्डूकपर्णी का ब्राह्मी से पृथक वर्णन किया भी तो हरिद्वारमें प्रसिद्ध ब्राह्मी (Hydro cotyh asia tico) को किसी ने असली ब्राह्मी और किसी ने मण्डूकपर्णी मानकर किया जिसने इसको मण्डूकपर्णी मानकर वर्णन किया, उसने यद्यपि इसकी लता ब्राह्मी जैसी दीखती है ऐसा लिखा तो इसके साथ यह भी लिखा कि—दोनों सर्वथा भिन्नहैं। दोनों का स्वरूप, प्राकृतिक बर्ग और गुण कर्म भिन्न हैं; अत: एक के प्रति-निधि रूप में दूसर का व्यवहार नही करना चाहिये, ऐसा भी लिखा। इससे तथा जिसने इसको ब्राह्मी मानकर लिखा, उसने मण्डूकपर्णी का जो वर्णन लिखा, उससे वह मूसाकानी Ipomoea renifoumis जान पड़ती है। सचित्र आयुर्वेद में ब्राह्मी के बर्णन प्रसंग में दिये विद्वद्वर श्री उदयलाल जी महात्माके मण्डूकपर्णी के वर्णनसे ऐसा ज्ञात होताहै जो यद्यपि हरिद्वार में प्रसिद्ध ब्राह्मी से सर्वथा भिन्न द्रव्य है परन्तु उसे मण्डूकपर्णी माना जाय या नहीं यह प्रश्न उठ खड़ा होता है। श्रीमान यादव जी महराज ने तथा ठा० बलवन्तसिंह जी ने हरिद्वार वाली ब्राह्मी को मण्डूकपर्णी मानकर वर्णन किया है। और ब्राह्मी इसके समान पत्र वाली इससे सर्वथा भिन्न बनस्पति को जो सम्भवत: मूसाकानी हो अथवा हरिद्वार वाली ब्राह्मी की ही कोई दूसरी जाति। ठा० साहब ने वंगीय ब्राह्मी को ब्राह्मी लिखा है।

अब प्रश्न होता है कि हरिद्वार प्रसिद्ध ब्राह्मी को शास्त्रीय ब्राह्मी माना जाय या वंगीय ब्राह्मी को।

सुहृद्वर प्रो० ठा० बलवन्तसिंह जी ने अपने 'बिहार की वनस्पतियां' ग्रन्थ में हरिद्वार से आने वाली ब्राह्मी को बिहार प्रान्त के आदि वासियों के नामों के आधार पर 'मण्डूकपर्णी' होने की सम्भाबना व्यक्त की है। यदि इसे ठीक मान लिया जाय, तो क्यों न बंगीय ब्राह्मी को ही शास्त्रीय ब्राह्मी मान लिया जाय। उन्होंने उक्त ग्रन्थ में यही मत व्यक्त भी किया हैं। क्यों कि हरिद्वार की ब्राह्मी और बंगीय ब्राह्मी अपने-अपने प्रदेश में सुप्रयुक्त एवं परीक्षित है। अतएव उनमें से एक को ब्राह्मी और दूसरे को मण्डूकपर्णी मानने में कोई हर्ज भी नहीं है। परन्तु ऐसा निश्चय करने के पूर्व इन दोनों का शास्त्रीय विधि के अनुसार काफी रोगियों पर प्रयोग एवं परी-क्षण करने के उपरान्त ही इनमें अपने-अपने शास्त्रीय गुण-कर्मों को देखने के पश्चात् अंतिम निर्णय किया जाय, एसा मेरा मत है। आशा है वैद्यगण इधर ध्यान देकर अपने-अपने प्रयोग एवं अनुभव के आधार पर इनके गुणों का बिबरण देकर इस विबाद के समाप्ति में योग देंगे।

प्रसंगवश यहां मैं दोनों प्रकार की ब्राह्मी का विस्तृत विवरण दे रहा हूँ। अस्तु:

ब्राह्मी (उत्तर प्रदेशीय)

ना—(हिं०) ब्राह्मी, ब्रह्मी, कोल्याली (हरिद्वार); (का०) ब्रह्मबूटी, (पं०) बिरहमी, (गु०) खडब्राह्मी, बरमी, (म०) कारिबणा, (बं०) थुलकुडी, थानकुनी, (उ०) बरहमी, (आसाम) मनीमुनी (अ०) इंडियन पेनिवर्ट (Indiao penny wort), (लै०) हाइड्रोकोटाइल एशियाटिका (Hydrocotyle asiatiea, Linn.)।

वक्तव्य—यह बड़ी प्रसरणशील बनस्पति है जो उत्तर प्रदेश में अधिकांश वैद्यों द्वारा ब्राह्मी के नाम से ग्रहण की जाती है और हरिद्वार आदि से ब्राह्मी के नाम से भेजी जाती है। बिहार प्रांत में इसके वेंग साग (हिं०) अथवा चोके सा (हो०) नाम है, जिनका अर्थ है बेंग (मेंढ़क या चोके) का साक (साग या आ), इन परम्परा प्रचलित नामों के आधार पर 'बिहार की वनस्पतियां' के लेखक सुहृद्वर, प्रो० ठा०बलबन्तसिंह महोदय ने इसे निश्चित् रूप से शास्त्रकारों की मण्डूकपर्णी होने की सम्भावना व्यक्त की है। शास्त्रीय गुण-प्रयोगों को देखने से यह ज्ञात होता है कि ब्राह्मी को क्रिया नाड़ी व्यूह पर और मण्डूकपर्णी की क्रिया त्वचा पर होती है।

गर्जरकुल

Family Umbelli ferae

उत्पत्ति स्थान—यह उत्तर भारतबर्ष के कश्मीर, पेशावर आदि तथा उत्तर प्रदेश बिहार और बंगाल आदि प्रदेशों के ऊपरी भागों में पहाड़ियों में नालों के किनारे तथा जलासन्न भूमि में होती है।

यह जमीन पर फैलने वाली लता है। वर्षा ऋतु में सर्वत्र होती है, पानी वाली जमीन में सर्वदा होती है। यह क्षुप रूप में प्रायः कुछ भिन्न २ प्रकार का होता है। इसके कांड लम्बे प्रसरी और ग्रन्थियों पर मूलों से युक्त होते हैं, पत्ती गोल वृक्काकार, अखंड, परन्तु धारपर प्राय: गोलदन्तुर, ·५× ·२५ इञ्च व्यास (१–१॥ इञ्च बड़ा) में और सवृन्त होती है। पत्र पर सात सिरायें होती हैं। ताजी पत्ती के मसलने से सुगन्ध आती है। स्वाद कटु एवं तिक्त होता है। पत्ती सूखने पर स्वाद और गंध चला जाता है। ग्रन्थियों से कई पुष्पदण्ड एक साथ निकलते हैं। जिनमें पुष्प प्राय: संख्या में ३–५ और सवृन्त मूधज होते हैं। प्रत्येक पुष्पदण्ड के साथ प्राय: दो–दो स्पष्ट कोणपुष्पक (चौड़े खड्वाकार) होते हैं, पुष्पों के आभ्यन्तर दल गहरे लाल रंग के और लट्वाकार होते हैं पुंकेशर भी लाल होते हैं, फल और बोज चपटे होते हैं, आदिवासी शाक के रूप में इसका व्यवहार करते हैं। बड़ी पत्ती और फलों की किस्म बिहार में और छोटी पत्ती तथा लाल फलों की किस्म उड़ीसा में पाई जाती है।

इसकी एक दूसरी जाति (H. rotundifolia Roal.) भी छोटा नागपुर एवं नेतरहाट आदि प्रदेशों के ऊँचे जंगलों में प्राय: नदीनालों के किनारे पाई जाती है। इसका क्षुप अत्यधिक कोमल, पत्तियां पतली झिल्ली सदृश, स्पष्टत: ५-७ खण्डित और व्यास में अधिक से अधिक ७ इञ्च

तक होती हैं। कोण पुष्पवृन्द सूक्ष्म और प्रत्येक पुष्प दण्ड में पुष्प १०–१५ तक और अवृन्त होते हैं, (नि० व०)

रासायनिक संगठन—ताज़ी पत्तियों में ७८ प्रतिशत जल होता है, सूखी पत्तियों को जलाने से १२ प्रतिशत राख मिलती है। हरी पत्तियों में उत्पत् तैल होता है, जो उष्णता से उड़ जाता है यह तेल इसके गुणों के लिये मुख्य वस्तु है। इसके पत्तों को धूप या अग्नि में सुखाने से उनमें से उक्त तेल रूप ईथर उड़ जाता है और पत्ते गुणहीन हो जाते हैं, अत एव पत्तियों को सावधानी से छाया में सुखाकर काग लगे बोतल या शीशी में शीत तथा वायु से सुरक्षित रखना चाहिये।

इसके अतिरिक्त इसमें वेलरीन (Vellarin) नामक एक सफेद स्फटिकीय गुणोत्पादक वीर्य (राल), कुछ वसामय सुगंधद्रव्य, निर्यास, शर्करा कषाय द्रव्य; अल्व्युमिनीय द्रव्य और लवण, अल्केलाइट सल्फेट्स होते हैं।

उपयुक्त अंग—ताजे पञ्चांग का स्वरस या छाया शुष्क पंचांग का चूर्ण, इसका क्वाथ या फाण्ट नहीं बनाना चाहिये, क्यों कि गरम करने से इसका प्रभावकारी तैलांश उड़ जाता है।

कल्प तथा योग—ठंडाई, अर्क, चूर्ण (सारस्वत चूर्ण आदि), बटी (ब्राह्मीबटी), शर्बत, घृत (ब्राह्मीघृत आदि), ब्राह्मीतैल, भारतभैषज्य रत्नाकर में लिखित इसके योग—ब्राह्म्यादि स्वरस योग—सारस्वतचूर्ण, ब्राह्मीघृतम्, ब्राह्मी रसादियोग, सारस्वतघृतम्, सारस्वतारिष्ट आदि

मात्रा—स्वरस आधे से १ तोला, हरी ब्राह्मी के पत्ते ४–८ मा०, सूखी ब्राह्मी के पत्ते ३ से ५ मा० तक। पञ्चांग की मात्रा इससे दुगुनी ली जा सकती है।

ब्राह्मी (वंगीय)

नाम:— (सं०) ब्राह्मी, सरस्वती, मेधा, शारदा, तोयवल्ली, कांडकटुका (हि०) जल, नीम, (राजस्थान) बामं (गु०) कड़वी लुणी (ले०) हर्पेस्टिल मोनिएरा (Herpestis-monniera H. B. & K.) ग्रेटिओला मो० (gratialo menniera)

वक्तव्य—

वंगीय वैद्य इसे ब्राह्मी मानते हैं। मस्तिष्क तथा मंज्ञातंतु के रोगों में इसे हितकारी बतलाया गया है। नीम का तरह कड़वी होने के कारण इसे जलनीम कहते हैं।

कटुका–कुल (Family : Scrophu Lariaceae)

उत्पत्ति स्थान

पानी के समीप इसके पौधे प्राय: सर्वत्र पाये जाते हैं।

वर्णन

जलनीम का क्षुप (तृणजातीय उद्भिज्ज का प्रसर) प्रसरी और किंचित मांसल होता है। पत्तियां अमिलट्वाकार आयताकार स्रुवा के आकार की अखण्ड, अवृन्त, कुण्ठिताग्र और ३–.५ इंच लंबी होती है। पुष्प जामुनी मिला हुआ श्वेत या गुलाबी (Pink) रंग का होता है। पुष्प ३:–४५ इन्च लम्बा और उसका बृन्त

२५:-५ इन्च लम्बा होता है फूल ग्रीष्म तथा वर्षा में दीख पड़ते है डोडी छोटी और बीज बारीक होते हैं। जलनीम का स्वाद अत्यन्त तिक्त रस युक्त कड़बा और किंचित कषाय होता है। इसीलिये इसको जलनीम कहते है। श्री उदयलाल जी महात्मा के अनुसार यह तीव्र संशोधक है। राजस्थान में इसको उदर, जलोदर और शोथ के संशोधनार्थ लेते हैं।

गुण कर्म तथा प्रयोग

आयुर्वेदीय मतानुसार

चरक सूत्र अ० ४ के बय: स्थापन महाकषाय तथा वि० अ० ८ के तिक्त स्कंध में मण्डूकपर्णी का पाठ आया है। सुश्रुत सू० अ० ४२ के तिक्तवर्ग में मण्डूकपर्णी का पाठ आया है। इनके मत से मण्डूकपर्णी (शाक) तिक्त, कषाय, कटु बिपाक, लघु, शीतवीर्य, वय: स्थापन, कफपित्तहर, हृद्य, तथा रक्त पित्त, कुष्ठ, प्रमेह, ज्वर, श्वास कास और अरुचिका नाश करने बाली है (च० सू० अ० २७; सु० सू० अ० ४६)।

यह मेध्य और स्मृतिवधक; विशेषत: सौमनस्यजनन तथा उत्तमाङ्ग बलदायक है। वह रसमें तिक्त, कषाय, ! मधुर (है)गुण—रसायन मेध्य, स्वर्य, हृद्य और निद्राजनक है। बीर्य में शीत और बिपाक में मधुर है इसका प्रभाव मस्तिष्क पर कार्यकारी और वात कफ दोषों का नाशक है। यह उन्माद, अपस्मार, तुतलाना, स्मरणशक्ति की कमी में बिशेषकर लाभकारी है। इसमें आयुबर्धक, बुद्धि परिष्कारक (मेधा जनक) और स्वर माधुर्यकारक ये तीन बिशेष गुण है।

ब्रह्मी के प्रयोग सुश्रुतमतानुसार

हृतदोष एबागारं प्रविष्य प्रतिसंस्टष्ट भक्तोब्राह्मीस्वरसमादाय सहस्त्र संपाताभिहुत कृत्वा यथा बलमुपयुंजीत। जीर्णौषधश्चापराह्ने यवागूमलबणं पिबेत्त्क्षीरसात्म्यो वा पयसा भुंजीत एवं सप्तरात्र मुपयुज्य ब्रह्मवर्च सी मेधावी भवति। ××। सर्बाश्चैनं श्रुतय उपतिष्ठंति श्रुतधर: पंचशतायुर्भबति ॥ ६ ॥ (सु० चि० अ० २८)।

राजनिघण्टु ने ब्राह्मी को मलशोधक, गुरु, बुद्धिवर्धक और पित्तनाशक। विस्मृतिहर, प्रज्ञा, मेधा, वयस्थापक, शीतल, कषाय, तिक्त, रूक्षगुणयुक्त बतलाया है और मण्डूकपर्णी को कासहर पाक में मधुर, रक्तशोधक, चर्मरोगों में लाभप्रद और कुष्टनाशक तथा ज्ञानतंतुओं को शक्तिप्रद बतलाया है।

प्रयोग

मदुण्डूकपर्ण्या—स्वरस:प्रयोज्य: ××× । आयुप्रदान्यामय नाशनानि जलग्नि बर्ण स्वरवर्धनानि मेघ्यानि चैतानि रासायनानि ×××। (च० बि० अ० १० पा० ३) हृतदोष एवं प्रतिसंसृष्ट भक्तो यथा क्रममागारं प्रविश्य मण्डूकपर्णी स्वर समादाय सहस्त्र संपाताभिहुतं कृत्वा यथा बलं पयसाऽऽलोड्य पिबेत्पयोऽनुपानं वातस्यां जीर्णायां यवान्नं पयसोप युञ्जीत ।×× । बिल्वमात्रं पिंड वा पयसालोड्य पिबेदेवं दश रात्रमुपयुज्य मेधावी बर्षशतायुर्भबति ॥ ५ ॥ (सु० चि० अ० २८)।

यूनानी मतानुसार

प्रकृति—दूसरे दर्जे में गरम और खुश्क है। मतान्तर से सर्द एवं खुश्क है।

गुणकर्म—मेध्य और स्मृतिबर्धक, बिशेषत: सौमनस्यजनन तथा उत्तमांग बलदायक हैं।

उपयोग—इसको अधिकतया शीरा निकाल कर या चूर्ण बनाकर मेधाजनन एवं स्मृतिबर्धन के लिये गोदुग्ध के साथ खिलाते हैं तथा अन्य उपयुक्त औषधियों के साथ चूर्ण या गुटिका या माजुन बनाकर भी उपयोग करते हैं, कोई-कोई हकीम अन्य रोगों बिशेषत: शुक्रमेह में भी इसे नाना प्रकार से खिलाते हैं। अहितकर—उष्ण प्रकृति के लिये। निवारण—सूखा धनियां। प्रतिनिधि—दालचीनी, कबाबचीनी और तज। मात्रा–३ माशे से ५ माशे तक।

डाक्टरी मतानुसार

डा० बोस परीक्षण करने के बाद लिखते हैं कि वातिक निर्बलता (Nervessis debility) में ब्राह्मी के पत्तोंके चूर्ण से आशातीत लाभ हुआ हृदय की दुर्बलता दूर करने में कुचले की अपेक्षा ब्राह्मी अधिक उत्तम है।

नव्य मतानुसार

मण्डूकमर्णी कुष्टघ्न, घ्रणशोधन, व्रणरोपण मूत्रजनन स्तन्यशोधन, संग्राहक, बल्य और रसायन, हैं। बड़ी मात्रा में मादक है। इससे सिर दुखता है। चक्कर आते हैं और नशा चढ़ता है। इसकी त्वचा पर खास क्रिया होती है। इसका तैल त्वचा के मार्ग से निकलता है, त्वचा गरम मालूम होती है और त्वचा में चुभने सा मालुम होता है प्रथम हाथ पांव में चुभन मालुम होती है और पीछे शरीर में दाह मालुम होता है यहां तक की कभी–२ वह असह्य हो जाता है त्वचा की रक्त वाहिनियों का बिकास होता है और उसमें रक्त संचार शीघ्रता से होने लगता है त्वचा लाल होती है और उसमें खाज आने लगती है सप्ताह पीछे भूख बढ़ती है इसका तैल वृक्क के द्वारा निस्सारित होता है, इसलिये भूख का प्रमाण बढ़ता है। त्वचा के रोगों में यह उत्तम गुणकारक होता है, उपदंश की द्वितीया वस्था में जब रोग का जोर त्वचा और त्वचा के नीचे की कला में होता है तब इससे विशेष लाभ होता है। सर्व प्रकार के जीर्णव्रण' गण्डमाला, क्षयजव्रण और श्लीपद में यह उत्तम औषधि है व्रणपर ऊसका चूर्ण छिड़कने से व्रण जल्द बन्द भर जाता है त्वग्रोगों में ईसे खाने को देते हैं। और इसका लेप करते हैं। इसके कुछ दिन सेवन से त्वचा लाल होती है—और खाज आने लगती है। ऐसा होने पर इसकी मात्रा घटानी चाहिए या औषधि देना बन्द करके विरेचन देना चाहिये (डा० बा० ग० देसाई)

यह खास कर वातव्याधि में जब बुद्धि भ्रम हो जाता है उस समय बहुत उपयोगी है। यह मगज़ को बल देने वाली और उसकी क्रिया को सुधारने वाली है। उन्माद में ब्राह्मी का सेवन करने से लाभ होता है। परन्तु उसमें इतना याद रखना चाहिए कि तीक्ष्ण (Acute) यानी नूतन उन्माद में ब्राह्मी लाभकारी नहीं है जीर्ण (Chronic) पुरातन उन्माद के अन्दर ही उपयोगी है। पुरातन उन्माद में रोगी की जब उन्मत्तावस्था था शांत हो जाय उसमें किसी भी प्रकार की मदोन्मतत्ता देखने में नहीं आवें और दबाने की तथा पकड़ कर कैद करने की जरूरत न हो और उसमें किसी प्रकार का जोश नहीं

दिखायी दे किन्तु केवल ज्ञान नहीं हो और वह कोई भी काम ठीक नहीं कर सके, कुछ समय में काम करे औरकुछ समय में छोड़ दे। तथा बोलने की शुद्धि नहीं हो और जैसे वैसे शान्त वैठा हुआ वड़बाया करे इस प्रकार के रोगी को ब्रह्मा घी दो मास तक खिलाने से उसकी बुद्धि ठिकाने आ जाती है। और अपना काम नियमानुसार करमें लगता है तथा वह कुछ सावधान हो गया हो ऐसा मालूम देता है और उसका नित्य का काम सावधानी का सूचक होता है ब्राह्मी का रस तथा घी चाहे जो प्रयोग किया जाय वह लाभ कारी है। परन्तु तीक्ष्ण उन्माद में ब्रह्मी का प्रयोग नहीं करना चाहिए। ब्राह्मी मस्तिष्क को बलदायक होने से उससे रोगी लाभान्वित होने के स्थान पर विशेष जोश में आ जाता है ऐसे प्रसंग में उसके पग में बेड़ी डालकर रोक रखना, अधिक समय तक निद्रा-अवस्था में रखना वही वैद्य का मुख्य कर्त्तव्य हो जाता है इसके बिपरीत जीर्ण और शांत उन्माद में रोगी के मस्तिष्क को चेतन्य करना ही वैद्य का एक मात्र काम होता है। ब्राह्मी में मस्तिष्क को चेतन्य करने का गुण होने से यह शान्त उन्माद या उन्माद के बाद की अवस्था में उपयोगी है। और नऐ तथा तेज उन्माद में नुकसानकारक है ऐसे समय में खुरासानी अजवायन का प्रयोग हितावह होता है। किसी भी प्रकार के जोश वाले लक्षणों से रहित उन्माद का निश्चय हो जाय तो ब्राह्मी का प्रयोग प्रारंभ से भी कर सकते हैं वही तीक्ष्ण रूप धारण कर ले तो पहले के अनुसार निद्राप्रद खुरासानी अजवायनादि दवा देनी चाहिए और फिर शांति की अवस्था में ब्राह्मी घृत खासकर ब्राह्मी मगज की उदासीनावस्था में ही उपयोगी है।

(आर्य औषधि)

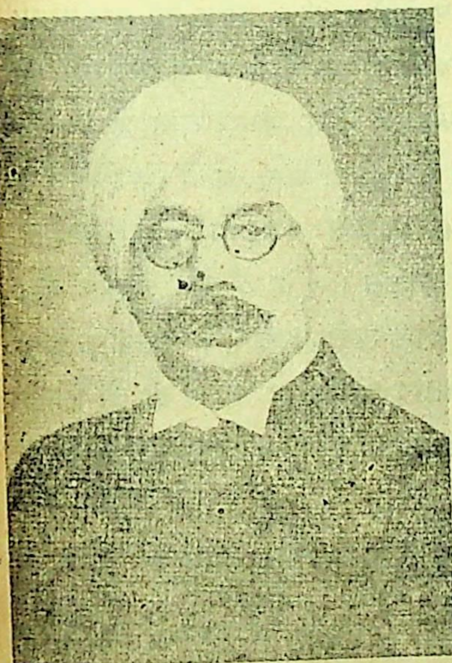
यहाँ पर स्वानुभवपूर्ण एक सत्य घटनाका उल्लेख कर देना उचित समझता हूँ आयुर्वेदीय बिश्वकोष के प्रकाशनावसर पर मैं बालोकपुर इटावा में वैद्यराज उक्त ग्रन्थ के प्रकाशक सुहृद्वर पं० विश्वेश्वरदयालु जी के यहाँ ही रहकर ग्रथ के शेषांक का लेखन और प्रूफ संशोधन कार्य करता था कोष के एकफर्मा अर्थात् ८ पृष्ट के मैटर का कम से कम चार बार सूक्ष्मतया अवलोकन तथा शेष मैटर का लेखन कार्य करने में सांयंकाल तक इतना थक जाता था कि पुनः और कार्य करने की इच्छा नहीं होती थी उस समय ग्राम के बाहर टहलने के लिये जाता था वहां गंगा की नहर की शाखाऐं चारों ओर व्याप्त हैं। उन के किनारों पर हरिद्वार से बहकर आयीं ब्राह्मी के क्षुप घास की तरह आच्छादित होते हैं। उनमें से ६—१० मांसे तक पत्तियों को ले धोकर उन्हें मुख में रखकर कुचलकर उनका स्वरस चूस लेता और सीठी फेंक देता इससे यह अनुभव होता था मानो मानसिक कार्य करने की स्फूर्ति पूर्ववत हो आई और यह इच्छा होती थी कि पुनः लेखनकार्य करू मानसिक थकान तो मिनटों में काफूर होता हुआ जान पड़ता था। तभी से मानसिक कार्य करने वालों के लिये मैं इसे आर्शीवाद रूप समझने लगा और इसका प्रसंशक बन गया।

अर्क

कविबिनोद श्री ठाकुरदत्त जी शर्मा वैद्यभूषण देहरादून

आयुर्वेदीय लोक में अपना एक विशिष्ट स्थान रखने वाले मान्यवर श्रीवैद्य राजजी द्वारा अनेक ग्रन्थों का निर्माण किया गया है। अनुभूत सिद्ध योगों के प्रकाशन से वैद्यसमाज को सदैव लाभान्वित करते रहते हैं। 'अमृतधारा' का आविष्कार सर्वविदित है। आप 'माला' के पुराने लेखक हैं। अपने व्यस्त कार्यक्रम में से कुछ समय निकाल कर अर्कपर अनुभव पूर्ण लेख लिखा है उसके लिये हम आभारी हैं। आक जैसी मामूली वनस्पति के आश्चर्य उपयोग पढ़िये।

—ज्ञानेन्द्र पाण्डेय



जिस देश में आक, नीब, वासा और तुलसी हो उस देश में रहने वाले यदि रोग ग्रस्त हों तो यह प्रज्ञा अपराध ही समझना चाहिये। या कर्मज कर्म रोग इस बिशेष अंक में चारों का वर्णन हो जायगा इसको भली प्रकार यदि समझ लिया तो चिकित्सा के लिये एक भारी कोष मिल गया मैं केवल एक बनस्पति आक का पूरा नहीं अधूरा वर्णन कर रहा हूँ। क्यों कि इस पर तो बहुत कुछ लिखा जा सकता है कई पुस्तकें आक के गुणों पर लिखी गई हैं।

परिचयात्मक दृष्टि

अर्क या आक या मदार दो प्रकार का होता है एक जो साधारण सब स्थानों पर मिलता है। दूसरा जिसके फूल विलकुल श्वेत होते हैं इसके बड़े २ वृक्ष हो जाते हैं इसके फूलों से सुगन्ध आती है। मैंने हैदराबाद (दक्षिण) में बहुत वृक्ष देखे थे। देहरादून में एक महात्मा ने अपनी कुटिया में एक वृक्ष लगाया हुआ है मैंने वहां से एक टहनी लाकर लगाई है। उसको दिव्य औषधि माना है और इसके बड़े चमत्कार हैं और यह तो स्पष्ट ही है कि जो गुण साधारण अर्क के लिखे गये हैं वही गुण श्वेत अर्क में

कई गुण अधिक हैं। मैं जो कुछ लिख रहा हूँ वह साधारण आक के विषय में समझना चाहिये आक का एक और प्रकार है जिसका मिलना बहुत दुर्लभ है उसमें एक ही टहनी होतीहै और उस पर तीन पत्ते होते हैं इसको अर्की कहते हैं और यह रसायन है।

आक को जन्तरों-मन्त्रों में भी बरतते हैं। एक वहम और देखा गया कि जिस मनुष्य की तीन पत्नियां मर जावें वह चौथा विवाह आक से करता है ताकि उसके बुरे कर्म बदल जावें और फिर पांचवीं स्त्री जीवित रहे। मुझको मालूम हुआ था कि एक बड़े पण्डित ने भी ऐसा किया था। बहम का इलाज बड़ा कठिन है। अरबों में भी एक बिचित्र बिचार है कि जब वर्षा नहीं होती तो आक के टोने करते हैं। जिसके बिचित्र ढंग हैं।

प्रत्येक अंग उपादेय

पत्ते, फूल, फूल का भीतरी भाग (लौंग), फल, जड़, छाल, बीज, आक की रुई जो उड़ती रहती है आक की टहनियों और पत्तों पर एक सफेद बारीक सी रुई की तरह जमी रहती है वो भी काम आती है। इसकी टहनियों की छाल और जड़ की छाल भी काम आती है। आक के ऊपर एक मोटा सा कीड़ा जिसको आक का तोता या आक का टिड्डा कहते हैं उसको भी दवाइयों में बरता जाता है। इसके पत्ते और टहनियों से दूध निकलता है और यह दूध तो औषधि निर्माताओं की जान है।

उपयुक्त वस्तु

यह ग्रीष्म ऋतु में होने वाला पौधा है। अप्रैल, मई, जून में फलता फूलता है और दूध एकत्र करना हो तो भी इसी समय एकत्र हो सकता है। उसी वक्त एकत्रित करके सुरक्षित कर लेना चाहिये।

अर्क दुग्ध की सुरक्षा विधि

खटाक इसमें नमक डालकर रखते हैं तब यह फटता नहीं है परन्तु औषधियों में कई बार नमक की मिलावट अच्छी नहीं होती तब कठि-नाई होती है। बोतल में भर कर ऊपर से तिल का तेल डाल रखने से भी कुछ समय सुरक्षित रहता है। एक जगह पढ़ा है कि 'एसिड सिलीसलास' एक सेर में ५ र० के हिसाब से मिलादें तो भी खराब नहीं होता। आक का दूध प्रायः भस्में बनाने या रसायन के काम में आता है या लगाने की औषधियों में बरता जाता है। वैसे खाने के लिये नहीं दिया जाता क्यों कि विष है। यदि कभी आवश्यकता पड़े तो २-३ बूंद से ज्यादा नहीं दे सकते। ६ मा० तो० मारक है। आक की हर वस्तु पित्तकारक है। इसकी छाल फूलों, पत्तों, आदि की खुराक खुश्क हो तो ४ र० से १ मा० तक और ताजा की इससे दुगुनी हो सकती है।

अर्क दुग्ध के प्रयोग

एक मलेरिया बुखार का नुस्खा कई लोग आक के दूध से बनाते हैं। आक का दूध १ तो० पिसी हुई मिश्री आध पाव, खरल में डालकर खरल करते-करते खुश्क करदें। इसकी खुराक

एक र० काफी है या २ र० दिन में ३ बार किसी अर्क या पानी से दें। बुखार में भी दी जा सकती है। दूध ज्यादा सेवन किया जाये तो वमन विरे‘चन तेज होता है। इस वक्त घी दूध को वार २ पिलाना चाहिये। जलोदर आदि कठोर रोग में आक या सेहुँड (थोहर) के दूध से भी बिरेचन कराते हैं।

अन्य सेवन

चावल को अर्क दुग्ध में भिगो कर सुखालें २ या ३ वार तर करके खुश्क करे तो तेज होगा इसकी नसबार लेने से छींके आती है कफनिकल जाती है। नजला जुकाम और उनके कारण हुई शिर पीड़ा जाती रहती है।

इसकी नसबार दूसरे ढंग से भी वनाते हैं। जंगली कंडों (उपलों) की साफ राख दुग्ध में तर करके सुखा कर बारीक करके शीशी में रख लें। ऊपर के गुणों के अतिरिक्त यदि मस्तिष्क में कफ या रक्त का जमाव हो तो उसको भी खोल देती है।

अर्क दुग्ध का काजल

साफ रुई को आक के दूथ में तर करके सुखा ले और उसकी वत्ती वना कर काजल उतारें। सुरमे की तरह सेवन करने से जाला फूला और मोतिया तक को भी गुण कारी लिखा है। बहुत थोड़ा सलाई को भरा कर लगावे।

रेचक बटी

भुने चने पीसकर अर्क दुग्ध में तर कर के चने बरावर गोली दें एक गोली गर्म पानी से दें।

अन्य प्रयोग

अर्क दुग्ध दुगुना घी मिला कर एक दिन खरल करके रखें थोड़ा सा तिला करें। ध्वज भंग को लाभ आवे।

आक का दूध लगाने के काम भी नही आता जगह लाल हो जाती है वरम हो जाता है छाला हो जाता है। जहर को जहर काटता है या ध्वज भंग की अवस्था में छाला डालने के लिये लगाते हैं।

अर्क क्षार

क्षार के रूप में भी इसको सेवन किया जाता है यह ढंग बहुत आसान और कष्ट रहित है।

आक के पेड़ काटकर खुश्क कर ले और फिर जला कर सफेद राख बना लें। फिर एक लोहे की कड़ाही में राख में बहुत सा पानी डाल कर अच्छी तरह मिला दें। जब राख ठहर जावे तो ऊपर का साफ पानी निथार लै। रही सही राख में फिर एक वार पानी डाल कर निथार लें इस स्वच्छ जल में नमक विद्यमान है। इसको आग पर सुखा लें तो शेष नमक का नमक या खार रह जावेगा। हर वस्तु का क्षार ऐसे ही बनाया जाता है। अर्क क्षार कीं मात्रा १ रत्ती है। खांसी, दमा, नजला, जुकाम, बुखार में इसको बरतते हैं।

अर्क के कुछ अमिश्रित योग

आमवात—

आक के पत्तों पर मीठा तेल चुपड़ कर गरम करके दर्द की जगह पर बाधें। आमबात् आदि दर्दो में लाभ कारी है।

उपदंश—

आक की जड़ की छाल २ रत्ती शहद में देने से आमबात और उपदंश में लाभकारी है। यही जड़ का चूर्ण गुड़ में मिला कर देने से शीत ज्वर को दूर करता है।

प्लेग—

आक के पत्तों की टहनियों पर जो रुई सी होती है उसको नरमी से उतार कर चने के बराबर गोली बना लें। प्लेग के रोगी को दिन में ३ बार १–१ गोली दें।

अग्निमांद्य—

आक के फूल के भीतर जो लौंग होते हैं, वह पाचन के लिये अत्यन्त गुण कारी है। इसमें मिठास भी होती है। उनको वैसे ही रोजाना ५–७ खावे या सूखे हो तो भी उनके खाने से पाचन शक्ति तेज होती है।

रक्तस्राव—

आक के फल के अन्दर जो रुई होती है उसको रक्त पर रखने से रक्त बन्द होता है।

सर्पादि दंश—

सर्प दंश पर अर्क दुग्ध को बार-बार लगावें जब तक जज्ब होता है विषनाशक है। ऐसे ही बिच्छू आदि विषैले डंकों पर।

अलर्क विष—

आक के मुलायम पत्ते २॥ नग लेकर २ तो० गुड़ में मिलाकर सिल बट्टे पर पीसकर ७ गोलियां बनालें। बावला कुत्ता काटे तो सात दिन तक पानी से खिलावें बिष दूर होगा।

सद्योशोथ—

जब किसी प्रकार चोट लगने से सूजन हो जावे और पीड़ा होती हो तो अर्क की टहनियों को तोड़कर ऊपर का छिलका उतार लें और अच्छी प्रकार बारीक करके छोटी २ टिकियां बना लें और तवे पर घी डालकर इन टिकियोंको दोनों तरफ से लाल करें और थोड़ा गर्म ही बांध दें. २–३ टिकियां रखने से ही वरम दर्द कम हो जाती है।

अर्क मिश्रित कुछ प्रयोग

श्वास रोग—

अफीम आधा ग्रेन, दुग्ध आक १ ग्रेन, संखिया १/२० ग्रेन, स्ट्रिकनियां १/३० ग्रेन, सबको भली प्रकार मिलाकर तीन भागों में बांट लें १–१ भाग सुबह शाम सेवन करें दमे में लाभ कारी है।

कुष्ठ—

संखिया सफेद, मिर्च काली, चिरायता, चिरायता घन, प्रत्येक १तोला पहली तीन औषधियोंको कूट पीसकर चिरायता घन में मिलाकर १८० गोलियां बनायें। १–१ गोली प्रातः शाम खाने के बाद खिलाएँ, कुष्ट रोग में लाभकारी है।

दन्त पीड़ा नाशक—

दुग्ध आक ५ तोला, शीशा नमक ५ तोला मिलाकर एक सकोरे में ५ सेर उपलों की आग गड्ढे में रखकर दें और पीस लें। दन्त पीड़ा को नित्य सुबह लगाने से दूर करता है लेकिन उस पीड़ा को जिसे ठंडे पानी के कुल्ला करने से ज्यादा होती है।

कास—

आक के फूल के अन्दर की लौंग १ तोला, खाने का नमक, पीपल बराबर मिलाकर काली मिर्च के समान गोलियां बनावें। बच्चों को रात को सोते समय १ गोली और बड़ों को २ गोली देने से खांसी बिलकुल नहीं रहती।

विभिन्न रोगोंमें एक अद्भुत औषधि

नौसादर, कलमी शोरा १-१ तोला, आकदुग्ध ४ तो०। नौसादर और कलमी शोरा को पीस कर लोहे की कड़ाही में डालकर कोयलों की तेज आग पर रखकर हिलाते जावें और साथ हीसाथ दुग्ध आक थोड़ा २ डालते जाएँ। हिलाने के लिये लोहे की सलाई हो। जब औषधि में धुआँ निकलने लगे और किनारे काले होने लगे तो कड़ाही को उतार लेवे और जब धुआँ वन्द हो जाय फिर आग पर रक्खो। दो–चार वार ऐसा करने से दूध उसमें समाकर खुश्क हो जायगा और औषधि का रंग बिलकुल काला लाली लिये हुये हो जायगा। ठण्डा होने पर पीसकर शीशी में वन्द रक्खें।

सेवन विधि—२ र० साधारण ज्वर में सफेद खांड में गर्म पानी से खिलादें निमोनियां पार्श्व-शूल के लिये ३ र० औषधि ३ मा० खांड सफेद में गर्म पानी से खिलादें। आंतों के दर्द के लिये उपरोक्त औषधि ४ र० उपरोक्त विधि से खिलाएँ

कफज कास श्वास—

आक के पत्ते सूखे हुये, कुटकी, नमक प्रत्येक ३ तो० तीनों को कूटकर एक सकोरे में बन्द कर आग पर रखें। जब नमकके चटकने की आवाज वन्द हो जावे तो उतार लें और बारीक पीस कर एक रत्ती के बराबर पान में रख कर खायें। अगर कै हो तो बहुत शीघ्र स्वस्थ होंगे यदि कै न आये ७ दिन तक बराबर खाते रहें।

श्वास

विष वच्छनाग ३ मासे, आक की जड़ ६ मा०, दोनों को पीस कर ॥ पाव अदरक के अर्क में खरल करे। उरद के बराबर गोलिया बना कर नित्य सुबह को १ गोली खिलावे। खाने में घी का सेवन अधिक करे।

उदर विकार

आकके फूल की लौंग एक भाग, पीपल और सोंठ, दो २ भाग, नमक सांभर ३ भाग, सबको पीस कर चने के बराबर गोलियां बनालें और १–२ गोलिया आमाशय की कमजोरी बदहजमी आमशय को पीड़ा और अफरे में खिलाये।

बिसूचिका, कास, मन्दाग्नि

आक के फूल ६ तोला, मिर्च काली ३ तो०, खाने का नमक ३ तोला, लौंग और जौहर नौसादर हरएक ६ मासे, चूना कली अनबुझा ३ मासे, अफीम शुद्ध ॥ मासे सब औषधियों को एक दिन अदरक के रस में और एक दिन नीबू के रस में खरल करके चने के बराबर गोलिया बना कर लें। १ या २ गोली तक गुलाब के अर्क के साथ हैजे में २–२ घंटे के समय के बाद खिलाये। आमशय के रोगों में सुबह शाम गुलाब अर्क से दें। खांसी में भी लाभकारी है। मधु में चटावें।

हैजा

आक की जड़ का छिलका, काली मिर्च, तोल में बराबर पास करके चने के बराबर गोलियां बनाये। १ या २ गोली अर्क सौंफ व गुलाब और शिकंजबीन के साथ देने से हैजा के रोग से निरोग हो फौरन कै और दस्त बन्द हो जाते हैं।

हैजे में जब ऐठन और निराश हालत हो तो उपरोक्त औषधि एक या २ बार देने से परमेश्वर की कृपा से स्वास्थ्य लाभ हो जाता है।

कोलेरा पर अनुभूतयोग

आक के फूल जो खिले न हो १ तोला; सुहागा भुना हुआ, पीपल, लोंग, सोंठ प्रत्येक ५ मासे सबको बरीक पीस कर अदरक के पानी में गोलियां २ रत्ती के बराबर बनाये और नीम की अन्तर छाल के क्वाथ से खिलाये और लहसुन को कूट कर नाखूनों पर बंधवाये। हैजे को दूर करने के लिये आक के बहुत प्रयोग हैं।

जलोदर

तम्बाकू खाने वाला ५ तोले, संखियां एक मासे, दोनों को आक के दुग्ध में तर करके इतना खरल करे कि सुरमें के समान बारीक हो जावे। यह दवा आधी रत्ती दो दिन खिला कर २ दिन न दें। खाने के लिये दोपहर को जलेबी और तीसरे पहर के बाद मूंग की खिचड़ी मुलायम सी थोड़ा सा घी डाल कर दे। और दवाई न देने वाले दिनों में खाना चने का पानी गेहूँ की रोटी खिलायें। इससे पसीना काफी आकर स्वस्थ हो जाता है।

कफोदर

आक के हरे पत्ते १ पाव, हल्दी २ तोला लेकर पहले पत्तों को खूब बारीक पीस लें। इसके बाद हल्दी कूट छानकर मिलामें और खूब खरल करे। उरद के दाने के बराबर गोलियां बना कर ताजे पानी से चार गोली सेवन करें और एक गोली हर रोज बढ़ाते रहे यहां तक कि सात गोलियां तक खावे इसके बाद ७ गोलियां ही प्रति दिन खावें।

आम बात गृध्रसी नाशक

दो सेर आक के पत्ते एक घड़े में तह बिछा कर उन पर सौंठ १ छटांक रख दें और उपर भी वैसे ही पत्ते रख दें। उपर से १ सेर पानी डालें और घड़े के मुह पर कोई भारी वस्तु रख दें नीचे आग जलाए। जब पानी सूख जाये और बोलना बन्द कर दे तो आग बुझा दें प्रात: के समय अपने आप को गरम भाप से बचाकर घड़े का मुह खोले और सौंठ निकाल कर आध सेर गो घृत में भूनें। फिर निकाल कर शहद में रखेऔर घी को सुरक्षित रखें यह सौंठ गठिया और कफज गृघ्रसीके लिये लाभकारी है सोंठ ३ माशे शहदके साथ खावें और घी में रोटी चूर कर खावें पानी कम पीयें और इसी को जोड़ों पर मालिस करें।

जादू तिला

जायफल स्याह ३२ नग लोगें पाँच छटांक, बीरबहूटी १० तो० जमाल गोटा ५ तो० सखिया सफेद ३ तो० सब को आध पाव आक दुग्ध में खरल करके गोलियां बना लें। छाया में सुखाकर

पताल जन्त्र द्वारा तेल प्राप्त करें। १५ दिन बाद सेवन करें।

अर्शांकुरः—

हल्दी को बारीक पीस कर ७ बार दुग्ध आक में तर व खुश्क करें इसके बाद दुग्ध आक में घिस कर मस्सों पर लगायें। कुछ समय सेवन करने के बाद मस्से सूख कर झड़ जायेंगे

सर्प दंश की अचूक औषधिः—

संख, अफीम, नीला थोथा, ऐलवा, फिटकरी कुचला बुरादा किया हुआ, नौसादर, हुक्के की मैल बराबर २ लेकर बारीक पीस कर दुग्ध आक में भिगो लें फिर बारीक करके काटी हुई जगह पर उस्तरे से काट कर एक रत्ती औषधि मल दें और जख्म की जगह से उपर बंद लगा दें ताकि उपर की ओर विष न चढ़ सकें फिर सींगी से बिष चूस लें यदि विष का प्रभाव अधिक हो तो यह एक रत्ती औषधि पानी में मिलाकर पिलायें बिष कै द्वारा निकल जावेगा। फिर नाकमें भी फूकदें तो रोगीको चेतना आजायगी।

अगर सांप काट ले तो-
(दूसरा महान योग)

सफेद रत का (घोघची) १ तो० ठीकरी नोसादर १ तो० नीलाथोथा १ तो० चोक बूटी १ तो० कूट पीसकर सकोरेमें डालकर आक का दूधडाल खुश्क करें ऐसा दो बार करें। जब गोली बांधने योग्य हो जावें तो चने के बराबर गोली बनालें एक गोली घिसकर सांप काटे की जगह पर उस्तरे से २-१ पच्छ लगाकर उक्त लुगदीको रखदें

कुछ आवश्यक भस्में भी देखिये

संखिया भस्म—

पारा १ तोला, संखिया दूधिया (जिसमें सफेदी के अतिरिक्त और कोई चिन्ह न हो) २ तो० दोनों को आक के दूध में १२ पहर खरल करें। जब टिकिया बनने के योग्य हो जावे तो पतली टिकिया बनाकर दो दिन छाया में रखें। तत्पश्चात् एक मिट्टी के बर्तन में पांच सेर बालू रेत डालकर बीच में जरा सा गड्ढा बनाकर एक आक का पत्ता रक्खें। पत्ते के ऊपर उक्त टिकिया को रखकर दूसरे आक के पत्ते से ढांक कर सावधानी से ५ सेर बालू रेत और ऊपर डाल दें फिर चूल्हे पर रखकर २ पहर धीरे २ आग देते रहें २ पहर के बाद रेत पर ४-५ जौ के दाने डाल कर देखें, यदि वे भुन जाएँ तो नीचे उतार कर ठण्डा करें और सुरक्षित रखें नहीं तो और आग दें जब दाने भुनने लगें उस समय उतार कर ठन्डा करें और बारीक पीसकर शीशी में रखें।

सेवन विधि—मात्रा २ चावल भर औषधि मक्खन या मलाई में रखकर निगल लें और खूब घी, दूध खायें पियें। सात खुराक एक दुर्बल से दुर्बल रोगी को खिलानी चाहिये। खुराक खूब दिल खोलकर खानी चाहिये। हर प्रकार की खटाई, तेल, गर्म व खुश्क वस्तुओं का सेवन बर्जित है।

ताम्रभस्म निर्माण—

२ तोला तांबे के बुरादे को एक पाव नीबू के अर्क में भिगोदें, फिर एक दिन खरल करके पानी

से धो डालें। इस बुरादे को २ दिन दुग्ध आक आधपाव में खरल करें प्रायः आधा पाव दूध २ दिन में खरल हो जाता है। फिर टिकिया बनाकर आक की एक पाव नर्म कोंपलों की लुगदी में रखें और कपरौटी करके गढ़े में दस सेर उपलों की आग दे। इसी प्रकार हर बार आध पाव दूध में खरल करके एक पाव लुगदी में १० सेर उपलों की आग कुल ५ या ७ बार दें, भस्म तैयार है।

पहचान—दही में डालकर देखलें यदि जंगार न दे ठीक अन्यथा और आग दें।

लाभ—उत्तम प्रकार की औषधि है, वातकफ आदि रोगों को दूर करती है और नामर्द को मर्द बनाती है। मात्रा–१ से २ चावल तक।

संखियाभस्म (कंठमाला की अचूक औषधि)

दुग्ध आक में १ तो० संखिया २१ दिन तक खरल कर और फिर इसकी टिकिया बनाकर सुखालें और इसको सकोरे के अन्दर १ तोला फिटकरी लाल के बीच में रखकर और सकोरे को भली प्रकार कपरोटी कर ८ सेर उपलों की अग्नि दें और ठन्डा होने पर फिटकरी सहित बारीक पीस लें। मात्रा–२ से ४ चावल तक सिरस के बीज या केवल मक्खन में रखकर अधिक समय तक सेवन करें। कंठमाला की विशेष अचूक औषधि है।

सिंगरफ भस्म विधि—

सिंगरफ रूमी २ तोले को पोटली में बांधकर ५–१० सेर दूध में डोलायन्त्र के ढंग पर पकावें। इसके उपरान्त ८ दिन तक दुग्ध आक में खरल करके गोली बनायें। फिर १ सेर अंडे के छिलके सफेद खिले हुये को दुग्ध आक में खमीर करके उसमें वह टिकिया लपेट दें भली प्रकार कपरौटी करके २०–२५ सेर उपलों को आग दें। सफेद रंग की भस्म होगी। यह भस्म अत्यन्त बलवर्द्धक है। मात्रा—१ से २ चावल तक मक्खन के साथ सेवन करें।

गो दन्ती भस्मः—

गोदंती हड़ताल ५ तोले को यवकूट करके १० तोला दुग्ध आक के साथ सकोरे में कपरोटा करें फिर १० सेर उपलों की आग दें। भस्म खिली हुई होगी

मात्राः—दो रत्ती प्रायः सांय, उचित अनुपान से

लाभः—यह भस्म हर प्रकार के ज्वर में अत्यंत लाभकारी है खांसी के लिये भी गुणकारी है।

तुत्थ की श्वेत भस्मः—

दुग्ध आक १५ तोले में २० तो० पोस्त रीठा गूंध कर दो टिकियां बनायें और उनके बीच में नीला थोथा १ तोला रखकर टिकियों के मुंह मिलाकर दो प्यालों में बन्द कर कपरोटी करके गढ़े के अन्दर चार सेर उपलों की हवा से बचा कर आग दें ठंडा होने पर निकालें। तैयार है सफेद रंग की भस्म होगी। यदि जंगार दे दुग्ध आक में खरल करके भूभल में गर्म करें आधे चावलसे आधी र० तक सोजाक आतशक उपदंश के घाव खारिश आदि में खिलाना चाहिए, भोजन घी डाला हुआ दें।

रजत भस्मः—

घोंगची सफेद १० तोले को कूटकर दुग्ध आक में ६ बार तर व पर

बनायें और एक तोला चांदी कापतला बना कर उस में रखदें और १० सेर उपलों की आग बिना छुवा दें। ठंडी होने पर निकालें और फिर १० तोला घोंगची में जो तीन बार तर व खुश्क की गाई हो आग दें तीन बार की आग से खिल जावेगी। मात्रा—एक रत्ती गुण;—अति बल बर्धक है।

लवण भस्म

काला नमक ५तोले एक सकोरे में गल कर आक का दूध २० तोले और मुख बन्द करके दस सेर उपलो की आग दें। ठंडा होने पर पीस लें। मात्रा २ र० से ३ र० तक पान में रख कर खायं लाभ कफज खासी आदि के लिये लाभदायक है।

मुक्ताशुक्ति भस्म विधि

मोती सीप को एक सकोरे में डालकर दुग्ध आक इतना डाले कि ऊपर आ जाय फिर कप रोटी करके २० सेर उपलों की आग दें। भस्म हो जायेगी। यह भस्म ५ तोला, सुहागा ५ तोला, काली मिर्च २ तोला, सबको बारीक पीस कर पानी में गूंध कर उरद के दाने के बराबर गोलियां बनायें।

गुण—यह गोलियां दमे और खांसी के लिये गुणकारी हैं। २ गोलियां शहद या बासे के पत्तों के पानी के साथ खायें। हर प्रकार की खटाई व तेल की वस्तुओं का सेवन न करें।

शृंग भस्म

बारहसिगे का सींग बुरादा किया हुआ, दुग्ध आक में इतना तर करे कि १ अगुल ऊपर रहे। इसे खुश्क कर लें। इस प्रकार तीन बार तर व खुश्क करें और सकोरे में कपरोटी करके ५ सेर उपलों की आग दें। फिर निकाल कर नियम पूर्वक दुग्ध आक में भिगो कर और खुश्क करके ऐसे ७ बार आग दें। भस्म हो जायगी।

लाभ—यह भस्म क्षय रोग (तपेदिक) धातु स्राव, शीघ्र पतन, आदि रोगों के लिये गुणकारी है। क्षय के लिये एक रत्ती के बराबर शर्बत अनार के साथ यक्ष्मा के लिये शर्बत एजाज के साथ, धातु स्राव आदि के लिये फालूदा इसपगोल से खिलावें।

फालूदा इसपगोल की बिधि—२॥ तोला, इसपगोल एक पाव गो दुग्ध में नर्म आग पर पकावे गाढ़ा होने पर उतार कर २॥ तोला चीनी मिलावें। एक भाग एक रत्ती दवा डाल कर शेष पीछे खालें।

बस स्थानाभाव से इतना ही संक्षिप्त वर्णन प्रस्तुत कर रहा हूँ।



बहुत थोड़ी प्रतियां ही शेष हैं, शीघ्रता कीजिये वर्ना पछताना हीं रह जावेगा

"अनुभूत योगमाला" की निम्न लिखित फाइलें ही शेष हैं

सन्	१९२९–सूजाक, धातु-उपदंशांकयुक्त	४)
,,	३०–सन्निपात, कुष्ठ, वातव्याधि	४)
,,	३१–नव्य, यकृत, आंत्र, वृक्कामय	४)
,,	३४–हृदयरोगांक	४)
,,	३५–फुफ्फुसरोगांक	४)
,,	३६–स्नायुरोगांक	४)
,,	३७–यूनानी चिकित्सांक, सिद्धिचिकित्सांक	४)
,,	३८–उपहारांक, बूटीनिर्णयांक	४)
,,	३९–यूनानी चिकित्सांक २ भाग त्रिधातु सर्वस्व	४)
,,	४०–यूनानी चिकित्सांक ३ भाग मानसिक रोगांक	४)
,,	४१–सर्प विज्ञानांक, यूनानी चिकित्सांक	४)
,,	४२–अग्निदग्धचिकित्सांक	४)
,,	४७–अनीसुलगुर्बा	४)
,,	४८–सर्पचिकित्सांक	४)
,,	४९–केशव कल्याण	४)
,,	५०–जीवोपयोगांक	४)
,,	५१–रजतजयन्ती अङ्क	४)
,,	५२–चिकित्साक्रमकल्पवल्ली ४भाग	४)
,,	५३– ;	४)
,,	५४– ,,	४)
,,	५५–प्राच्य शल्यतन्त्र २ भाग	४)
,,	५६–सिद्धयोगांक	४)
,,	५७–पद्मप्रभाकर	४)
,,	५८कलांक	४)
,,	५९–सिद्धप्रयोगांक	४)

कुछ अवशिष्ट विशेषाङ्क जो अलहदा भी मिल सकेंगे

ग्रहणी अङ्क	॥)
धातुअङ्क	॥)
उपदंशांक	॥)
नव्यरोगाङ्क २ भाग	॥)
सन्निपाताङ्क	॥)
कुष्ठाङ्क	॥)
शिरोरोगाङ्क	॥)
वातव्याधि अङ्क	॥)
स्नायुरोगांक	२)
वस्तिरोगांक	२)
हृदयरोगांक	२)
फुफ्फुसरोगांक	२)
बूटीनिर्णयांक	२)
त्रिधातु सर्वस्व	२)
मानसिक रोगांक	२)
सर्पाङ्क	२)
अग्निदग्धांक	२)
चिकित्साक्रमकल्पवल्ली ४ भाग	८)
सर्पचिकित्सांक(तिर्यांकमस्मूम)	२)
केशवकल्याण	२)
जीवोपयोगांक	२)
सिद्धप्रयोगांक	२)
पद्मप्रभाकरांक	२)
कलांक	२)
सिद्धप्रयोगांक	२)

नोट—एक वर्ष की फाइल लेने पर ५) पेशगी भेजें। पांच वर्ष की फाइलें एक साथ लेने पर २०) डाक व्यय पृथक, दस वर्ष की फाइलें लेने पर ३०) पेशगी भेजें, मार्ग व्यय माफ। छब्बीस वर्ष की फाइल एक साथ लेनेपर ७८) पेशगी भेजें और रेलवेस्टेशन लिखें रेल भाड़ा पैकिङ्ग माफ। सभी फाइलें विशेषांकयुक्त होंगी।

पता—अनुभूत योगमाला आफिस, बरालोकपुर–इटावा

हमारी विश्वस्त महौषधियां

सुधा

जीर्ण ज्वर, राजयक्ष्मा (तपेदिक) खांसी, श्वांस के लिये वरदान स्वरूप दवा है। २-३ दिन में ही लाभ दिखा देती है राजयक्ष्मा (तपेदिक) जीर्ण ज्वर को असाध्य मानने वाले एक सप्ताह इसका सेवन कर देखें। २-२ रत्ती दवा व्याघ्री, हरीतकी ३-३ मा० के साथ सुबह शाम चाटें। और खांसी आने पर व्याघ्री हरीतकी चाटते रहें ३-४ बार १ तोला २४) रु० परीक्षार्थ ३ मासा ६) व्याघ्रीहरीतकी २० तो० २) रु०

वातकुलान्तक (विशिष्ट)

दिल दिमाग पर अपना असर कर उसे ठीक करने में रामवाणवत कार्य करता है इसलिये इसके प्रभावसे मिर्गी (अपस्मार) उन्माद, हिष्टीरिया, मूर्च्छा आदि समस्त रोग दूर होते हैं बड़े श्रम से बनाई हुई वस्तु है अपने रोग को असाध्य समझने वाले लाभ उठावें। मू० १ तो० २४) रु० ३ मा० ६) रु० मधु या ब्राह्मी घृत से लें।

ज्वरान्तक

कैसा ही ज्वर क्यों न हो १-१ गो० जल से लेने परउसे दूरकर देताहै मू० १तो० १) बहुपरीक्षत दवाहै

पीत मरहम

छाजन और उकवत जैसे रोग को दूर करने में सिद्ध मरहम है कोई तकलीफ नहीं देता मू० ५ तो० १)

श्वेत कुष्टारि

यह रस श्वेतकुष्ट चमड़ी के श्वेत दागों के लिये विश्वस्त दवा है। मू० ५) लगाने का लेप ५ तो० २)

चर्मरोगान्तक

किसी प्रकार का चर्म रोग (कुष्ट) हो उसका पूर्ण विवरण लिख दवा पथ्य तजवीज कराइये फीस २) रु० मनीआर्डर से भेजिये।

रक्तार्गल

जब स्त्रियों का मासिक धर्म अनियमित हो अधिक सेरों रक्त जाता हो चाहे वह मासिकधर्म बन्द होने के प्रथम का हो या किसी तरह से योनि मार्ग से रक्तजाता हो तब २-४ खुराक में ही यह अपना गुण दिखा आयुर्वेद की कीर्तिनाद कराती है १४ खुराक ३) रु०

अंडवृद्धि हर रस

एकादशायशरस

यह अण्डवृद्धि और आन्त्रवृद्धि की उत्तम दवा है जिनकी आंत उतरते समय मरणान्तक पीड़ा का अनुभव होता हो वह १ से ३ माह खाकर देखें। मू० १ तो० ६) रु०।

जीर्ण सूजाकहर (अक्सीर सूजाक)

पुराने से पुराने सुजाक रोगियों को बड़ी जल्दी ठीक करने वाली यह दवा है सूजाक की जड़को निकाल देती है १-१ चावलभर दवा मलाई या घृतमें मिला लेनी चाहिये २४ खुराक का दाम ३) रु० है।

मोतियाबिन्दु

बिना आपरेशन के अच्छा करने की इच्छा हो तो प्रतिदिन एक सलाई इसकी प्रातः लगावें और सोते समय कमल मधु की १ सलाई लगावे अवश्य २-३ मास में रोग दूर होगा मोतियाबिन्दु अंजन १ तोला ५) कमल मधु १ तो० २) रु०

पञ्चपाषाणभस्म

दर्द गुर्दे की आशुफल दवा है २-४ रत्ती गर्म जल से देते २ दर्द बन्द हो मरणासन्न रोगी क्षण भर में सुख की श्वांस ले दवा को धन्यवाद देने लगता है। मू० १ तो० १२) रु० ३ मा० ३) रु०।

श्री कुष्टचिकित्साश्रम, बरालोकपुर इटावा यू० पी०

❀ श्री धन्वन्तरये नमः ❀

स्वतन्त्र राजा, महाराजाओं से प्रशंसित, जयपुर गवर्नमेन्ट से

संस्कृत व आयुर्वेदीय परीक्षा पास, अनेकानेक स्वर्ण व रजत पदक प्राप्त

वैद्य-सम्मेलनों से सम्मानित, वैद्यशिरोभूषण चि० चू० आ० महामहोपाध्याय

पं० बिश्वेश्वरदयालु वैद्यराज (रजिस्टर्ड ए० क्लास)

सम्पादक—"अनुभूत योगमाला" के

जगत्-विख्यात—

श्री कुष्ट-चिकित्साश्रम, बरालोकपुर-इटावा के

औषधालय-विभाग की

तात्कालिक, गुणप्रद, विशुद्ध औषधियों का

सूचीपत्र

आयुर्वेद समुद्रस्य मुक्ताभूतं महौषधम् ।
प्रकाशी क्रियते वैद्य रोगीजन हिताय वैं ॥

अष्टमावृत्ति

मुफ्तबितरण

आर्डर देने के प्रथम इन आवश्यकीय नियमों को पढ़िये

१—इस सूचीपत्र के निकलने पर पिछले सूचीपत्र सभी रद्द किये जाते हैं। अत: भावादि सोचकर आर्डर दें।

२—पत्र मिलने के २४ घन्टे पश्चात् माल भेज दिया जाता है।

३—कोई दवा वापिस न की जावेगी, यदि किसी दबा के ठीक न होने की शंका हो तो पहले परामर्श लेकर बापिस करनी चाहिये वर्ना वापसी के खर्चे का जिम्मेवार ग्राहक ही होगा।

४—एक साथ २५) की दबा खरीदने वाले ग्राहक ही स्थाई ग्राहकों की श्रेणी में लिखे जावेंगे और उनको दो आना प्रति १) कमीशन दिया जावेगा परंतु स्वर्णकस्तूरी मिश्रित औषधियोंपर नहीं।

५—जो कुछ पूछना हो वह जवाबी कार्ड द्वारा पूछो वर्ना उत्तर नहीं दिया जावेगा।

६—ज्यादा दवा मंगाने वालोंको अपने पास की रेलवे स्टेशन का नाम मय लाइन के लिखना चाहिये

७—रेलवे से माल मंगाने वालोंको चौथाई रुपया पेशगी भेजना चाहिये।

८—जो लोग बिना जरूरत माल मंगाकर वापिस करेंगे उनके नाम पर फिर कोई माल नहीं भेजा जायगा और हर्जा एवं खर्चे का चार्ज उनकी दस्तखती चिट्ठी द्वारा लेनेका अधिकार कार्यालय को होगा। हरएक रोग की व्यवस्था २) व्यवस्था फीस लेकर बताई जायगी। ऐसे पत्र के साथ उत्तर के लिये १५ पैसे का टिकट या लिफाफा और मनीआर्डर भेजना आवश्यक है।

९—तरलपदार्थ (आसव अरिष्ट तेल शर्वत) बी० पी०से नहीं भेजेजांयगे, यह रेलसे मँगाने चाहिये।

१०—पैकिङ्ग होशियारी से किया जाता है, रास्ते की टूट-फूट का कार्यालय जिम्मेबार नहीं।

११—हमारी वस्तु पसंद न आनेपर उसे वापिसकर रुपया तथा अन्य दवा व पुस्तकें मंगा सकते हैं।

एजेन्सी के नियम

१—हरएक बड़े शहर में हम एजेन्सी खोलना चाहते हैं, उम्मीदवारों को २०० रुपया पेशगी जमा करना चाहिये।

२—एजेन्टों को जो माल भेजा जायगा थोकभाव पर –) रुपया व खेरीज पर १२॥) परसेन्ट कमीशन काट दिया जायगा और शेष रुपया बी० पी० से बसूल किया जायगा।

३—जोमाल ६माह तक न बिकेगा वहमाल वापिस लेकर अन्य माल या रुपया वापिस कियाजायगा।

४—५०) से कम का माल एजेन्ट को प्रथम न मँगाना चाहिये फिर बिक्री अनुसार मँगाते रहें।

५—रेलवे किराया व पैकिंग खर्च माफ रहेगा वशर्ते उनका आर्डर नं० ४ के अनुसार हो।

६—थोड़ा माल पोष्ट से मँगाने पर डाकखर्च एजेंट को देना होगा।

७—किसी प्रकार का उधार लेन देन नहीं होगा।

८—कोई भी खुली दवा वापिस न ली जायगी।

९—हमारी कोई दवा खोलकर न बेचनी चाहिये अपनी बिक्री के अनुसार पैकिंग बनबा सकता है।

जन्म कुण्डली से मनुष्य का भविष्य

अपना और अपने परिवार का यदि भविष्य देखना हो तो देखिये कुण्डली में बारह खाने होते हैं। प्रथम को लग्न। तन धन। भ्रातृ। सुख। पुत्र। रिपु। स्त्री। मृत्यु। धर्म। कर्म। लाभ। व्यय। नाम के बारह घर होते हैं इन्हीं से फल देखा जाता है।

सूर्य

यदि सूर्य लग्न में हो तो—नेत्र लाल हों, क्रोधी हो, वात पित्त के रोग हों, परदेश से धन लाभ हो।

यदि सूर्य धन में हो तो—बड़ा भाग्यवान, धन, सन्तान, सवारी, कुटुम्ब से सुख हो।

यदि तीसरे घर में हो तो—उसके बड़े भाई को मृत्यु सम कष्ट दे या मृत्यु दे, अपनी कमाई का धन भोगे, शत्रु का नाश हो, राजद्वार में सुख हो।

चतुर्थ घर में हो तो—वह धनहीन, विगड़ी दुःखी माता पिता को कम सुख दे धन के लिये व्याकुल रहे।

पंचम में हो तो—संतान कम हो, मंत्रशास्त्र ज्योतिष वैद्यक में अभ्यास हो, राजशास्त्र पढ़े।

छटे घर में—शत्रु, रोग का नाश हो, राजद्वार में कीर्ति बढ़े और मामा को हानि दे।

सप्तमस्थ सूर्य—धन कम प्राप्त हो, देह में कष्ट रहे स्त्री को कष्ट रहे।

अष्टमस्थ—यह काम छुपाकर करे, परस्त्री, वेश्या के लिये धन नष्ट करे।

नवमस्थ—वह अपने धर्म कर्म में युक्त, व्यवहार में चतुर, प्रतिष्ठावान हो पर भाइयों को कष्ट दे।

दशमस्थ—राजा के समान हो, माता को कष्ट दे सब कामों में सिद्ध प्रदान करता है।

एकादशस्थ—सवारी, सर्व सुख, राज दरबार से धन प्राप्ति, शत्रुओं को दुख दे।

द्वादशस्थ—आंख के रोग–कम दीखना आदि पर देश में जाकर धन नाश करे भाई और शत्रु तपते रहे।

चन्द्र

प्रथम घर में चन्द्र—वह बहरा, अंधा, मूर्ख, यदि वही मेष वृष, कर्क का हो तो सुख देने वाला है।

दूसरे घर में—हो तो बहुत स्त्रियों से प्रेम करे, सब पदार्थ प्राप्त हों, कुनबे वालों से प्रीति करे

तीसरे घर में—बलवान, पराक्रम से धन पावे, स्त्रियां उससे प्रीत करें।

चौथे घर में—राजद्वार से धन लाभ, पुत्र, स्त्री, भाइयों को प्रसन्न रखे।

पांचवें घर में—चतुर, बुद्धिमान पृथ्वी, धन, स्वर्ण का दान करने वाला श्रेष्ठ भाग भोगने वाला।

छटवें घर में—राजभय, शत्रुभय, नित्य चिन्ता युक्त करे।

सातवें घर में—धर्म कर्म में निपुण, उसकी स्त्री सुन्दर, चतुर, मीठी बातवाली, पतिव्रताहो।

आठवें घर में—वैद्य और ज्योतिषियों से प्रेम करे उसके यहां काथ, रस, भस्में रहें।

नवें घर में—लक्ष्मी, दिन दिन भाग्योदय देह में सुख, देव, ब्राह्मणों का आदर करे।

दसवें घर में—तरुण स्त्रियों से प्रीति हो, सवारी हो, धन खूब हो।

ग्यारहवें घर में—राजद्वार से लाभ, नव वस्त्रा-भूषण पहरे, परदेश में अन्य स्त्री से प्रीति।

बारहवें घर में—नेत्र पीड़ा शत्रु चिन्ता, पितृ देश में पीड़ा, स्त्रियों से कम प्रीति हो।

मंगल (भौम)

तन स्थान में मंगल हो—अति क्रोधी नेत्र और शिर का रोगी मंगल की दशा आने पर अग्नि से भय हो। फोड़े निकलें।

२ रेघर में—बन्दर के गहने के समान उसका धन निष्फल हो।

३रेघर में—बल वीर्य, धन शत्रु नाशक।

४थेघरमें—शत्रु ग्रह का फल कम हो, राजा की दया से पृथ्वी धन मिले।

५वेंघरमें—संतान सुख न हो मंत्र तंत्र शास्त्रज्ञाता विद्वान हो।

६ वें घर में—राज द्वार में कार्य कर्ता राजा का प्रिय, धनवानहो, मामा न हो हो तो दुखी हो

७वेंघर में—स्त्री सुख न हो, स्त्री हो तो उसे पति का सुख न हो

८वेंघरमें—मंगल होने पर कोई ग्रह शुभ फल नहीं देते उसका कर्म भी निष्फल होता है।

९वें घर में हो—लाभ कम होते हुये भी धनवान हो, भाई उसकी परवाह न करें कम से कम लाभ।

१०वें मंगल—सिंह समान पराक्रमी बहुत नौकर रखें।

११वें मंगल—गौ, बैल, भैंस, और सवारी रहें दुश्मन सामने से पीछे हटें।

१२वेंस्थान में—भौम हो वह मनुष्य भौमकी दशा में शस्त्र से पृथ्वी पर गिरे, धन, मनोर्थ का नाश हो।

बुध

१ ले घरमें बुध—वैद्यकमें चतुर सथ में उच्चस्थान स्थान पर रहे।

२रेघरमें—वह बुद्धमान पंडित हो, शूरमा और व्यासबत हो।

३ रेघर में—चतुर वैश्यों से मित्रता करे नीति-वान सर्व कार्य कुशल हो।

४थे घर में—सर्व सुख प्रदाता; मंदिर बगीचा बुध दशा में अधिक धन प्राप्त करे।

५वेंघर में—प्रथम गर्भपात, मारणादि मंत्रोच्चाट-नादि में प्रवीण हो।

६ठेघर में—विरोधी मित्रभी शत्रु हो, व्यवहार में क्रोध करे साधुओं को विपरीत समझावे।

७वेंघरमें—दिव्यस्वरूप चपल, निरोगी स्त्री संतुष्ट न हो थोड़े काल।

८वेंघर में—आयु बहुत हो परदेश से धन लावे राज द्वार में कीर्तिमान हो।

९वेघर में—धर्म शील, राजा के प्रसाद से अपने कुल में दीप्तमान हो।

१०वेघर में—माता पिता गुरु ब्राह्मणों का भक्त पितृ धन तीर्थ में खर्च करे राजाके समान हो

११ वे घर में—देव ब्राह्मण भक्त सत कर्म हवन, यज्ञ, ब्रह्मभोज में खर्च करे लाभ से खाली न हो।

१२ वे घर में—शुभ कार्य में धनखर्च हो कन्यायों के विवाह करे अधिक धनी हो।

गुरु

१ घर में गुरु—दिव्यदेह आभूषणधारी बुद्धिमान गुणवान, धनवान, प्रतिष्ठावान, राजद्वार में बड़ा अधिकार प्राप्त करे।

२ घर में—कठिनता से धन मिले और घर में धन टिके नहीं, कविता में मन लगे. राज दरबार में काम मिले।

३ घर में—कृतघ्नीहो, कभी नसीब न जगे मित्रों को कभी लाभ न हो, भाइयों से कुछ लाभहो

४ घर में—देवता ब्राह्मणों से प्रीति करे, सवारी और सुख हो शत्रु दासवत रहे।

५ घर में—बुद्धिमान, गुणवान पंडित हो, उसका लेख अच्छा हो, स्त्री–संतान का सुख हो।

६ घर में—दुबला-पतला हो, सदा रोगीरहे माता मामा भी रोगी रहे, शत्रु जलते रहें।

७ घर में—सुन्दर शरीर वाला. स्त्री मधुरभाषिणी पतिव्रता, धनवान, बुद्धिमान हो।

८ घर में—अवस्था बहुत हो, रोग न हों, एक जगह बास न करे, अंतकाल में स्वर्ग प्राप्त हो

९ घर में—धर्म कर्म में तत्पर, नीति पर चलने वाला, चतुर भाईहो, आलसी और बुद्धिमान

१० घरमें—चतुर ध्वजाधारीहो सुन्दर मकानहो

११ घरमें—पिता भ्राता नौकरों सहित हाथी घोड़ा सवारी वाला हो, दूसरे के कार्य को भले प्रकार करने वाला हो, आनन्द भोगे।

१२ घर में—अभिमानी हो, अच्छे कार्य दान पुण्य करने पर भी यश न मिले।

शुक्र

१ घर में—वह और उसके मित्र सब सुंन्दर वस्त्रों से युक्त हों, आभूषणादि से युक्त हों।

२ घर में—सुन्दर, हंसमुख, मधुरभाषी, धनी, दान पुण्य में तत्पर हो।

३ घर में—बलवान, स्त्रियों से प्रीति करने वाला पूर्ण सुखी हो, धन, पुत्र नौकरों से युक्तहो।

४ घर में—धनवान कीर्तिवान हो, उसके शत्रु भी प्रीति से बोलने वाले हों।

५ घर में—मन्त्र विद्या में चतुर, कवी, मिष्टान्न भोजी हो।

६ घर में—मार्ग में चोरों से भयभीत हो, भूत प्रेतादि मन्त्र जपने पर पीछे पछतावे।

७ घर में—परदेश में रहने वाला उसकी स्त्री सुन्दर हो, शुक्र दशा में पुत्र हो।

८ घर में—निरोगी, वहुत अवस्था हो, कष्ट से धन पैदाकरे सवारी रहे।

९ घर में—देह का सुख हो, भाई, पुत्र, नौकरों से घर भरा रहे बहुत आनन्द रहे।

१० घर में—ब्राह्मणों जैसे आचरण वाला, शास्त्र पढ़े पर चित्त विक्षिप्त रहे धनके लिये भटकता फिरे।

११ घर में—वह सुशील, चतुर, धनवान हो, सब पदार्थ मौजूद रहें, पृथ्वी पर यश हो।

१२ घर में—गुण, कीर्ति, धर्म का नाश हो, मित्र भी शत्रु हों।

शनि

१ घर में—धनवान हो, धन की तृष्णा न बुझे, नेत्रों में विष हो देखने से शत्रु नष्ट हो।

२ घर में—कुटुम्ब से हीन, सर्व भोगी हो पर कठोर वक्ता हो, भाइयों से कम प्रीति हो।

३ घर में—इसे शांति न मिले, सदा बेचैन रहे, मलाई करते भी मुख में रोग रहे।

४ घर में—माता पिता को कष्ट हो, भाइयों से विरोध, सब से जुदा रहे।

५ घर में—सन्तान कष्ट हो, मन्दबुद्धि, कठोरवक्ता शास्त्र की बातों पर विश्वास न करे, यदि शनि कुम्भ का हो तो ५ पुत्र हों, सब भांति सुखदायक हो।

६ घर में—मामा का सुख न हो, बीमारी प्रबल हो, शत्रु रहित हो, राज दरबार से धन प्राप्त हो।

७ घर में—स्त्री रोगिणी रहे धन, मित्र, स्त्री का सुख बहुत न हो।

८ घर में—व्याधियुक्त रहे, भाई बन्धु का नाशहो

९ घर में—योगाभ्यास करे, रजोगुण विशेष भाइयों से कम प्रीति करे।

१० घर में—बाबा का सुख न हो अपने हाथका पैदा किया धन खर्च करे पिता को कष्ट रहे।

११ घर में—यशी धनवानहो, अवस्था बहुत हो।

१२ घर में—दृष्टि कम हो, अपने घर का हो तो शत्रु नाश करे परदेश में रहे स्त्री भी न रहे अन्ध भी हो।

राहु

१ घर में—अपनी बात रखने वाला, बहु स्त्री विलासी, काम वासना अधिक हो, सुन्दरहो

२ घर में—कुटुम्ब को दुख दे, निर्भय हो, सत्य बोले, कभी कारागार में जावे,

३—घर में—बलवान पुरुषार्थी भाई बन्धु हो पर मन्दभागी हो।

४ घर में—माता दुखी रहे, बाहर से शीतल पर अन्दर से जलता रहे। यदि राहु, मेष, कर्क, मिथुन, कन्या का हो उत्तम फलदायी हो, राजा भी भाई के तुल्य समझे।

५ घर में—स्त्री पुत्र की चिन्ता रहे, स्त्री की कोख में दर्द हो, छलबलिया हो।

६ घर में—बलवान, बुद्धिवान, धनवान हो, शत्रु नाशक, मामा की स्थिर बुद्धि हो।

७ घर में—स्त्री चिन्ता, स्त्री रोगी रहे, जगत में निन्दा हो।

८ घर में—बड़ा पंडित हो, राजा भी उससे सलाह ले अपने पराक्रम से धन पैदा करे, शत्रु नष्ट हों।

९ घर में—भाई के पुत्रों को पाले, सरकार से धन पावे, देव तीर्थ स्थान में मन लगे।

१० घर में—यवनों से प्रीति अधिक हो, उनकी संगति से सुन्दर स्त्रियों से रमण करे, कुमार्ग में धन खर्च हो।

११ घर में—म्लेछों से कार्य सिद्धहो सेवक और बन्धु धूर्त हों।

१२ घर में—वायु रोग हो, साधुओं से बैर, दुष्टों से प्रीति करे।

केतु फलम्

१ घर ने—भाइयों से क्लेश देह में वायु बिकार हो, स्त्री चिन्ता लगी रहे।

२ घर में—धनका नाश मुख का रोग हो, कुटुम्ब से विरोध हो अपने घर का हो तो सुख दायक हो।

३ घर में—शत्रु नाश हो, धनवान हो, भाई को कष्ट दायक हो, बांह में दर्द रहे।

४ घर में—माता पिता को कष्ट रहे, यदि केतु अपने घर का वा उच्च का हो तो बिपरीत फल हो।

५ घर में—संतान कम हो उदर में वायु रोग हो बुद्धि हीन हो।

६ घर में—रोग शत्रु को नष्ट करे। राज द्वार में बड़ी कीर्ति हो घर पर भैंस आदि दूध वाले पशु रहे।

७ घर में—स्त्री चिन्ता मार्ग भय जल से डर रहे अपने घर में हो तो लाभ दायक जाने।

८ घर में - गुदा में बिकार हो परन्तु कन्या, मेष बृष, मिथुन, वृश्चिक का होने पर बहुत धन प्राप्त हो।

९ घर में—क्लेश नाशक, पुत्रेच्छा पूर्ण करे, म्लेच्छ द्वारा भाग्य बढ़े बांह में दर्द हो।

१० घर में—पिता का सुख न हो जो कन्या, वृश्चिक, मेष राशि में हो तो शत्रु नष्ट कर धन दे।

११ घर में—भाग्यवान बिचारबान, सुन्दर हो, बढ़िया बस्त्र पहिने संतान बिना यत्न के न हो।

१२ घर में—शत्रु नाशक राजा के समान हो मामा से सुख हो, वस्ति गुदा, पैर नेत्र में पीड़ा हो।

श्रीकुष्ट चिकित्साश्रम, बरालोकपुर इटावा के औषधालय विभाग का

सूचीपत्र

दवाइयां कैसी हों

जिस प्रकार एक योधा उत्तम शस्त्रास्त्रों से सुसज्जित होकर ही विजय प्राप्त करने में समर्थ होता है उसी प्रकार वैद्यभी उत्तम प्रमाणिक आशु गुणकारी औषधियों के बल पर रोगों पर विजय प्राप्त कर धन, यश प्राप्त करता है। यदि दवाइयां ठीक नहीं होती तो हास्य और अपयश का भागी बनता है। अत: स्वार्थी और केवल व्यापार की भावनाओं वालों से दूर रहना चाहिये।

शुद्ध दवाइयां कहां मिल सकती हैं

शुद्ध दवाइयां प्रैक्टिशनर वैद्य के ही पास मिल सकती हैं कारण उसे भी तो अपने रोगियों पर वही दवाइयां प्रयोग करनी पड़ती हैं। अतः वैद्य का परिचय गुण और उसकी महत्वाकांक्षा पर ध्यान रखकर ही औषधियों के खरीदने का प्रयत्न करना चाहिये जिसके दिल में आयुर्वेद के यश का ध्यान नहीं, औषध निर्माण की दक्षता नहीं उससे कभी भी औषधि न लेनी चाहिये। इतना सब कुछ होने पर भी औषध निर्माण के लिये उसके पास क्या पूंजी है, खनिज प्राणिज वनौषधि के संग्रह करने का क्या सफल मार्ग है, इस पर भी ध्यान रखना चाहिये, पुस्तकों में हजारों योग भरे पड़े हैं अधिकार क्रम से छांट कर चाहे जो सूची तयार कर सकता है, कुछ मूर्ख दूसरों की सूची की नकल कर छपा सकते हैं, पुराना प्रेक्टिशनर अपने अनुभव में आई हुई थोड़ी सी ही दवाइयों से सारा कार्य चला सकता है और यह चुनी हुई दवाइयां कभी भी फेल नहीं होती अत: देख लेना है कि वह वैद्य कितना प्राचीन प्रेक्टिशनर है।

हमारे वैद्य जी का परिचय

चिकित्सक चूड़ामणि आयुर्वेद महामहोपाध्याय पं० विश्वेश्वरदयालु जी वैद्यराज सन् १९१५ से प्रेक्टिस कर रहे हैं। ४४ साल का अनुभव रोगियो पर है। आप जयपुर कालेज के स्नातक हैं 'अनुभूतयोगमाला' के यशस्वी सम्पादकहैं दर्जनों आयुर्वेदिक पुस्तकों के लेखकहैं. पुस्तकों के लेखन और औषधियों की उत्तमता पर निखिल भारतीय आयुर्वेद महामंडल जैसी प्रसिद्ध संस्थाओं से ३ स्वर्ण पदक १ रौप्य पदक और अनेक प्रशंसापत्र प्राप्तकर चुकेहैं. आप अपने जिला इटावा वैद्यसंघ के सभापति और स्वागताध्यक्ष भी रह चुके हैं। नि० भा० लखनऊ सम्मेलन में संदिग्ध औषधि निर्णय समिति के संयोजक व उसके सदस्य रह चुके हैं।

संस्कृत के धुरन्धर विद्वान और कबि भी हैं इनके ज्वलन्त प्रमाण हनुमन्नाटक और मुकुन्दलीलामृत नाटक राजनैतिक कृष्ण हैं।

आपकी चिकित्सा और बिद्वत्ता की धूम है परोपकारार्थ आपने अपनी सम्पूर्ण

सम्पत्ति कुष्ठचिकित्साश्रम को प्रदान करदी है। आपके पास औषधियों में लगाने के लिये बहुत बड़ी सम्पत्ति है, आपकी औषधि बिक्री से होने वाली सम्पूर्ण आय परोपकार में जाती है अतः यहां की औषधियों पर विश्वास न किया जाय तो कहां की औषधियों पर किया जा सकेगा; आपके पास वनौषधि, उपवन है, संग्रहालय है, औषध निर्माण क्रिया हैं, आप बड़े कुशल हैं; आपके पास पुराने कर्मचारी हैं और प्राचीन ढंग से ही औषध योजना पसंद की जाती है, आप मशीनों के बड़े विरोधी हैं उत्तम से उत्तम वस्तु औषधियों में प्रयोग करने पर ही आपको आनन्द आता है सदा यही भावना रहती है कि उत्तम से उत्तम वस्तु जहां से मिले संग्रह करें और आप ऐसा ही करते हैं। खनिज मंगवा के परीक्षा कर सकते हैं।

कुष्ठचिकित्साश्रम का भार हलका हो और रोगियों की संख्या अधिक प्रविष्ट हो सके सिर्फ इसी उद्देश्य से यह औषधालय स्थापित किया गया है। इसमें योग दान कर देना देश का हित करना है।

वैद्य जी की समस्त जिम्मेदारी और उनकी स्थिति यहां ही रहती है उनसे पत्र व्यवहार भी यही के पते से करना चाहिये।

निवेदकः—

मैनेजर- -

श्री कुष्ठचिकित्साश्रम, औषधालय विभाग

बरालोकपुर, इटावा यू० पी०

ज्वराधिकार

सुदर्शनारिष्ठ—सभी प्रकार के ज्वरोंमेंअमोघ हैं। १० तोला १) मात्रा–१-१ तोला पानी मिला कर।

त्रिभुवनकीति रस—साधारण ज्वरों में जिनके शरीरमें दर्द भी हो उत्तम है। मू० १) तो० मात्रा–१ रत्ती तुलसीपत्र के साथ या गुडूचीसत्व २–३ रत्ती के साथ दिन में ३ वार मधु से।

तरुणज्वरारि—कब्ज के ज्वरों में दस्त लाकर ज्वर के वेग को कम करता है १) तो० मा० १–१ र० चासनी से।

ज्वरांकुश—विषमज्वरों, ऐकाहिक, द्वयाहिक, त्र्याहिक के लिये उत्तम है। मू० १) तोला मात्रा–आधी से १ र० चासनी से।

जयमंगल रस—जीर्ण ज्वरों के लिये जब रोगी कमजोर हो रहा हो इससे बल, कांति बढ़ कर ज्वर नष्ट हो जाता है। ३०) तोला १–१ गोली १-१ मा० भुने जीरे के साथ २–३ वार देना।

स्वर्णबसन्तमालती—जीर्ण ज्वर के साथ रक्त क्षय में खांसी आने पर यह दवा उत्तम है। २४) तो० मात्रा १–१ र० १।।–१।। मा० सितोपलादि के साथ मधु से।

जीर्णज्वरांकुश—विगड़े हुये विषमज्वरों को यह जल्दी ठीक करता है। ५) तोला १–१ र० १–१ म० भुने जीरे के चूर्ण के साथ २–३ बार दें।

सन्निपातभैरव—(स्वर्णयुक्त)—सभी प्रकार के सन्निपातों पर लाभप्रद हैं। २०) तो० १–१ गोली अद्रक रस से दिन में ३ बार दें।

जीर्ण ज्वरारि—जीर्ण विषम ज्वरों पर केवल भुने जीरेसे ज्वर दूर करता है बच्चों के लिये विशेष उपयोगीहै ४) तोला। मात्रा–१-१गो०

लाक्षादि तेल—ज्वर की गर्मी शांतिकर हृष्ट-पुष्ट बनाता है सगर्भा स्त्रियों के लिये बहुत लाभ कारी है ५ तो० १)।

महा चंदनादि तेल—जीर्ण ज्वरों के लिये बहुत उपयोगी है मलने से दाह ज्वर दूर करता है ५ तो० १)

सुगंधित धूप—इसको अग्नि में डाल धुआं सूंघने से मलेरिया ज्वर नष्ट होता है। और उसके पहले ही स्तेमाल किया जाय तो मलेरिया ज्वर का वेग रुक जाता है। ५ तो० १)

ऐकाहिकार—इकतरा की अमोघ दवा है। १ तो० ५) १-१ रत्ती चम्पा रस या मधु से।

चातुर्थ्यकारि—तिजारीकी अमोघ दवा है। १५) तो० १-१ र० अगस्त रस से।

शीतारि—शीतप्रधान मलेरिया में उत्तम है। १) तो० १-१ र० मधु से।

पिप्पल्यादि घृत—प्लीहादियुक्त जीर्ण ज्वरों पर हितकारी है ६ मा० से १ तो० ५ तो० गर्म दूध में मिला पियें। ५ तो० १)

ज्वरातिसार

धान्यपञ्चकादि—दीपन पाचन कर आम को निकालता है। १० तो० १) १-१ तोला पानी मिला ३-४ बार पिलाना।

कुटजावलेह—ज्वर, दस्त, रक्तातिसार, रक्तार्श नष्ट करता है २० तो० २) ६ मा० से १तो० तक दिन में २ बार जल से।

कुटजारिष्ट—ज्वर, आम दस्त नष्ट करता है १० तो० १) १ तोला पानी मिला भोजनोपरांत २ बार लें।

महागंधक—बच्चों के लिये दस्त रोकने की बहुत उत्तम दवा है। २) तो० आधी से १ र० की मात्रा में देना मधु से।

सिद्ध प्राणेश्वर—अतिसार की सिद्ध भेषज है। १) तो०, १-१ र० पान पर रखकर खाना ऊपर से १० तो० गर्म जल पीना। मरोड़ में हरीतक्यादिचूर्ण १॥-१॥ मा० के साथ दें।

अभयनृसिंह—अतिसार के वेगों को रोकने में सिद्ध है। २) तो०, १-१ वटी ४-४ र० भुने जीरे के साथ दें दिन में २ से ४ बार तक। मधु से देना।

कनकसुन्दर—ज्वरयुक्त अतिसार के वेगों को रोकने में रामवाण है १) तो० १-१ र० धान्यपंचक क्वाथ से दें।

संग्रहणी और अतिसार

संग्रहणी रिपु—७ दिन में संग्रहणी को दूरकरता है मू० ७ दिन का २) १–१ लड्डू आध सेर कच्चे दूध के साथ दे, भूख लगने पर हलका भोजन दें पेट शुद्धकर दस्त बन्द करता है दिनमें २ बार दें।

संग्रहणी कपाटरस—पुरानी संग्रहणी के लिये उत्तम है १ तो० १५) १–१ र० मुरब्बा वेल से दिन में २ बार दें।

विजय पर्पटी—आंत्रिक क्षय और पुरानी ग्रहणी के लिये उत्तम है १ तो० २५) १–१ र० दूध से दें नित्य १ र० बढाकर १ मा० तक दे बाद को नित्य १ र० घटाकर दें, भोजन में सिर्फ दूध ही दें।

स्वर्ण पर्पटी—ज्वर के साथ पतली टट्टी आने पर १ तो० २५) बिजयपर्पटी वत दूध से।

ताम्र पर्पटी—यकृत की खराबी प्रधान संग्रहणी होने पर, १ तो० २) १–१ र० मट्ठे से।

पञ्चामृत पर्पटी—प्रसूता की सभी विकृतियों पर, शोथ युक्त ग्रहणी में १ तो० २) १–१ रत्ती दूध से।

लोह पर्पटी—यकृत तिल्ली और आंतों की खराबी से दस्त आने पर, मू० २) १–१ र० दही के साथ मिलाकर दे पर्पटियां बिजयपर्पटीवत देनी चाहिये।

आंत्र शोषान्तक रस—आंत्र क्षय जीर्ण ग्रहणी आंत्रिक टी० बी० पर फल प्रद है मू० २४) तो० १–१ र० मधु से दें।

प्लीहा रोग

लोहारि वटी—प्लीहायुक्त ज्वर के लिये उत्तम है १ तो० १) १–१ बटी जल से।

शरपुंखारिष्ट—प्लीहा की सिद्ध दवा है १० तो० १ तो० भोजन के बाद १–१ तो० पानी मिला कर।

कासीसादि वटी—प्लीहायुक्त पाण्डु पर, १ तो० १) भोजन के बाद १–१ वटी जल से।

प्लीहा हरलेप—यह प्लीहा को १ दिन में गलाकर ठीक करता है ५ तो० २) सिर्के या पानी में पीस गरम कर कपड़े पर लगा प्लीहा पर चिपकाना फिर छुटाकर कड़वा तेल मलना।

यकृद्विकारे

यकृत्प्लीहारिलोह—यकृत विकार हवा भरने की उत्कृष्ट दवा है, १ तो० १) १ या २ रत्ती मधु के साथ २ बार।

रोहितकारिष्ट—यकृत शोथ हर है, १० तो० १) भोजन के बाद एक-एक तो० पानी मिलाले।

यकृद्दारणसिंह—यकृत में शोथ होने पर १ तो० २) १–१ बटी करेले के पत्तेके रसके साथदे।

यकृच्छूल विमर्दिनी बटी—यकृत में दर्द होने पर १ तो० १) एक-एक बटी हरीतकी क्वाथ से।

यकृतहर लेप—यकृत की शोथ दूर कर ठीक करता है ५ तो० २) सिर्के में पीस गरम कर लेप करे।

जलोदर

जलोदरारि—(स्वकृत) ४८ दिन में ठीक करता है खूब पेशाव, पाखाना लाता है मू० १०) प्रति सेट।

आरोग्यवर्द्धिनी—जलोदर की उत्तम दवा है, मू० १ तो० का १) २–४ गोली कोकिलारिष्ट से, भोजन के बाद १ रत्ती रस पर्पटी पुनर्नवारिष्ट से सोते समय जलोदरारि चूर्ण मधु से चटाना भोजन में सिर्फ दूध ही ले।

कोकिलारिष्ट—यकृत को बल देकर दस्त पेशाव निकालता है मू० १० तो० १) २–४ गोली आरोग्यवर्द्धिनीकी कोकिलारिष्ट या पुनर्नवारिष्ट में समान जल मिला कर ले।

वारिशोषण रस—जलोदर के पानी को सुखाता है १ तो० ८०) एक–एक र० मधु से।

शोथ और पान्डु

पुनर्नवारिष्ट—पेशाब लाकर शोथ को निकालता है मू० १० तो० १) एक–दो तोला जल मिला ले २ बार।

रसाभ्रमण्डूर—शोथ और पाण्डु में लाभदायक है मू० ५) तो० १–१ गोली पुनर्नवारिष्ट से।

पर्पटारिष्ट—पित्तज पीलापन को दूर कर भूख बढ़ाता है, १० तो० पानी मिला भोजन के बाद ले।

कोकिलारिष्ट—पेशाब साफ लाता है मूत्रकृच्छ्र में भी लाभकारी है, १० तो० १) १-१ तो० पानी मिलाकर दें।

चन्द्रसूर्यात्मक रस—पाण्डु की सिद्ध दवा है मू० १ तो० ४) गुडूची, त्रिफला, अड़ूसा के क्वाथ से दें १-१ गोली २ बार।

शुष्कमूलादि तेल—मालिश से शोथ को पटकाता है ५ तोला १)

शोथघ्नी रसायन—शोथ (सूजन) की अमोघ दवा है १ तो० ५) १-१ र० मधु से चटाकर पुनर्नवारिष्ट पिलाना।

रक्तपित्त

रक्तपित्त कुलकंडन रस—किसी भी स्थान से रक्त आने को रोकता है, १ तो० ४) १-१ र० बासा रस से।

दूर्वादि घृत—सुकुमार प्रकृति के लोगों के लिये रक्त बन्द करने में उत्तम है पेशाब में खून आने में भी बहुत उत्तम है ५ तो० १) १-१ तो० शक्कर मिलाकर चाटे या ५ तो० गरम दूध में डाल पीवे।

कूष्मांड खण्ड—खांसी में कफ के साथ रक्त आने में बहुत उत्तम है १० तो० १) १-१ तोला २-३ बार चाटे।

उशीरासव—सब प्रकार के रक्तस्राव को रोकता है १० तो० १) १-१ तो० पानी मिला भोजन के बाद लें।

रक्तार्गल—किसी भी स्थान से निकलते रक्त को बन्द करता है। ५) तो० १ से २ गोली दूब या बासा रस से।

क्षय

सुधा—क्षय की रामबाण दवा २-२ र० च्यवनप्राश से। २४) तो०।

ज्वर चूड़ामणि रस—क्षय की उत्तम दवा है २४) तो० १-१ वटी च्यवनप्राश ६ मा० के साथ दें

च्यवनप्राश—वजन बढ़ाने के लिये उत्तम है २० तो० २) १-१ तो० चाटना प्रातः सायं।

सितोपलादिचूर्ण—हाथ-पैर की जलन और खांसी में उत्तम है ५ तो० २) १॥ से ३ मा० तक मधु घृत या मक्खन मधु से।

कुमुदेश्वर रस—क्षीणता और खांसी में उत्तम है ४) तो० २-२ र० मधु से चाटना।

महाराज मृगांक—ज्यादा कफ आने वाली क्षयज कास में, ४) तो० १-१ र० पीपल या मिर्च चूर्ण के साथ घृत से।

अश्वगंधादि घृत—रक्त मांस बढ़ाता है ४०) सेर

द्राक्षारिष्ट—भूख बढ़ाता व खांसी दूर करता है। १० तो०) १-१ तो० भोजन के बाद पानी मिलाकर लेना।

मृगांक पोटली—क्षय की सभी अवस्थाओं में लाभ करती है। ४०) तो० पीपल या मिर्च चूर्ण के साथ १-१ र० मधु घृत से।

मोती ज्वर

लक्ष्मीनारायण रस—सभी अवस्थाओं में उपयोगी हैं २) तो० १-१ र० मधु से।

मुक्तापञ्चामृत—मोती ज्वर की सभी अवस्थाओं में उत्तम है और क्षय में भी लाभकारी है। ४०) तो० १ से २ र० चासनी से।

स्नायु रोग (नारु रोग)

स्नायु रोग हर—खाने व लगाने की दवा है। १

कास

खदिरादि वटी—साधारण खांसी के लिये उत्तम है ।।) तो० मुख में रख कर चूसे ।

अगस्त्य हरीतकी—पुरानी खांसी कब्ज के लिये उत्तम है । १० तो० १) १-१ तो० चाटना ।

कास संहार भैरव—पुरानी खांसी में उत्तम है । ५) तो० बहेराचूर्ण के साथ मधु से चाटना ।

सर्वांग सुन्दर—जीर्ण-शीर्ण अवस्था की खांसी पर लाभकारी है । १ र० पान पर रख खावे ३०) तोला ।

बबूलारिष्ट—गले की खांसी में लाभकारी है, १० तो० १) भोजनके बाद १-१ तो० पानी मिला कर पिये या १०-१० बूंद बार-बार पीते रहें।

तालीसादि चूर्ण—अरुचि के साथ वाली खांसीके लिये ५ तो० २) ३-३ मा० मधु से चाटे ।

कुकर कास हर—खाने और कौवे में लगाने की दवा के सहित मू० २)

खाने की—२-२ र० मधु से लगाने की ४-५ बार दवा अंगुली से लगा कौवे पर बार २ मलें ।

माणिक्य रस—बार २ देरतक आने वाली खांसी की उत्तम दवा है । १२) तो० १-१ र० पान पर रख खाना या सितोपलादिचूर्ण १-१ मा० में मिला चाटना ।

श्वास रोग

श्वासान्तकद्रव—श्वास की अमोघ दवा है । पीते पीते श्वास वेग दूर करता है ५) तो० ५-५ बूंद पीना ।

भार्गी गुड़—साधारण सभी श्वासों पर लाभकारी है । १० तो० १) १-१ तो० चाटना ।

श्वास कुठार—आद्रक रस से १ से २ र० तक । १) तो०

अमृतार्णव—श्वास नली के शोथ युक्त श्वास पर मुख में डाल चूसते रहें, २) तो० १-१ वटी प्रातः सायं २४ घंटे में असर करती है ।

सोमयोग—श्वास की प्रसिद्ध दवा है २ से ३ र० मधु से दौड़ा होने पर ४ र० तक दें शीघ्र दौड़ा रोकता है । ४) तो०

श्वासकुकच्छान्तक—दौरेको शमन कर पेट साफ करती है । २) तो० १ गोली निगल कर १ घंटे बाद २ तो० घृत पीना ।

श्वास चिन्तामणि—जीर्ण ज्वर श्वास के लिये परमोपयोगी है । ३०) तो० बहेरा चूर्ण के साथ मधु से १-१ र० दिन में ३ बार ।

तिन्दुकादिवटी—बुढ़ापे की श्वास में १-१ वटी निगल ५-५ तो० घृत पीने पर फेफड़े को मजबूत करती है । अफीम की आदतछुड़ाती है । ४) तोला ।

हृदय और फेफड़े के रोग

अर्जुनारिष्ट—हृदय की धड़कन दूर करती है १० तो० १) १-१ तोला पानी मिला भोजनके बाद लें ।

हृदयरत्न चूर्ण—आन्तरिक वाष्प से उठी धड़कन दूर करता है । २) तो० ४-४ र० दूध से

कल्याणसुन्दर रस—हृदय फेफड़े को मजबूत करता है कास श्वास हर है । ३०) तो० पान पर रख १-१ र० लेना गर्म जल पीना ।

पञ्चसूत—यह उरस्तोय (प्लूरिसी) पर उत्तम है १०) तो० चौथाई से आधी र० तक अद्रक से ।

अष्टमूर्ति रसायन—फेफड़े और प्लूरिसी पर उत्तम है १०) तो० चौथाई से आधी र० तक अद्रक से।

न्यूमोनियां क्योर—न्यूमोनियां की उत्तम दवा है। ५) तो० २ से ४ र० तक चासनी से २-३ बार दें और गरम पानी पिलाते रहे ठण्डा पानी पीने को न दें। पार्श्वशूलहर मलहम पसलियों पर मलकर सेंके।

कृमि रोगे

बिडंगारिष्ट—पेट के कृमियों के लिये उत्तम है १० तोला १) भोजन के बाद १-१ तोला पानी मिला लें।

पारिभद्रावलेह—सब प्रकार के पेट के कीड़ों को दूर करता है। ५ तो० १) ३-३ मा० जल से

कृमिमुद्‌गर—पेट के कीड़ों के लिये १ से ४ र० तक मधु से ।॥) तोला।

अग्निमांद्य और अरोचक रोगे

अग्निकुमार—मेदे की सूजन में भूख न लगने। पेचिश आने में ।॥) तो० १-१ र० अद्रक रस से

क्रव्यादि रस—आमाशय की कमजोरी से भूख न लगना दस्त साफ न होने पर १-१ गोली जल से २) तोला।

शंखवटी—भूख लगा पखाना साफ लाती है पेट दर्द को दूर करती है। १) तोला १-१ बटी गरम जल से।

रसकेशरी—अन्न पर इच्छा न होने पर, जी मिचलानें पर १) तो० १-१ र० मधु से।

कालराहर गोलियां—हैजा की अमोघ दवा है १ शीशी ॥) १-१ गोली प्याज रस १-१ तोला के साथ दें।

मुस्तकारिष्ट—अरुचि आम, मरोड़, भूख न लगने पर १० तो० १-१ तो० पानी मिला दें

पलाण्डु अरिष्ट—हैजा पर उत्तम है। १० तो० १) ६-६ मा० दवा पानी में मिला कर दें।

कर्पूरासव—वमन, दस्त जी मिचलाना दूरकरता है ।॥) शीशी २०-२० बूंद शक्कर से दें।

विश्वेश्वरामृत—सुधासिन्धु अमृतधारा केसमान ही गुणकारी है १) शीशी ५-५ बूंद थोड़ी शकर पर डाल दें और पानी न दें।

अम्लपित्ते

अम्लपित्तान्तक लोह—खट्टी वमन बन्द करने में १) तो० १-८ र० मधु या चासनी से।

चूर्णोदक—वमन बन्द करता है, १ औंस ।॥)३-३ मा० जल मिला कर दें।

अविपत्तिकर चूर्ण—दस्तों की कब्जी को मिटा अम्ल को पाखाने की राह निकालता है। मू० ॥) तो० ६-६ मा० जल से।

लीलाविलास—अम्लपित्त में बमन की आदत जलन मेटता है, १) तोला एक-एक गोली आमला रस से दे।

क्षुधावटी—दस्त और बमन में पित्त आने को रोकता है. २) तो० १-१ गोली जल से।

शूल रोगे

शूलगजकेशरी—पेट के दर्द को दूर करता है, २) तो० १-१ रत्ती हिंग्वाष्टक में मिलाकर गरम जल से लें।

वैश्वानरलोह—चाहे जिस कारण से दर्द होता हो दूरकरता है, २) तो० १-२ र० गर्मजलसे

शङ्खद्राव—५-५ बूंद १ तो० जल में लेने से सब प्रकार के दर्द दूर करता है, १) तोला।

गुल्म रोगे

बचादिचूर्ण—वातजनित गुल्म में लाभकारी है, ५ तो० १) १–१ मासा जल से

गुल्मकालानल—सब प्रकार के गुल्मों की उत्तम दवा है, १) तो० १–१ र० अद्रक रस से।

पञ्चानन रस—यह रक्तगुल्म जो स्त्रियों में होता है, उसके लिये उत्तम है, २) तोला १–१ गो० जल से।

नागेश्वर—गुल्मकी उत्तम दवा है, २) तो० १–१ जल से।

प्रवालपञ्चामृत—बदनके कम हुये कैलेसियम को बढ़ाता है। गुल्म, शूल, आंत्रिकक्षय को दूर करता है २–२ र० द्राक्षारिष्ट १ तो० में मिला पानी मिला लें। १ तोला १२)

दाहे व वमने

सुधाकर रस—सब प्रकार के दाहों को शमन करता है, ३०) तो० १–१ र० त्रिफला जलसे

रसेन्द्ररस—सब प्रकारके वमन (कै) दूरकरता है, १) तो० १ से २ र० चासनी से।

शीतपित्ते

हरिद्राखण्ड—शीतपित्त, शरीर पर चकत्ते, खुजली की उत्तम दवा है ५ तोला १) ६–६ मासा जल से।

अरणी चूर्ण—शहद घृत से १–१ मासा लेने पर उपकारी है. ५ तोला १)

मसूरिका

शीतलानन्दरस—सोपद्रव मसूरिका (चेचक) की उत्तम दवा है २०) तो० १–१ वटी अर्क मुण्डी से।

बसन्तसुन्दर रस—सब प्रकार की शीतला को नष्ट करता है, २) तोला १–१ र० रुद्राक्ष घोल के साथ चटाना। चंदन तेल जल में घोल बना लगाना।

मुण्ड्यासव—१५ दिन पिलाने से १ साल तक चेचक का डर नहीं रहता, १० तो० १) १–१ तोला पानी मिला लेना।

एलाअरिष्ट—शीतला की सब अवस्थाओं में हितकारी है कीमत १० तो० १) १–१ तो० पानी मिला लेना।

विसर्प

तिक्तवर्गारिष्ट—सब प्रकार के विसर्प रोगों में हितकर है, १० तोला १) १–१ तोला पानी मिला लें।

वातरक्ते

वातरक्तान्तक लौह—वातरक्त की अमोघ दवा, २४) तोला १–१ गोली गुडूची, कोकिला क्वाथ से।

विषतिन्दुक तेल—यह मालिश से रोग और दर्द को दूर करता है। ५ तो० २)

कैशोर गूगल—वातरक्त और रक्तविकार के लिये यह उत्तम है। १) तोला १–१ गोली गुडूची क्वाथ से।

महातालकेश्वर रस—५) तो० १–१ र० मधु घृत या चोपचोनी चूर्ण १॥ मा० के साथ मधु से

नागेश्वर रस—वातरक्त मंडलकुष्ट की अत्युत्तम दवाहै मू० १२) तोला अनुपान चूर्ण १॥–१॥ मा० के साथ मधु से नमक छोड़दे।

कुष्ठ रोगे

कुष्ठराक्षस तेल––कुष्ठ के लिये उत्तम है। ५ तो० १) व्रणों पर मलना या फाहा रखना।

खदिरारिष्ट––रक्तदोष के लिये उत्तम है १० तो० १) १–२ तो० जल मिला भोजन के बाद पीना चाहिये।

पञ्चतिक्तघृत गुग्गुल––कुष्ट पुरातन उपदंश के लिये उत्तम है ५ तो० १।।) ६ मासा दूध में डाल पीना।

रसमाणिक्य––कुष्ट के लिये उत्तम है ४) तोला आधी से १ र० तक त्रिफला चूर्ण के साथ मधु से।

श्वेतकुष्टहर लेप––पानी में घिसकर दागों को खुरच कर लगाने से नष्ट करता है। १)तो०

बालतेल––श्वेत दागोंको तेज अस्तुरे से खुरचकर लगाने से शर्तिया लाभ करता है। ५) तो०

श्वेतकुठारि––४८ दिन में छाला डालकर श्वेतकुष्ट दूर करता है, ५) तो० १–१ गोली जल से निगलना चाहिये और नमक छोड़ देना

उदयादित्य–गुण उपरोक्त मू० ५) तो०।

दद्रुदावानल––दाद की उत्तम दवा है, १ डिबिया ।।) दाद को साफ कर मलना २–३ बार।

पामाहर––सूखी व पकनी खाज में उत्तम है, १) तो० घृत मिला खाज में मलना और दही में मिला खाना धूप में बैठकर गर्म जल से स्नान करना।

गन्धक रसायन––२ से ४ र० तक दवा मधु या घृत से लेने में सूखी व पकनी खाज व रक्त दोष को मिटाने में अचूक है २) तोला।

अर्श बवासीर

बाहुशाल गुड़––पेट का आध्मान दस्त साफ न आने पर १० तो० १) १–१ तो० प्रायः सायं खाना चाहिये।

अग्निमुख लोह––खाने से ही मस्से सुखाता है। २) तो० २–२ र० मधु से खाना। रक्त बंद करने में एक-एक मासा असली नागकेश्वर के साथ दें।

पीलू आसब––दस्त खूब साफ लाता है १० तो० १) भोजन के बाद १–१ तो० पानी मिला पीना।

अभयारिष्ट––दस्त साफ लाता है, १० तो० १) १–१ तो० पानी मिला पीना।

अर्शान्तक––सिद्ध दवाहै, मू० ५) तो० १–१मा० दवा जल से लेना और मस्सों पर जल में पीस लगाना।

शङ्करलौह––सब प्रकार के अर्श में हितकर है ५) तो० १–१ रत्ती मधु से।

कासीसादि घृत––सिर्फ लगाने से मस्से सुखाता है। जलन दर्द सूजन मिटाता है १) औंस अंगुली से मस्सों पर लगावें या फाहा तर कर गुदा में रखें।

अर्शांतक लेप––लगाने से लाभप्रद है, ठंडक देता है, १) तो० पानी से पीस लगाना।

अर्शांतक वर्ती––५) तो० हुक्के के जल में घिस लगाना मस्से गिराता है।

कुटजावलेह––रक्त बन्द करने में उत्तम है १० तो० १) १–१ तो० प्रातः सायं जल से कहरवा रसायन १–१ मासा लेने से बहुत उपकार करता है।

भगन्दरे

नारायण रस—खाने से भगन्दर दूर करता है, १ तो० १) एक-एक रत्ती मधु से।

ताम्र प्रयोग—खाने से भगन्दर दूर करता है, २) तो० एक-एक र० मधु से।

विष्यन्दन तेल—लगाने से घाव को भरता है। १) तो० बत्ती तर कर घावों में भरो।

भगन्दर हर—२४ दिन नमक छोड़ खाने से भगन्दर दूर करता है मू० ५) १-१ लड्डू दूध से, नमक न खावें।

उपदंशे

कर्पूर भांडेश्वर—१४ दिन में उपदंश को समूल नष्ट करता है। १२) तो० १-१ गोली जल से निगलना।

उपदंशहर मलहम—घाव भरने में अक्सीर है, १) तो० कपड़े पर लगा चिपकाना।

भैरव रस—उपदंश में उपयोगी है, २) तो० २ दिन ३-३ गोली जल से, ११ दिन तक १-१ गोली लें।

रसशेखर—उपदंश हर है, २) तो० १-१ गोली चोपचीनी क्वाथ से।

पूयमेह (सूजाक)

महाभ्रवटिका—पुराने सूजाक की उत्तम दवा है २०) तो०, त्रिफला चूर्ण के साथ या क्वाथ से १-१ गोली दें।

सूजाक द्रव—नये सूजाक में उपयोगी हैं, जलन, दर्द को बन्द करता है। १० तो० १) १-१ तो० पीना।

कन्दर्प रस—पुराने सुजाक में जब सब तरह से निराश हो इसे अजमावे ३०) तो०

हरिशंकर रस—पुराने पीबदार सुजाक को दूर करने में उत्तम है। ४) तो० १-१ गोली २ तो० तिल तेल या आमला रस से दें।

एण्टी टानिक—१-१ गोली चन्दन तेल में लेने से मवाद दूर करता है २ सप्ताह का ५)

उरुस्तम्भे

गुञ्जाभद्र रस—उरुस्तम्भ की उत्तम दवा है, २) तो० १ से २ र० सम्भालू क्वाथ से लें।

भग्ने

आभागूगल—पुरानी चोट में लाभदायक है। १) तो० १-१ मा० गरम दूध से।

गन्धक तेल—चोट के दर्द को दूर करता है, ५ तो० १) चोट स्थान पर मलना।

अमृत भल्लातक—टूटी हड्डी और चोट रक्तदोष में लाभदायक है, ५ तो० २) १ से ३ मा० तक गर्म दूध से निगलना, चबाना नहीं।

महावातविध्वंसन—शीघ्र पीड़ा दूर करता है। ५) तो० १-१ गोली अद्रक रस से।

वातरोगे

समीरपन्नग—चौथाई २ र० महावातविध्वंसन रस १-१ गोली के साथ मधु से ४) तो०।

महानारायण तेल—सूखे बात दर्दों में लाभकारी है, अङ्ग पुष्ट रखता है, ५ तो० १) मलना।

विषगर्भ तेल—सूजनयुक्त बात पीड़ा हर है, ५ तो० १) वाष्प स्वेद देकर मलो।

कुब्जप्रसारिणी तेल—अङ्गों को चलाता, स्तम्भन नाशक है। ५ तो० १) स्वेदन कर मलो।

महावातचिन्तामणि—वातरोग की उत्तम दवाहै। साथ में आक्षेप हो उसे भी दूर करता है। ३०) तो० १-१ गो० त्रिफला चूर्ण मधुघृत

चिन्तामणि चतुर्मुख—पुराने बात रोगों में व ब्लडप्रेसर, उन्माद में भी लाभकारी है, ३०) १-१ र० त्रिफला चूर्ण के साथ मधु घृत से।

एकांगवीररस—लकवा पक्षाघात की उत्तम दवा है, ५) तो० १-१ र० अद्रक रस से।

शिंशपावलेह—गृध्रसी की उत्तम दवा है १० तो० १) १–१ तो० चटाना गर्म जल से।

श्लीपदरोगे व अन्डवृद्धि, आंत्रवृद्धि में

श्लीपद गजकेसरी—हाथी पैर के लिये लाभकारी हैं १) तो० १-१ र० मधु से।

नित्यानन्द—आंत के बढने, श्लीपद, अंडवृद्धि मे २) तो० १-१ र० हरीतकी काथ से।

गन्धर्व हस्त तेल—आंत्रवृद्धि, अडवृद्धि में उपकारी है ५ तो० १) गर्म दूध में डाल १ तो० पीना और अंडकोषों पर मलना।

वृद्धिवाधिका बटी—अण्डवृद्धि, आंत्रवृद्धि में उपकारी है। १) तोला १–१ बटी हरीतकी काथ से या ५ तोला गरम दूध में १ तोला गन्धर्व हस्त तेल मिला कर पीना।

व्रण रोगे

जात्यादि घृत—सब प्रकार के घाव भरता है। १) औंस कपड़े पर लगा चिपकाना।

अस्थिभस्मादि—उपरोक्त बिधि से १) औंस।

व्रणराक्षक तेल—दूषित घाव भरने में उपयोगी है। २ औंस १) कपड़ा तर करके रखें।

भल्लातकादि नाड़ीव्रण (नासूर) के लिये ५ तो० १) बत्ती तर कर घाव में रखें।

क्षार तेल—दुष्टघाव भरने में उत्तम है ५ तो० १) है। बिधि उपरोक्त।

कमलबीजादि—इससे फोड़े फुन्सी निकलना बंद हो जाते हैं। ४ तो० १) ३ मासा पानी में पीस छान कर शकर मिला पीना।

गण्डमाला कन्डन रस—कण्ठमाला की उत्तम दवा। ६० दिन में जड़ खोता है, मू० १) तो० साथ में पारदादि मलहम लगावें मू० १ औंस २)।

आमवाते

रास्नारिष्ट—आमबात, दर्द शोथहर है, १० तो० १) १–१ तोला पानी में मिला पीना।

सिंहनाद गूगल—साधारण आमबात में लाभकारी है, ५ तो० ३–३ मा० रास्नासप्तक काथ से।

आमबातेश्वर बटी—आमरोग में सिद्ध है। जोड़ों के शोथ के दर्द को दूर करता है। २) तो० १–१ गोली जल से।

आमबातारिवज्र रस—बिषैले उपदंश, सूजाक, प्रभावजन्य आमवात हर है। २) तोलां १-१ र० अद्रक रस से दें।

बृ० सैंधबादि तेल—मालिश से रोग दूर करता है। ५ तो० १)

उन्माद, मृगी और मूर्च्छा

बातकुलान्तक रस बिशेष—मस्तिष्क को बल देकर व शुद्ध करके हिस्टीरिया, मृगी, उन्माद पक्षाघात रोग दूर करता है। २४) तो० १-१ र० घृत से लेना।

क्षीरोदधि रस—मृगी के लिए उत्तम है २५) तो० १-१ र० त्रिफला जल से।

वृ० भूतभैरव रस—बातरोग, मूर्च्छा, उन्माद, मद, मृगी में उत्तम है ३०) तो० १-१ वटी दूध से।

मूर्च्छान्तक रस––मूर्च्छा रोग में हितकर है, २४) तो० घी शहद से।

अश्वगन्धारिष्ठ––मांसबर्द्धक पौष्टिक, दिमाग को बलप्रद है १० तो० ।।) १ तो० जल में मिलाकर पिलाना

कुमारी घृत––दिमाग को पुष्ट करने में कमाल है उन्माद, मृगी को हितकर है, १ पाव का दाम ५) १ तो० को ५ तो० गरम दूध में डालकर शकर मिला पिलावे।

खंज व तांडव रोगे

तांडवारि रस––मुंह बनाकर हाथ फटकारते हुये कपकप कर चलनेपर, २) तो० १-१ र० घृत

खञ्जनकारि रस––जानु का वक्र होना, जङ्घा का शोथ पीड़ा में १ गोली गरम दूध से ३)

स्नायुशूले

स्नायुशूल हर––स्नायु (शिर बाहु, भुजा) की पीड़ा सारे अंग का दर्द, २) तो० २-२ र० घृत से।

मिहरोदय रस—स्नायु पीड़ा शामक है २) तो० १-१ र० त्रिफला रस से।

सुरवल्लभ तेल––शिर दर्द और नर्वस शैथिल्यहर है। ५ तो० १)

खालित्यारिरस—खालित्य रोग (कंपहाथ से न लिख सकने में और कोई चीज न उठा सकने) में लाभ प्रद है। २) तो० १–१ बटा घृत से।

आदित्य पक तेल—इसके मर्दन से भी खालित्य दूर होता है। ५ तो० १)।

कलोम रोगे

शशिशेखर रस—पेट के ऊपरी भाग का कठोर होना प्यास और वमन क्षुधा नाश होने में उत्तम है, १ तोला २५) १–१ र० मधु से।

वृक्करोग

सर्वतोभद्रावटी––कमर की पीड़ा बार बार मूत्र की इच्छा, परन्तु मूत्र थोड़ा २ आना, रात्रि में अधिक जाना शिर, ग्रीवा के दर्द में उपकारी है १ तोला ३०) १–१ गोली मधु से।

मूत्रकृच्छ्र, मूत्राघात और अश्मरी रोग

मूत्रकृच्छ्रान्तक––मूत्र का दर्द से आना दूर कर देता है, ३०) तो० १–१ र० पञ्चतृणमूल क्वाथ से।

चन्दनासव—मूत्र का दर्द से आना दूर करता है १० तो० १) १–१ तो० पानी मिला कर भोजन के बाद लेना।

शतावर्यादि घृत—मूत्रघात (मूत्र न उतरनेपर) उत्तम है, ५ तो० १) १–१ तो० शकर मिला खाना।

अश्मरी हर––५ से १० बूंद नीबू के रस में मिला कर पाना उत्तम है १) तो० पथरी को पेशाव मार्ग से तोड़ कर निकालता है।

पाषाणभिन्न रस––पथरी को तोड़ कर निकालता है ५) तो० १–१ र० कुलथी क्वाथ से।

प्रमेह

प्रमेह मुद्गर वटिका––सब प्रकार के प्रमेह सूजाक आदि में हितकर है १) तो० १–१ गोली दूध से।

बृहद्वङ्गेश्वर—प्रमेह धातुस्राव स्वप्नदोष में उपयोगी ३०) तो० १–१ र० मधु से।

बहुमूत्रान्तक—वार वार बहुत पेशाव आने पर यह उत्तम है ५) तो० १-१र० ऊमर रस से।

कदल्यादि घृत—वार २ पेशाव आने पर बहुत उत्तम है ५ तो० १) १-१ तो० को ५ तो० गरम दूध में डाल पीना।

माक्षिकादिचूर्ण—शुक्रप्रमेह, स्वप्नदोष की उत्तम दवा है ५ तो० ४) १-१ मासा दूध से प्रातःसायं।

देवदार्व्याद्यरिष्ट—प्रमेहादि में उत्तम है। १० तो० १)

चन्दनादि—ओजोमेह (अलव्यूमन) जाने में उत्तम है १) तो० १-१ मासा मधु से।

दूर्वाद्यघृत—पेशाब के साथ रक्त आने में उत्तम है ५ तो० १) १-१ तो० शकर में मिला चाटे।

मकरध्वज रस—विशिष्ट, प्रमेह पिडिका (कालवैकर) आदि में दे २०) तो० १-१ र० बकरी के दूध से।

शारिवाद्यासव—प्रमेह, पिडिका को नाश करके रक्त को शुद्ध करता है। १० तो० १) १-१ तोला पानी मिला लेना।

नपुन्सकता क्लीवता

चन्द्रोदय मकरध्वज—(स्वर्णयुक्त) सब प्रकार की नपुन्सकता, क्षय, कमजोरी आदि में १ तो० ३०) १-१ गोली पान में रख कर खाना

चन्द्रोदय वटिका—सब प्रकार की नपुन्सकता, क्षय कमजोरी आदि में १५) तो० १-१ गोली दूध से।

सिद्धसूत—क्षय, राजयक्ष्मा, क्लैव्यत्व में लाभ करता है। ३०) तो० १-१ र० शकर सफेद मूसली चूर्ण १-१ मासा के साथ दूध से।

कामाग्नि सन्दीपन रस—क्लैव्य की अपूर्व दवा है ५) तो० १-१ र० दूध से।

आकरकरभादि बटी—स्तम्भन की अपूर्व दवा है ४) तो० १-१ बटी सम्भोग से २ घन्टा पूर्व गरम दूध से।

हब्ब अम्बर—यह नपुन्सकता की बादशाही दवा है। चार दिन में ही लाभ दिखाती है १५) तो० १-१ बटी दुग्ध से।

पारदादि लेप—इन्द्री को पुष्ट करता है, पानी निकालता है, २) तो० कपड़े पर लगा शिश्न मुख बचा चिपकाना।

बिश्वेश्वर तिला—कुकर्म जनित रोगमें, २) तो० कपड़े पर लगा चिपकाना या मलकर पान बांधना।

मुख रोगे

पायोरिया शामक—दांतों पर मलना १) तोला

इरमेदादि तेल—पायरिया में उत्तम है, ५ तोला १) फुरेरी से दांतों पर मलना।

रसेन्द्रगुटी—मुख पाक में लाभकारी है. ५) तो० मुख में डाल चूसते रहे।

नासिकारोगे

कर्पूरादि तेल—नाक के कीड़ों को दूर करता है, २) तो०

व्याघ्री तेल—पीनस हर है, नाक की वदबू दूर करता है, जुकाम रोकता है, ५ तो० १) ५-५ बूंद नाक में डालना।

चित्रक हरीतकी चाटन—जुकाम और पीनसहर ५ तो० १) गरम जल से ६-६ मा० ले।

नेत्ररोगे

नेत्रद्रव—आई हुई आंख की पीड़ा दूर करती है, एक शीशी २ आना, २–२ बूंद टपकाना

चक्षुरक्षकअर्क—समस्त नेत्र रोगों में लाभकारी है। १ बोतल २) ५–५ तो० शकर या मधु मिलापीना।

चन्द्रोदयावर्ति--मांड़ा, फूली के लिये उत्तम है १) तो० पानी से घिस कर लगाना।

त्रिफलादि घृत--सबल आदि नेत्र के रोगों के लिये उत्तम है. ५ तो० १।) १–१ तो० गरम दुग्ध में डाल कर पीना।

नयनचन्द्र लोह—पुराने नेत्र रोगों और शिर की पींड़ा में उत्तम है, १) तो० त्रिफला चूर्ण के साथ घृत मधु से।

ताम्राञ्जन—सबल की पीड़ा में उत्तम है, पानी का वहना रोकता है दृष्टि को ठोक रखता है, ४) तो० सलाई से लगाना।

कर्ण रोगे

कर्णरोगान्तक तेल—कान की पीड़ा केलियेउत्तम है १ शीशी।=) ३–३ बूंद डालना।

अपामार्गक्षार तेल—वधिरता नाशक है, ।।) तो० ४–४ बूंद डालना।

शारिबादि वटी—समस्त कर्ण रोग वहना कम सुनना नाशक है २) तोला १–१ वटी दूधसे

शम्बुकादि तेल—कान के वहने की अक्सीर दवा है ।।) तो० २-४ बूंद कान में डालना।

शिरो रोगे

षड्बिन्दु तेल—केवल नस्य से शिर-शूल दूर करता है ।।) तोला।

अर्धावभेदहर द्रव—आधा शीशी की वेदना शीघ्र ही दूर करता है। १ शीशी।=) २–२ बूंद नाक में टपकाना।

मिहिरोदय वटी—समस्त शिर शूल नाशक है ३०) तो० १–१ वटी त्रिफला चूर्ण के साथ घृत से।

कुमारी तेल—मस्तिष्क की कमजोरी आदि दूर करने में उत्तम है. ५ तो० १) शिर में मलना चाहिये।

शिर का बढ़ना

वह्निभास्कर रस—यह रोग बच्चोंके होताहै उनका शिर बढ़ जाता है वे निर्बल होने लगते हैं। १५) तो० मधु घृत से १-१ र०।

सलिल शोषण चूर्ण—शिर के पानी को सुखाता है, २) तो० १-१ र० दूध से।

रस तेल—इसकी मालिश से शिर का पानी सोखता है, ५ तो० २) शिर पर मलना।

मस्तिष्क वेपन

बिल्वादि चूर्ण—यह शिरके हिलने में उत्तम है. ५ तो० २) २-२ मा०. दूध से।

पञ्चामृत लोह गूगल—शिर और स्नायु की कमजोरी में, ४) तो० गरम दूध से।

मेद रोगे

लोह रसायन—यह देह के मुटापे को दूर करने में सिद्ध है। २) तो० १-१ र० गरम जल से

त्रिफलाद्य तेल—मुटापा दूर करने में उत्तम है। ५ तो० १) देह पर मलवाना।

स्त्रीरोगे

अशोकघृत—सब प्रकार के श्वेत रक्त प्रदर रोगों

में हितकर है, ५ तो० २) १-१ तो० शकर मिलाकर चाटना ।

मधुकाद्यवलेह—अधिक रक्तस्राव को हटाता है, ५ तो० २) ३-३ मा० जल से ।

अशोकारिष्ट—अधिक रक्तस्राव को हटाता है, १० तो० ११) १-१ तो० पानी मिलाकर पीना ।

लोध्रासव—अधिक सफेद पानी को हटाता है, १० तो० १) १-१ तो० पानी मिलाकर पीना

पत्रांगासव—कष्ट से रक्त आने में, १० तो० १)

पीवरी— „ „ „ „

प्रदरांतक—समस्त प्रदर रोग हर है, ४) तो० १-१ र० घी शकर से ।

जयादि वटी—कष्टरजमें १-१ वटी जलसे २)तो०

कनकसार—जरायु रोग दूर करता व गर्भधारण कराता है, २) तो० १-१ वटी जल से व १-१ वटी गुह्यांग में रखे ।

फलघृत—बन्ध्यत्व नाशक है ५ तो० १) शकर के साथ १-१ तो० चाटना या दूध में डाल पीना ।

सोमघृत—अठारह रोग (बच्चा मरने में) उपकारी है, बच्चा दीर्घायु होता है। ५ तो० १) गरम दूध में डालकर पीना ।

हयमारादि तेल—योनिकी खुजली और फुन्सियों के लिये उत्तम है, ५ तो० १) फुरहरी से लगाना ।

हिंग्वादि तेल—योनि पीड़ा और खुजली को दूर करता है, ५ तो० १) रुई को तर कर गुह्यांग में रखे ।

गर्भचिन्तामणि—गर्भ के रोगों को दूर करता है ५) तो० १-१ वटी दुग्ध से ।

सूतिकारि—सूतिका के रोगों में हितकार है, २) तो० १-१ वटी जल से निगलना ।

सूतिका वल्लभ रस—प्रसूत की सभी अवस्थाओं में हितकर हैं, ३०) तो० १-१ वटी दूध से ।

प्रमदानन्द रस—जरायु विकृति में बार २ क्लेद आने पर, २५) तो० १-१ वटी त्रिफला क्वाथ

दशमूलासव—प्रसूत रोग हर है, १० तो० १) १-१ तो० पानी मिलाकर पीना ।

स्तन विद्रधि हर लेप—कुच के फोड़े के लिये उत्तम है, १ पट्टा १) आग पर गरम कर चिपकाना ।

महावज्रक तेल—कुच के नासूर घाव के लिये उत्तमहै । ५ तो० १) फाहा तर करके रखना

बालरोग

बालरोगान्तक—ज्वर, दस्त, खांसीके लिये उत्तम है, २) तो० १-१ वटी मधु से ।

बालानन्दघुटी—बच्चों को मोटा ताजा बनाता है, ५ तो० १) ५ से ४० बूंद उम्र देख चटाना ।

कुमारकल्याण रस—सूखा रोग का उत्तम दवाहै ४०) तो० १-१ वटी मधु से ।

अरविन्दासव—समस्त रोगों पर हितकर है, ५ तो० ॥) २ मा० से १ तो० तक जल मिला पिलाना ।

कुकर कास हर—यह दवा चाटने से बहुत ही लाभ करती है । २-२ र० मधु से ५-६ बार चटाना । साथ ही कौवे पर मलने का चूर्ण लेना चाहिये । मू० ॥) चाटने का १) तो०

शय्यामूत्रे—सोते वक्त पेशाब हो जाने में उत्तम है, १० तो० १) ३ से ६ मा० तक चटाना ।

क्षुद्ररोगे

मुख सौन्दर्य वर्द्धक--मुख की फुन्सियों को मिटा कर सुन्दरता लाने में उत्तम है। ५ तो० १) मुख पर मलना चाहिये।

कनक तेल--मुहांसे, फुन्सी दूर करने में उत्तम है, ५ तो० १) मलना चाहिये।

वर्णक घृत---व्यंग, काले दाग, मुहांसे को दूर करता है, १) औंस मुख पर मलना।

भृंगराज तेल—बालों को काला करके झड़ना दूर करता है, ५ तो० १)

अमृतांकुर वटी--समस्त क्षुद्र रोग नाशक है, २) तो० १-१ वटी सारिवादि क्वाथ से।

विष रोगे

भीमरुद्र रस—स्थावर जंगम विष नाशक है, ४) तो० १-१ वटी घृत से।

तार्क्ष्यागद—सर्प दंश की अचूक दवा है, १) तो० १-१ मा० घृत से, वर्र, बिच्छू के दंश स्थान पर पानी में घिस लगाना चाहिये।

शिरीषारिष्ट—सब प्रकार के विषों को हरता है, १० तो० १) १-१ तो० पानी मिला पिलाना।

मृत्युपाशच्छेदि घृत—सब प्रका के सांप, बिच्छू बर्र, मकड़ी के विषों को दूर करता है। ५ तो० १) १-१ तो० गर्म दूध में मिला पिलाना व लगाना।

रसायनाधिकारे

सिद्ध मोदक—बल, पुष्टि वर्द्धक, रोगनाशक है, ५ तो० १) १-१ वटी नित्य जल से लेने से कोई रोग नहीं होता है।

महालक्ष्मीविलास रस—बल, वीर्य, कांति वर्द्धक है, १-१ वटी घृत से या पान पर रखकर खाना १५) तो०

सारस्वतारिष्ट—मस्तिष्क को बल देकर स्मरण शक्ति बढ़ाता है, १-१ तो० पानी मिलाकर पीना, १० तो० १)

श्रीगोपाल तेल—५ तो० १) समस्त शिर पर मलना शिरको पुष्ट करता व दर्द बन्द करताहै

नोट—इसके सिवाय और भी सैकड़ों दवाइयां तैयार रहती हैं, आप जो दवा चाहेंगे उसे भी बनाकर भेज देंगे, पुस्तक का नाम और अधिकार लिखकर भेज दें। और चौथाई मूल्य पेशगी भेजदें। वैद्यों को थोक भाव में जड़ी बूटी और खनिज प्राणिज सभी वस्तुएं देने का पूर्ण रूप से यहां प्रबन्ध है नये ग्राहकों को पेशगी चौथाई मनीआर्डर से भेजना जरूरी है।

मिलने का पता—

वि० चू० पं० विश्वेश्वरदयालु वैद्यराज
अध्यक्ष—कुष्ठ-चिकित्साश्रम,
बरालोकपुर-इटावा

औषधियों की उत्तमता पर अनेक वैद्य सम्मेलनों द्वारा सन्मान-पत्र एवं
बहुमूल्य स्वर्ण-पदक प्राप्त, जगत्-विख्यात

श्री कुष्ट-चिकित्साश्रम, बरालोकपुर—इटावा यू० पी०

—: का :—

सिर्फ वैद्यों व डिस्ट्रिक्टबोर्डों के लिये थोक भाव का

सूचीपत्र



कूपीपक्व रसायने

	१ तो०	५ तो०
सिद्ध मकरध्वज तलस्थ	२५)	१२०)
षट्गुणबलिजारित स्वर्णघ० मकर०	१२)	५०)
त्रिगुण ,, ,, ,,	१०)	४०)
द्विगुण ,, ,, ,,	८)	३५)
रससिंदूर द्विगुणबलिजारित	३)	१२)
,, षटगुण ,,	६)	२५)
मल्लसिंदूर द्विगुणबलिजारित	४)	१५)
ताम्रसिंदूर	४)	५५)
शिलासिंदूर	४)	१५)
विषसिंदूर	४)	१५)
स्वर्णवंग	४)	१५)
समीरपन्नग	४)	१८)
पंचसूत	८)	३२)
अष्टमूर्ति	८)	३२)

विशुद्ध भस्में

स्वर्णभस्म		१ तो० १५०)
रौप्यभस्म	१ तो० ६)	५ तो० २५)
ताम्रभस्म		,, २)
लोहभस्म		,, ३)
वंगभस्म		,, ४)
नागभस्म		५ तो० २)
पित्तलभस्म		,, २)
कांसाभस्म		,, २)
यशदभस्म		,, १।।)
मण्डूरभस्म		,, २)
स्वर्णमाक्षिक भस्म		,, २।।)
अभ्रकभस्म शतपुटी	१ तो० ४)	,, १८)
मुक्ताभस्म	१ तो० ८०)	
मुक्ताभस्म नं० २	१ तो० ७०)	
प्रबालभस्म		,, ५)
शंखभस्म		,, १)
कपर्दभस्म		,, १)
शुक्तिभस्म		,, १)
मुक्ताशुक्ति		,, २)
साबरशृङ्गभस्म		,, २)
गोदन्ती हरताल		,, १।)
तुरमुलीभस्म		१ तो० ८०)
माणिक्यभस्म		,, २०)
वैक्रान्तभस्म		,, १०)
चन्द्रकान्त भस्म		,, १५)
गोमेदभस्म		,, २०)

ाक्कूतभस्म	१ तोला	१०)
ील्लमणिभस्म	,,	४०)
खराजभस्म	,,	२०)
त्माभस्म	,,	३०)
ीराभस्म	,,	८००)
ाल्त्रभस्म श्वेत	,,	८)
ागुल भस्म	,,	५)
ीलादभस्म [बाजी०]	,,	१०)
भ्रकभस्म [सहस्रपुटी]	,,	२०)
,, ५०० पुटी	,,	१०)
वङ्ग भस्म	,,	२)
ान्तलोहभस्म शतपुटी	,,	४)
रताल भस्म श्वेत	,,	८)
रताल भस्म ४४४ पुटी	,,	८०)
ल्लभस्म श्वेत	,,	८)
खर्पर भस्म असली	,,	५)
ांकर लोहभस्म	,,	५)
संगयहूद	१ तो०	२)
संगअशहब	,,	४)
संगसरेमही	,,	६)

शोधित द्रव्य

शु० पारद हिंगुलोत्थ	५ तोला	८)
शु० गन्धक आमलासार	,,	२)
शु० हिंगुल	,,	७)
शु० जयपाल	,,	४)
शु० हरताल	,,	३)
शु० वच्छनाग	,,	४)
शु० धतूरबीज	,,	१)
शु० मनसिल	,,	२)
शु० गुग्गुल	,,	१।)
शु० कुचला	,,	२)
शु० मल्ल	,,	२)
शु० भल्लातक	१० तोला	२)

शु० सूर्यतापी शिलाजीत	२० तोला	१५)
शु० अग्नितापी शिलाजीत	,,	१०)
कस्तूरी नैपाली	१ तो०	१२०)
कस्तूरी कश्मीरी	,,	८०)
अन्बर असली	,,	४०)
मोती अनबिधे बसरई	,,	८०)
मोती बड़ा दाना वेडोल	,,	४०)

गुटिका

एलादि गुटिका	५ तो०	१।)
महायोगराज गूगल	,,	८)
लघुयोगराज गूगल	,,	२)
चन्द्रप्रभाबटी	,,	३)
व्योषादिबटी	,,	१)
शंखवटी	,,	३)
गंधकवटी	,,	३)
काचनार गूगल	,,	२)
कैशोरगूगल	,,	२)
अमृता गूगल	,,	१)
सिंहनाद गूगल	,,	३)
गोक्षुरादि गूगल	,,	२)

रस वटिका

	१ तो०	५ तो०
अग्निकुमार [अजीर्णे]	॥।)	३)
अग्नितुंडी	॥।)	३)
अश्वचोली रस [सर्वरोगे]	॥।)	३)
अजीर्णकंटक [अग्निमांद्ये]	॥।)	३)
अर्शकुठार रस [अर्शरोगे]	॥।)	३)
अष्टांग रस ,,	॥।)	३)
आनन्दभैरवरस [ज्वरातिसारे]	॥।)	३)
आ० कृष्ण [ज्वरे]	॥।)	२)

नोट—गोली बनी १ तो० १) में मिलेगी

आमवातारि वटी [आमवाते]	१तो० १)	५तो० ४)
इन्दुवटी [कान के रोगों पर]	६)	२५)
इच्छाभेदी रस [विरेचने]	।।।)	३)
उपदंशकुठार [उपदंशे]	२)	८)
एलादिवटी [रक्तपित्ते]	।।)	१।।)
कर्पूर रस [अतिसारे]	४)	२०)
कीटमर्द [कृमिरोगे]	।।।)	३)
कनकसुन्दर [ज्वरातिसारे]	।।।)	३)
कफकेतुरस [कफरोगे]	।।।)	३)
कस्तूरी भैरव [सन्निपाते]	१८)	
कस्तुरी भैरव बृ०	२०)	
कृमिमुद्गर [कृमिरोगे]	।।।)	३)
क्रव्यादिरस बृ० [अजीर्णे]	१।।)	७)
कामिनी विद्रावण [बाजीकर्णे]	३)	१२)
गदमुरारि रस [ज्वरे]	।।।)	३)
गन्धकरसायन [रक्तदोषे]	२)	८)
गर्भविनोद [गर्भरोगे]	२)	८)
गर्भचिन्तामणि ,,	२)	८)
गर्भपात रस ,,	१)	
गुल्मकालानल [गुल्मे]	१)	४)
गुल्मकुठार ,,	१)	४)
चन्द्रामृतरस [कासे]	१)	४)
चन्द्रकला [प्रमेहे]	१)	४)
चन्द्रकान्त रस [सिरोरोगे]	२)	८)
चिंतामणि चतुर्मुख [वातरोगे]	३०)	
चतुर्मुखरस [उन्माद]	३०)	
चिंतामणि [ज्वरे]	।।)	२)
चित्रकादिवटी [ग्रहणी]	२)	२)
जयमंगल रस [ज्वरे]	३०)	१४०)
ज्वरकेशर ,,	।)	२)
ज्वरमुरारि ,,	।।)	२।।)
ज्वरघ्नी ,,	।।।)	३)
ज्वरधूमकेतु ,,	।।)	२।।)
ज्वरारि अभ्रक ,,	।।।)	३)
दुग्धवटी [शोथे]	४)	१५)
नवरत्नमृगांक [क्षये]	४०)	

नृपतिवल्लभ [ग्रहणी]	१तो० २)	५तो० ८)
नवायसलौह [पांडुरोगे]	१)	३)
नाराच रस [विरेचने]	१)	२)
प्रतापलंकेश्वर [प्रसूते]	।।।)	२)
प्रदरांतकरस [प्रदरे]	२)	८)
प्राणदा गुटी [अर्शरोगे]	।।)	२)
पीयूषबल्ली रस [ग्रहण्याम्]	१)	३)
पूर्णचन्द्ररस [बाजीकरणे]	६)	३०)
बालरस [बालरोगे]	२)	८)
बृहत्सर्वज्वरहर लौह ७०पुटी [ज्वरे]	२४)	
बंगेश्वर रक्त [प्रमेहे]	१५)	
बंगेश्वर बृहत ,,	२५)	
बसन्तकुसुमाकर ,	३०)	४०)
बसन्तमालती स्वर्ण [जीर्णज्वरे]	२४)	१२०)
महागन्धक [वातातिसारे]		५)
मनमथाभ्ररस [बाजीकरणे]	४)	२०)
मिरचादिवटी [कासे]	।।)	२)
मृगनाभ्यादिवटी [बाजीकरणे]	१५)	६०)
मृत्युञ्जयरस ,,	।।।)	३)
महामृत्युञ्जय रस [सन्निपाते]	३)	
महाज्वरांकुश [ज्वरे]	।।।)	३)
रसामृत [अम्लपित्ते]	।।)	२)
रक्तपित्तांतक [रक्तपित्ते]	१)	४)
रामबाणरस [अजीर्णे]	।।)	२।।)
राजमृगांकरस [क्षये]	५)	२०)
राजमृगांक पोटली	४०)	
लघुसर्वज्वरहर लौह [ज्वरे]	३)	
लक्ष्मीबिलास [बाजीकरणे]	१५)	
लक्ष्मीबिलास [ज्वराधिकार]	३)	
लसुनादिवटी] विसूची]	।।)	१)
लीलाबिलासरस [अम्लपित्ते [	१)	५)
लोकनाथ [प्लीहायां]	१)	२)
वातगजांकुश [वातरोगे]	२)	८)
वातरक्तान्तक लौह (वातरक्ते)	३०)	
विसूची विध्वन्सन [विसूची]	५)	२०)
वीर्यस्तम्भनवटी [स्तम्भने]	४)	१८)

	१ तो०	५ तो०
श्वांसकुठार [श्वासे [	।।।)	३)
श्वासचिंतामणि [जीर्णश्वासे]	३०)	१४५)
शिरःशूलादिवज्र [शिरोरोगे]	१)	४)
शुक्रमातृकावटी [मेहे]	४)	
शूलगजकेशरी [उदरशूले]	२)	८)
सञ्जीवनीबटी [उदर रोगे]	।।।)	२)
सर्बांगसुन्दर [क्षयकासे]	३०)	१४५)
समीरगजकेशरी [वातरोगे]	४)	१८)
सिद्धप्राणेश्वर [ज्वरातिसारे]	१)	४)
सूतशेखर [अम्लपित्ते]	१५)	७०)
सूतिकाबिनोद [सूतिकारोग]	२)	५)
सौभाग्यवटी [ज्वरे]	२)	५)
संग्रहणीकपाट [ग्रहण्यां]	३४)	
स्वर्णभूपति [क्षये]	४०)	
हिंगुलेश्वर [ज्वरे]	२)	८)
हुतासनरस [अजीर्णे]	१)	४)
हंसपोटली [ग्रहण्यां]	२)	८)
हेमगर्भ	४०)	
त्रिपुरभैरव [ज्वरे]	१)	४)
त्रिभुवनकीर्ति ,,	२)	७)

पर्पटी

स्वर्णपर्पटी	३०)	
बिजयपर्पटी	३०)	
रसपर्पटी	२)	८)
पञ्चामृतपर्पटी	२)	८)
लोहपर्पटी	२)	८)
ताम्रपर्पटी	२)	८)
शुभ्रपर्पटी	१)	५)
बालपर्पटी	२)	८)

लोह मण्डूर

आमलक्यादि	५ तोला	४)
चन्दनादि लोह	,,	२॥)
प्रदरारि लौह	,,	५)
बिषमज्वरांतक लौह	,,	२०)
बिषमज्वरांतक पुटपक्व १ तो० २४)	,,	१२०)
पुनर्नवादिमण्डूर	५ तो०	२३)
पञ्चामृत लौह मण्डूर	,,	८)
तारामण्डूर	१ तोला	२)
त्रिफलामण्डूर	,,	२)
हंसमण्डूर	,,	२)
गुडूच्यादि लौह	,,	२)
त्रिफलादि लौह	,	२)

शास्त्रीय प्रचलित चूर्ण

अविपत्तिकर [भैष०]	५ तोला	१)
अश्वगन्धादि [शा०]	,,	१)
अग्निमुख [चक्र०]	,,	१)
जातीफलादि [च० शा०]	,,	१)
तालीसादि [शा०]	,,	२)
दाडिमाष्टक [शा०]	,,	१)
गंगाधर लघु [भै०]	,,	१।)
गंगाधर बृहत ,,	,,	१)
पुष्यानुग चूर्ण ,,	,,	१)
प्रदरान्त [चक्र]	,,	१)
महाखांडव चूर्ण [शा०]	,,	१)
नरसिंहचूर्ण [भै०]	,,	१)
लवणभास्करचूर्ण [चक्र]	,,	१)
लवंगादि चूर्ण ,,	,,	२)
सितापलादि चूर्ण	,,	२)
हिंग्वाष्टकचूर्ण	,,	२)
नारायणचूर्ण	,,	१)
बज्रक्षार चूर्ण	,,	२)

बर्तियां

	५ तो०	१ तो०
सुखावर्ति नेत्ररोगे	१।)	।–)
चंद्रोदयवर्ति	२)	॥)
दृष्टिप्रदाबर्ति	२)	॥)
त्रिफलादिवर्ति	२)	॥)

शास्त्रविधि सिद्ध अवलेह, पाक

	५ सेर	१ सेर	१ पाव
च्यवनप्राश [च०]	३२)	८)	२)
कूष्माण्डावलेह [योग०]	२०)	६)	२)
वासावलेह ,,	३०)	८)	२)

	५ सेर	१ सेर	१ पाव
अगस्तहरीतकी	३०)	८)	२)
मदनानन्द मोदक [भै०]	६०)	१६)	४)
सुपारी पाक ,,	३५)	८)	२)
सौभाग्य शुण्ठी ,,	३५)	७)	२)
मूसलीपाक [योग]	२५)	७)	२)
बाहुशाल गुड़ [शा०]	३०)	८)	२)

शास्त्रविधि सिद्ध घृत

अशोक घृत [भैष० प्रदरे]	१ सेर १६)	१ पाव ४)
जात्यादि घृत [चक्र० व्रणे]	१०)	३॥)
फल घृत [शा० योनिरोगे]	१६)	४)
ब्राह्मीघृत [चक्र० रसायने]	१६)	४)
महा त्रिफलादि घृत [च० नेत्रे]	१६	४)
नरसिंह रसायन [वा०]	१५)	४)
पञ्चतिक्त घृत गुग्गुल [रक्तदोषे]	२०)	४)

शास्त्रविधि सिद्ध तैल

अर्क पत्र तैल [च० कुष्ठे]	१ सेर [illegible])	१ पाव ४)
कासीसादि तैल [शा० अर्शसि]	१६)	४)
चन्दनादि तैल [यो० ज्वरे]	१६)	४)
नारायण तैल बृ० [च० वा[illegible]]	१६)	४)
माषतैल बृ० [च०]	१२)	३)
मिरचादि तैल [चक्र कुष्ठरोगे]	१६)	४)
लाक्षादि तैल [ज्वरे]	१६)	४)
षट् बिन्दु तैल [चक्र०]	[illegible]	४)
दार्व्यादि तैल [भैष०]	१६)	४)
बृ० शुष्कमूलादि तैल	१६)	४)

क्षार, सत्व, द्राव

वज्रक्षार चूर्ण	५ तो०	२)
अपामार्ग क्षार		२)
धामाक्षार	,,	२)
कटेलीक्षार		२)
कदल क्षार	,,	२)
चनाक्षार	५ तो०	२)
इमली क्षार	,,	२)
[illegible] ([illegible]) [illegible]	५ तो०	२)
आकक्षार	,,	२)
यवक्षार	,,	२)
तिलक्षार	,,	२)
शरपुंखाक्षार	,,	४)
गुडूची क्षार	२० तो०	२)

आसव अरिष्ट

	४ सेर	१ बो०
अशोकारिष्ट [भै०]	२५)	३)
अश्वगन्धारिष्ट [मूर्च्छायां]	३०)	५)
अभयारिष्ट [अर्शसि]	८)	३)
अमृतारिष्ट [ज्वरे]	२०)	३)
उशीरासव [illegible]	१६)	३)
कुमार्यासव [शा० [illegible]]	१८)	३)
कनकासव [भैष० हिक्कायां]	१८)	४)
चन्दनासव [शुक्रमेहे]	२०)	३)
द्राक्षारिष्ट [शा०] यक्ष्मणि	२०)	३)
दशमूलारिष्ट [शा० धातुक्षीण०]	२०)	४)
पर्पटारिष्ट [पांडुरोगे]	२०)	३)
पुनर्नवारिष्ट [शोथे यकृत]	३०)	३)
रोहितकारिष्ट [यकृतरोगे]	२०)	३)
लोहासव	२०)	३)
[illegible]रिष्ट [[illegible]] रक्तदोषे	२०)	३)
खदिरारिष्ट ,,	२०)	३)
सारस्वतारिष्ट स्वर्ण भ० रसायन	३५)	८)
,, ,, पत्र रहित	२५)	५)
[illegible]	५ सेर	१५)
[illegible]	,,	१५)
[illegible]	,,	१५)
[illegible]	,,	१५)
[illegible]	१ सेर	१२)

हमारे प्रकाशन विभाग द्वारा प्रकाशित आयुर्वेदीय एवं यूनानी पुस्तकों का

सूचीपत्र

राजयक्ष्मा

राजयक्ष्मा (तपेदिक) क्षीणज्वर, थाईसिस, कन्झम्पशन ट्यूबरक्यूलिसिस आदि नामों से सभी परिचय रखते हैं। यह कैसे असाधारण आहार विहारों की अवहेलना का फल मात्र है जिसके कारण को समझने के लिये हम अब भी तयार नहीं होते कितने दुख की बात है विद्वानों का कहना है कि जितने मनुष्य अन्य समस्त रोगों के कारण मरते हैं, इससे कहीं अधिक मनुष्य इस एक ही दुष्ट रोग से मरते हैं इस लिये यह निवन्ध लिखवाने का आदेश २१ वें ग्वालियर सम्मेलन की स्वागत कारिणी ने दिया था। उस पर बिगत कई वर्षों के अनुभव पूर्ण खोज से ओतप्रोत वैदिककाल से लेकर अब तक के इतिहास तथा चिकित्सा से सुसज्जित इस अनुपम ग्रंथ को आयुर्वेदोद्धारक प्रशस्त यशस्वी लेखक एवं विद्वान वैद्य पं० विश्वेश्वरदयालु द्विवेदी सम्पादक "माला" ने लिखा था जो समस्त आगत निवन्धों में से प्रथम श्रेणी का चुना गया था तथा लेखक महोदय को [illegible] दिया गया इस पुस्तक का मू० [illegible] ।।) ही है।

अर्श रोग चिकित्सा

यह अपने ढंग की उत्तम है, इसमें दोनों प्रकार की बवासीर रोग की उत्पत्ति निदान समेत अनुभूत चिकित्सा [illegible] सरल भाषा में दर्शाई गई है। इसके प्रयोग बड़े उत्तम है। कई वैद्यों के अनुभवों से पूर्ण है। मू० १)

नि० भा० २२ वें वैद्यसम्मेलन बीकानेर पर

—: लिखित :—

यकृत प्लीहा रोग

यह पुस्तक भी अपने ढंग की अपूर्व ही है। यकृत प्लीहा क्या है और इसका स्थान कहां है, तथा किन २ कारणों से बढ़कर कौन २ रोग पैदा होते हैं एवम् उनका क्या २ चिकित्सायें है यूनानी, एलोपैथी, और आयुर्वेदीय सिद्धान्तों के मतभेदपर मार्मिक तुलनात्मक विवेचन जो आजतक अन्यत्र कहीं भी देखने को न मिला होगा उससे परिपूर्ण है इसकी प्रशंसा देखने पर ही विदित होगी अस्तु एक बार अवश्य मंगाकर के मनन कीजिये वैद्यों तथा गृहस्थों के लिये यह अभूतपूर्व है। मू० ।।)

नि० भा० १७ वें वैद्य-सम्मेलन पटना से अनेक प्रशंसा-पत्र व रौप्य पदक प्राप्त

मधुमेह

मधुमेह (डायाबटीज) का विस्तृत और खोज पूर्ण विवेचन चिकित्सा-जगत के प्रसिद्ध स्वर्गीय पंडित परशुराम जी शास्त्री की अनुपम खोज व ज्ञातव्य विषयों से यह भरा हुआ निवंध है। वैद्य वर्ग इसके कारण से बिलकुल अनभिज्ञ हैं इसी कारण वह इसकी चिकित्सा में सफल नहीं होते यह समझते हुये लाक्षणिक चिकित्सा का कितना सुन्दर चित्रण किया गया है जिसे देखते ही आप गुणानुवाद गाने लगेंगे। मू० १)

सिद्धप्रयोग

[दो भाग]

ग्राहकों एवं अनुग्राहकों की उत्कट अभिलाषा एवं निरंतर पत्र आने के परिणाम स्वरूप इसे पुस्तक रूप में परिणित किया गया इस पुस्तक में वही शतशोनुभूत प्रयोग दिये गये हैं जो १० बर्ष में माला में निकले थे और जिनकी कई बार परीक्षा भी हो चुकी थी। श्लोकबद्ध मणियों के रूप में यह भाषा टीका सहित प्रकाशित की गई है। इसके वैद्योपयोगी होनेका सिर्फ यही ज्वलंत प्रमाण हैकि प्रति बर्ष हमें इसका नवीन संस्करण छपवाने को विवश होना पड़ता है। अत: बहुत थोड़ी प्रतियां ही शेष हैं शीघ्र मँगवाकर देखिये। मू० भी दोनों भागों का १।।) रखा है।

श्वास रोग चिकित्सा

लोगों का कहना है कि–"दमा" दम के साथ ही जाता है, यह उनकी भूल है। बर्तमान समय में यह दुष्ट रोग ऐसा बढ़ रहा है कि दांतों तले अंगुली दवानी पड़ती है। इस पुस्तक में श्वास 'दमा' के सम्पूर्ण लक्षण तथा उनकी चिकित्सा सविस्तार वर्णित है। प्रयोग वही दिये गये हैं जो शतप्रतिशत अनुभूत हैं। जिसको प्रत्येक मनुष्य आसानी से बना सकता है। मू० ६ आना।

हल्दी

हल्दी प्रतिदिन की परिचित और दाल शाक में काम आने बाली बस्तु है, परन्तु इसमें कितने गुण हैं ? यह बात सर्व साधारण को मालूम नहीं इसी कारण से इस पुस्तक की रचनाकी गई है। इसमें शास्त्रीय प्रयोगों का संग्रह है। प्रत्येक गृहस्थ के देखने योग्य है। मू० १)

कर्त्तव्य-शिक्षण

[हिन्दू लां]

राजा-प्रजा, पति-पत्नी, भाई-बहिन, स्वामी-सेवक, माता-पिता पुत्र के प्रति तथा पुत्र का माता-पिता के प्रति कर्तव्य पालन का बिशद बर्णन किया गया है अपने २ कर्तव्यों का पालन करने से मनुष्य कैसे सुख एवं शान्ति प्राप्त कर सकता है ? इस समय क्रांति क्यों मची है ? वह कैसे दूर की जा सकती है पढ़कर शांति स्थापन करने में सहायक बनिये और स्वत: शांति स्थापित कीजिये। यह पुस्तक अपने ढंगकी अद्वितीय है। जो प्रत्येक मनुष्य कहलाने वाले के लिये पठनीय है। मू० १)

कोकसार

यह पुस्तक ५०० बर्ष की प्राचीन हस्तलिखित ग्रंथ के आधार पर लिखी गई है इसकी शानी का कोई भी कोकसार आज दिन तक नहीं निकला, ८४ आसन, स्त्री बशीकरण, स्तन, इन्द्री बर्द्धक, योनि सङ्कोचन योग एवं मन्त्र तन्त्र अनुभूत लिखे गये हैं। पुस्तक की लेखन शैली अत्यन्त ही रोचक है कविराज घनानंद और तोष कवि के उद्गार हैं। मू० १)

दीर्घ-जीवन

"माला" सम्पादक द्वारा लिखित हजारों प्रशंसापत्र प्राप्त अपने ढंगकी निराली पुस्तक है। गृहस्थ जीवन की ऐसी पुस्तक आज तक नहीं निकली। दीर्घ जीवन प्राप्ति के लिये प्रात: से सायं तक के कर्तव्य बर्णित हैं। इसमें १०१ बिषयों का समावेश किया किया गया है। मू० १)

करावादीन सिफाई

प्रसिद्ध-प्रसिद्ध यूनानी योगों का संग्रह है २)

नमक

नमक पर शास्त्रीय और अनुभूत प्रयोगों का बहुत बड़ा संग्रह है, घर में रखने योग्य पुस्तक है सैकड़ों बिचित्र योग देखिये। मू० ।|≈)

फिटकरी

यह कितने उपयोग में आती है। इसको देख आप दंग रह जांयगे और सैकड़ों बिचित्र प्रयोग आपको मालूम होंगे मू० ।≈)

बबूल

बबूल के गुणों के संग्रह को देखकर ही आप हैरान हो जावेंगे और हजारों रुपये के कामत के योग आपको मिलेंगे। मू० ।≈)

पेटेन्ट औषधें और भारतबर्ष [दो भाग]

पुस्तक नाम से ही स्पष्ट है कि पुस्तक कैसी है प्रथम भाग तथा द्वितीय भाग में भारतवष एवं बिदेशीय सभी पेटेन्ट औषधियों का भण्डाफोड़ किया गया है जिन्हें जानने के लिये लोग लालायित थे, वही रोगन बिजली, अमृताञ्जन, पान बिलास, सुधासिन्धु, अमृतधारा, नमक सुलेमानी अपूर्व ताकत की दवा, बालामृत आदि सभी प्रसिद्ध २ पेटेंट औषधियों के बनाने की बिधियां समझाई गई हैं। पेटेन्ट कर्ता १ आनाकी चीजके १) लेते हैं और मनमाना दाम ऐंठकर लखपती होगये हैं यदि आप भी लाभ उठाना चाहते हैं तो आज ही एक आर्डर डालकर मँगा देखिये। १।।)

हनुमन्नाटक

वैद्यराज की लेखनी से लिखा संस्कृत का बहुत उत्तम नाटक है, हृदयस्पर्शी संस्कृत प्रेमियों के देखने योग्य है। मू० २)

मुकुन्दलीलामृत नाटक

सम्पादक की कलम से लिखा यह संस्कृत नाटक बड़ा ही हृदय स्पर्शी हुआ है, इसके जोड़ का सुन्दर नाटक मिलना कठिन है नाटक से प्रेम रखने वाले बिद्वानों को एक बार अवश्य देखना चाहिये इसे देख आप एक बार अद्भुत २ न कह उठें तो दाम बापिस देंगे। मू० २)

एक दिन में ज्योतिषी [दो भाग]

ज्योतिष जैसे शास्त्र में प्रवेश करके अपने भाग्य का हाल जानने के लिये इससे सुन्दर पुस्तक मिलना कठिन है। नवीन ढंग की रचना उत्तम २ योगों का बर्णन बड़ा बिचित्र है। देखने पर बिशेषता मालूम होगी, ज्योतिष का पंडित बना देता है दोनों भागों का दाम २)

बादिखण्ड ऋद्धिखण्ड

रसरत्नाकरान्तर्गत यह पांचवां खण्ड है अब तक दुष्प्राप्य था बड़े परिश्रम से उपलब्ध कर छपा है। रसायन (कीमियागरी) के शौकीनों को इस प्राचीन संग्रहसे लाभ उठाना चाहिये ३)

सांख्यतत्व कौमुदी दीपिका

यह सांख्य शास्त्रका ग्रंथ है आयुर्वेद के पाठ्य कोर्स में है इसकी हिंदी टीका संस्कृत टीका के साथ देकर बिद्यार्थियों के समझने योग्य बना दिया गया है। मू० ३)

पाकावली

पाकों का बर्णन इसमें है बहुत प्राचीन प्रति की नकल कर छपाया गया है। मू० ।।)

बगला बिधानम्

इसमें बगला मुखी देवी का बिधान सरल रीति से किया गया है। मू० ।)

स्नान चिकित्सा

पुस्तक का नाम ही स्वयं इसकी उपादेयता का द्योतक है, पुस्तक की विषयसूची को ही पढ़ कर देखिये उसमें पांचभौतिक चिकित्सा जलस्नान मृत्तस्नान, वायुस्नान, ज्योतिस्नान, चंद्रस्नान सूर्य स्नान अर्थात् समस्त स्नानों से ही चोटी से एड़ी तक के समस्त रोगों पर सरल अनुभूत उपाय लिखे गये हैं जिसको पढ़कर साधारण मनुष्यभी लाभ उठा सकते हैं। डाक्टरों वैद्यों और हकीमों को जेब में जो फीस के हजारों रुपये प्रति वर्ष जाते हैं उनको बचाकर यश व धन प्राप्त कर सकते हैं। पुस्तक बहुत कम शेष हैं अत: शीघ्रता करिये वर्ना पुन: संस्करण के लिये बहुत दिन इन्तजार करना पड़ेगा। मू० आठ आना।

वैद्यक शब्द कोष

अकारादि क्रम से संस्कृत औषधियों के नाम हिन्दी भाषा में वर्णित किये गये हैं। पुस्तक बड़ी ही सुन्दर और उपयोगी है, इससे वैद्य समाज को प्रत्येक औषधि के नाम हिन्दी भाषामें जानने में सहायता मिलेगी इतनी उपयोगी होने पर भी मू० केवल।) ही है।

व्रणोपचार पद्धति

इस पुस्तक में समस्त प्रकार के घावों का ही इलाज वर्णितहै, जैसे बिद्रधि, जहरबाद नहरुवा अग्नि से जलना, चोट लगने का घाव, गलगंड गंडमाला, भगंदर ग्रंथि, अर्बुद, पामा रोग आदि २ रोगों की सरल चिकित्सा लिखी है। वैद्य इसी विषय में डाक्टरों से हार खाते हैं वह पूर्ण क दिया गया है। पुस्तकका दूसरा संस्करण छपचुका है मू० ॥)

स्त्रीरोग चिकित्सा

स्त्री जाति स्वभाव से ही अत्यन्त कोमल है, यदि असमय में ही उस पर कोई आपत्ति (रोग) आ जाय तो क्या हो, इसी पर यह पुस्तक लिखी गई है जिसमें श्वेत प्रदर, रक्तप्रदर, मासिकधर्म प्रसूतरोग, बालचिकित्सा आदि की सम्पूर्ण विकृतियां कैसे पैदा होती हैं तथा उनसे बचने और दूर करनेके क्या उपाय हैं ? व अन्य चिकित्साएं भी सबिस्तार वर्णित हैं हमारा ध्येय है कि यह पुस्तक प्रत्येक गृहस्थके घर रहे ताकि वह अपना जीवन सुखमय बनाकर ही रहे इसी कारण रियायती मू० १) रखा है।

प्लीहा रोग चिकित्सा

प्लीहा रोग कितना कष्टसाध्य तथा भयंकर है इसका अनुभव वही कर सकते हैं जो इस दुष्ट रोग के चक्कर में पड़ चुके हों अथवा पड़े हों, इस पुस्तकमें इस नरकगामी रोग पर ऐसे-ऐसे उत्तम व सरल योग लिखे गये हैं जो लेखक के स्वत: अनुभूत हैं। अधिक प्रशंसा पुस्तक देखने पर ही मालूम होगा। मू० ।≈)

सिद्धौषध प्रकाश

आर्डरों की अधिक भरमार के कारण ही ५ वां संस्करण भी प्राय: समाप्त होने को है अत तुरन्त आर्डर देना ही इसके जल्द प्राप्त करने का उपाय है, वर्ना तृतीय संस्करण बहुत बिलम्ब के पश्चात् देने में समर्थ होंगे इस पुस्तक में शरीर के सभी अवयवों के रोगों के कारण निदान तथा उनकी चिकित्सा बड़े सुन्दर ढंग से समझाई गई हैं, इस पुस्तक में सैकड़ों प्रयोग हैं जो पंजाबी चिकित्सा के अनुभूत हैं, पुस्तक वैद्य समाज के लिये रत्न सदृश है। मू० २)

अण्ड तथा अन्त्रवृद्धि चिकित्सा

प्रस्तुत पुस्तक का विषय नाम से ही स्पष्ट है, और सहज से ही अनुमान लगाया जा सकता है कि इन रोगियों का जीवन कितना नीरस और फीका मालूम होता है। यही सोचकर यह पुस्तक प्रकाशित की गई है। पुस्तक में सविस्तार रोगों का पूर्ण विवरण तथा निदान समेत अनुभूत चिकित्सा लिखी गई। मू० ६ आना।

विन्ध्य महात्म्य

इसमें विन्ध्यवासिनी देवी की उत्पत्ति तथा महिमा कार्य कुशलता, साक्षात् दर्शन के उपाय विन्ध्यक्षेत्र की उत्कृष्टता, महापापों के नाश के उपाय आदि २ सुन्दर भाषा टीका में वर्णित है। पुस्तक देखते ही बनती है, ३३६ पृष्ठ का वृहत्ग्रंथ का केवल मात्र ३)

भारतीय रसायनशास्त्र

करांची वैद्य-सम्मेलन की आज्ञानसार लिखित

इस पुस्तक में सोना चांदी आदि बनाने की अनेकानेक विधियां, शास्त्रों में प्रतिपादित सभी विषयों का संग्रह बड़े परिश्रम से किया गया है। प्रत्येक वैद्यको इससे अवश्य लाभ उठाना चाहिये पुस्तक बहुत ही उत्तम है, भाषा टीकायुक्त है ।।)

चिकित्सक व्यवहार विज्ञान

प्राय: ऐसा देखा गया है कि बड़े २ सुयोग्य वैद्य भी चिकित्सा सम्बन्धी व्यवहार न जाननेके कारण कभी २ संकटों में पड़ जाते हैं। इसी कारण से हमने सर्व साधारण के लाभार्थ इसे प्रकाशित किया है। वैद्य बन्धुओं को चिकित्सा प्रारम्भ से पहले इसे पढ़ना जरूरी है। मू० ।।)

औषधि-विज्ञान

[दो भाग]

यह पुस्तक आयुर्वेद के विद्यार्थियों एवं वैद्यों के लिये अत्यन्त उपयोगी है। इस पुस्तक में औषधि निर्माण सम्बन्धी प्रक्रियाएं औषधियों के गुणधर्म प्रभाव इत्यादि एवं दीपक रेचक, ग्राही शीत तथा पित्तहर द्रव्यों का पूरा २ स्पष्टरूपेण दिग्दर्शन कराया है। अमुक रोग में अमुक औषधि ही क्यों ? एवं उसका पूरा २ विधान आदि सविस्तार से वर्णित है पुस्तक अत्यन्त उपादेय है, मू० दोनों भागों का ४)

औषधि गुणधर्म-विवेचन

[दो भाग]

इस पुस्तक की उपादेयताके विषयमें लिखना ही व्यर्थ है। इस पुस्तक में समस्त धातुज औषधियों के विषय को लेखक ने भलीभांति दर्शाया हैकि आजकल प्रायः सभी वैद्य अन्ध-परम्पराछन्न होकर चिकित्सा कर रहे हैं। रोगों के कारण का पता तथा उनकी उत्पत्ति कहां-कहां और कौन २ से बिगाड़ होने से वह वेदना पैदा हुई तथा अमुक स्थान की विकृति किस दवासे ठीक होगी आदि सुन्दर समधुर सरल भाषा में वर्णित है। प्रत्येक वैद्य के पास रहना नितान्त आवश्यक है, मू० प्रथम भाग १) द्वितीय भाग १)

हरिधारित ग्रन्थ-रत्न

पुस्तक क्याहै गागर में सागर वाली कहावत को लेखक ने बिलकुल चरितार्थ कर दिया है। सम्पूर्ण रोगोंपर अल्पमूल्य के चमत्कारिक योगों का संग्रह है जो सुन्दर भाषा टीका में वर्णित है। इसका मू० ६ आना।

रसरत्नाकर

पवि कविकृत रसायनसिद्ध सेदपहाड कृति का अनुवाद है सरल हिंदी पद्यमय लोहसिद्ध, देहसिद्ध योगों से युक्त अभूतपूर्व पुस्तक है। मू० १)

सरलरोग विज्ञान

तीनों पैथियों के ढंग से रोग निदान का ऐसा उत्तम विवेचन है कि एक वार देखने से फिर रोग पहचान में भूल न होगी स्थान भेद से रोगो का वर्णन है २२×२६ साइज के करीब ५०० पृष्ठ का दाम ५)

यूनानी शब्द कोष

उर्दू और फारसी नामों का हिन्दी में उत्तम वर्णन है। यूनानी नामों और ग्रंथगत परिभाषा बताने वाला है मू० ।≈)

शिफाउल अमराज

[दो भाग]

इस पुस्तक में यूनानी साहित्य का निचोड़ सरल हिन्दी भाषा में किया गया है । यूनानियों ने हमारे साहित्य का निचोड़ लेकर अपनी भाषा में गढ़कर आपने साहित्य को सर्वाङ्गपूर्ण वना लिया और अपना यह दोष मिटाने के लिये कि (हमने किसी भी भाषाका साहित्य नहीं लिया) जिनग्रंथों से लिया ऊनका नामोनिशान सदा के लिये मिटा दिया। ऐसी दशा में अव जरूरत है कि हम अपना साहित्य पूर्णकर सर्वज्ञ वने तो इधर, उधर के साहित्य से संग्रह करना पड़ेगा, जब आप इसको एक बार पढ़ें गे तो आपको आश्चर्य होगा कि हम वास्तविक में भूल में थे। इससे हमें वहुत कुछ शिक्षा प्राप्त हो सकती है। आयुर्वेद के सर्वज्ञवनने की इच्छा हो, तो इस ग्रन्थ का अध्ययन अनिवार्य होगा। आप निदान और लाजवाव योगो को देख बाग वाग हो उठेंगे दाम प्रथम भाग का २) द्वितीय भाग का २)

मखजन उल् मुफरदात

यूनानी द्रव्यों का गुणधर्म (निघण्टु) इसमें है वैद्यों के बड़े काम की वस्तु है। मू० २)

करावादोनकादरी

रोग भेद से यूनानी योगों का सबसे बड़ा संग्रह है वैद्यों के देखने योग्य है। मू० ४ भाग ८) प्रयेत्क भाग का २)

सामुद्रिक शास्त्र

हाथ देखकर अपने भाग्य को जानिये और अपने घर बालों के देख सन्तोष करिये या रुपया पैदा कीजिये। ४ आना।

गायत्री पुरश्चरण

गायत्री जप कैसे सफल होकर यश, कीर्ति देता है इसे पढ़कर जानिये ब्राह्मणों को अवश्य देखना चाहिये। दाम ।।)

दत्तात्रेयतन्त्र

प्रति दिन के काम आने बाले तांत्रिक प्रयोग इसमें है, प्रत्येक घर में प्रतिदिन उपयोग में आने बाली वस्तु है। मू० १)

प्रत्यङ्गिरा

यह दुर्लभ अप्राप्य वैदिक प्रत्यङ्गिरा है प्रत्येक ब्राह्मण का महान अस्त्र है। धन, प्राण रक्षण में अमोघास्त्र है। मू० ।)

सिद्ध विश्वेश्वर तन्त्र

कलियुग में मंत्र क्यों सिद्ध नहीं, कौन कौन मन्त्र सिद्ध है तन्त्र साहित्य का मर्म भी इससे आपके सामने होगा और अन्य मन्त्रशास्त्र के देखने की इच्छा न होगी। की० २)

एक दिन में कवी

– बेता उस शब्द का नाम है, जो हृदय पर
करे, मनुष्य क्या देवताओं को भी द्रवित
यही हेतु है कि हमारी प्रार्थना ये वेद काल
तक किसी न किसी कविता में ही देखी
हैं। जो मनुष्य लाखों रुपयों से अपना हट
छोड़ता, वह एक साधारण कविता के बल
दांव के लिये अपने हट को छोड़ बैठता है।
एक ही नहीं सैकड़ों प्रमाण इतिहास में
ी इसलिये कहा जा सकता है कि कविता
कर्षण या वशीकरण मन्त्रहै। ऐसी अमूल्य
कविता को पाने की कौन मनुष्य होगा जो
न करे, हमने बड़े अध्ययन के बाद ऐसी
विधि निकाली हैकि साधारण से साधारण
पढ़ा लिखा मनुष्य एक दिन में ही कविता
द रचना) करने लगता है इसके ऐसे
तैयार कर दिये हैं कि नकशों द्वारा उनमें
ही शब्द भरकर इच्छित छन्द तयार कर
हैं, छन्द रचना वालों का नाम अमर हो
है, स्वभाव मृदु हो जाता है, सरलता आ
है शब्द ज्ञान बढ़ जाता है, बुद्धि सूक्ष्म
श्य वस्तुओं में प्रवेश करने वाली) होजाती
र आनन्द की प्राप्ति होने लगती है। प्रत्येक
ससे लाभ उठाना चाहिये। मू० ।)

वैद्यबांधव

ाद कवि वर केशवदास के द्वारा प्रणीत
न्न अलभ्य अनुभूतयोगों से सुसज्जित है १)

कुंजिका

प्तसती प्रयोग सफल होने की यही कुञ्जी है
क भगवती के भक्त को देखना चाहिये मू० ।)

तिर्यक सम्भ्रम

सर्पदंश की चिकित्सा और मंत्र तंत्रोंसे परि-
पुस्तक है। सांपों के भेद उनके १०० चित्रों
क बड़ी मार्मिक पुस्तक है। मू० १)

आयुर्वेदीय विश्व-कोष

[तीन भाग]

निखिल भारतीय वैद्य-सम्मेलन के प्रस्ताव के अनसार आकारादि क्रम से आर्वेदीय यूनानी तथा एलोपैथिक चिकित्सात्रय के निदान, चिकित्सा निघण्टु (बनौषधि निघण्टु) शरीर एवं रसायन शास्त्र पर वेदकाल से लेकर आज तक की समस्त तहकीकातों पर बिस्तृत प्रकाश डालने वाले इस ग्रंथ को देख कर अन्य ग्रंथों के देखने की इच्छा ही न रहेगी। इसकी उपयोगिता पर निखिल भारतवर्षीय वैद्य-सम्मेलन नागपुर से फर्स्टक्लास का सार्टीफिकेट तथा स्वर्णपदक भी मिल चुकाहै एक बार देखकर इसकी उपयोगिता से लाभ उठाइये। ग्रंथ अत्यन्त सुन्दर और देखने योग्य है। प्रत्येक वैद्य, डाक्टर, हकीम तथा गृहस्थों के लिये अभूतपूर्व है। आयुर्वेदीय क्षेत्रमें इससे उत्तम कोष अब तक प्रकाशित नहीं हुआ, कागज के अभाव के कारण अब ऐसे ग्रंथों का प्रकाशित होना नितांत असम्भव है। यदि किसी ने प्रकाशित किया भी तो कीमत ३०-३० रुपया प्रति खंड के कम न होगी। परन्तु हम उसी सस्ती कीमत पर ही दे रहे हैं। अतः इस सुअवसर से अवश्य लाभ उठाइये। आकार २२×२६= पेजी पृष्ठ ८०० कीमत प्रथम भाग २५). अप्राप्य द्वितीय भाग १५) तृतीय भाग १५) ही रखा है।

सचित्र इञ्जेक्शन विज्ञान

इञ्जेक्शनों के लिये वैद्य तरस रहे हैं उन्हीं के हितार्थ यह इञ्जेक्शन देने की विधियों को बताने वाला बहुत सुन्दर ढंगसे समझाने वाला अपूर्व ग्रन्थ है, ८० चित्रों युक्त है मू० ३) द्वितीय भाग इञ्जेक्शन बनानेका विधान बताने वाली मेटेरिया मेडिका है मू० ३)

राजनैतिक कृष्ण

इस हिंदी नाटक में श्रीकृष्णचंद्र की राजनैतिकता पद-पद पर दिखाई गई है। मू० १।।)

जीर्ण-शीर्ण रोगियों पर जादू समान असर दिखाने वाली

जीवनबिन्दु

यह दवा केवल उन बृद्धों व नौजबान युवकों के लिये बस्तुत: अमृत है जिनके शरीर मुखमण्डल पर दुर्वलता से झुरियां पड़ गई हों, जिनके हृदय में जीवन की कोई उमंग उल्लास शेष न रही हो किन्तु रंगीन जमानी की रस भरी कहानी को दुहराने कीकामना बीती हुई सुखद घड़ियों को बापिस लाने की तमन्ना अन्दर ही अन्दर मचल रही हो तव जीवन की बूंदें इस कामना को पूर्ण कर सकती है। दुर्वलता के स्थान में सबलता, निराशा की जगह शुभाशा, सुस्ती की जगह स्फूर्ति बुढ़ापे को जवानी में बदलना जब शरीर सूख कर अस्थि मात्र शेष रह गया हो तव यह दवा सूखे शरीर को हरा भरा मांसल बनाता है। जब वृद्धावस्था में अधिक दौर्वल्य के कारण पुन्सत्व शक्ति का विचार ही मिट चुका हो उस समय इसका सेवनप्रभात कालीन सूर्यरश्मिके समान सिद्ध होगा। क्योंकि गई हुई पुन्सत्व शक्ति अंगड़ाइयां लेकर जागृत हो उठती है। इसका सेवन पाचन शक्ति में जादू फूंक देता है। जिससे सेरों दूध, छटांकों मक्खन हजम होने लगता है। नवीन रक्त इतनी अधिक मात्रा में उत्पन्न होताहै कि ठूठ शरीरमें युवावस्था की लालिमा झलकने लगती है। मुख गुलाब सा खिल उठता है। ५) तो० ५-५ बूंद दूध में डाल पियें

श्वास रोग की अनुभूत औषधि

श्वासान्तक-द्रव

यह "श्वासान्तक-द्रव" ५-५ बूंद पी जाती है। यह स्वादिष्ट होते हुये भी जादू जैसा असर दिखलाती है श्वास खांसी सदा को दूर हो जातीहै। कफ निकाल कर फेफड़ा साफ कर देती है। नस नस में विजली जैसी ताकत पैदा करके नवीन जोश पैदा कर देती है भूख खूब लगती है, खाना खूब हजम करती दूध, घी खूब सेवन कर सकते हैं, सर्दियों में नरक यातना सहने वाले इस दवा का सेवन कर कष्ट से मुक्ति पालें। मूल्य १ तोला ४) नमूनार्थ ३ मा० १।) डाक व्यय अलग १ दर्जन लेने बालों से डाक व्यय माफ।

वैद्यराज के प्रबन्ध से श्री हरिहर प्रेस बरालोकपुर (इटावा) में मुद्रित

